प्रेम और सम्मोहन

परमगुरू
ओशो के
श्री चरणों
में अर्पित

स्वामी शैलेन्द्र सरस्वती

ओशो फ्रैगरैंस

श्री रजनीश ध्यान मंदिर
कुमाशपुर–दीपालपुर रोड
जिलाः सोनीपत, हरियाणा
131021

contact@oshofragrance.org
www.oshofragrance.org

Rajneeshfragrance

+91-7988229565
+91-7988969660
+91-7015800931

1

प्रेम और सम्मोहन

एक मित्र ने प्रश्न पूछा है कि प्रेम में लोग सम्मोहित होकर दीवाने हो जाते हैं, यह तो सुना था; किंतु सम्मोहन से प्रेम उत्पन्न हो सकता है, ऐसा कभी सोचा न था। आप इन दोनों की चर्चा यहां इकट्ठी कर रहे हैं, इसका क्या राज है?

सर्वप्रथम तो यह समझ लो कि प्रेम क्या है, सम्मोहन क्या है? और जिसे सामान्यतः हम प्रेम कहते हैं, उसमें और वास्तविक प्रेम में अंतर क्या है? फिर आगे की बात ख्याल में आ सकेगी। संत कबीर के एक दोहे से चर्चा आरंभ करना चाहूंगा जिसका भावार्थ सरल भाषा में कुछ इस प्रकार है–

जग में सब जलते देखे, राग–द्वेष की आग।
कोई शीतल ना मिला, जिससे रहिये लाग।।

निश्चय ही दुश्मनी अग्नि–तुल्य है, जिसमें हम जलते–भुनते हैं। परंतु दुनिया जिसे प्रेम कहती है, वह राग भी आग ही है। यदि जिंदगी भर का हिसाब लगाओ तो शत्रुओं द्वारा दिए कष्टों की तुलना में प्रियजनों से प्राप्त तकलीफें कई गुणा ज्यादा निकलेंगी। प्रेम में मिश्रित प्रेम–विरोधी तत्त्व हैं– मोह, ईर्ष्या, जलन, मालकियत, भावनात्मक शोषण, सूक्ष्म हिंसा, अंततः क्रोध, प्रतिशोध। नेपाली भाषा में 'प्रेम' को 'माया' कहते हैं– अर्थात् भ्रांति, झूठ, सपना, इल्यूज़न, हैल्यूसिनेशन। हमारी राग–द्वेष युक्त जीवन–कथा का निष्कर्ष ऐसा है–

हमने जग की अजब तस्वीर देखी, इक हँसता है, दस रोते हैं।
ये प्रभु की अद्‌भुत जागीर देखी, इक हँसता है, दस रोते हैं।

हमें हँसते मुखड़े चार मिले, दुखियारे चेहरे हज़ार मिले।
यहाँ सुख से सौ गुनी पीर देखी, इक हँसता है, दस रोते हैं।
दो–एक सुखी यहाँ लाखों में, आंसू हैं करोड़ों आँखों में।
हमने गिन–गिन हर तकदीर देखी, इक हँसता है, दस रोते हैं।
कुछ बोल प्रभु ये क्या माया! तेरा खेल समझ में ना आया।
हमने देखे महल और कुटीर देखी, इक हँसता है, दस रोते हैं।

गीतकार कटु यथार्थ को कुछ कम करके बता रहा है– दस में इक हंसता है! परमानंद को प्राप्त व्यक्ति लाखों में एक मिलना भी मुश्किल है। प्रख्यात शायर 'दाग' ने फरमाया है–

गैर को मुंह लगा के देख लिया,
झूठ–सच आजमा के देख लिया।
दिल के कहने में आके देख लिया,
उनके घर 'दाग' जाके देख लिया।
जाओ भी क्या करोगे मेहरो–वफा,
बारहा आज़मा के देख लिया।
है इधर आईना, उधर दिल है,
जिसको चाहा उठा के देख लिया।
'दाग' ने खूब आशिकी का मज़ा,
जलके देखा जलाके देख लिया।

आशिकी में मज़ा कम, सज़ा ज्यादा है। आशा में सुख है, अनुभव में दुख है। क्या इसमें प्रेम का दोष है? नहीं, प्रेम तो अमृत है। किंतु उसमें अहंकार रूपी ज़हर मिल जाने से सब विषैला हो जाता है। प्रकृति ने प्रेम के संग गहन सम्मोहन जोड़ा है– एक प्रकार की मूर्च्छा। उस नशे में, मदहोशी में, भावावेश में भटकना सुनिश्चित है। इस पुस्तक में वे प्रवचन संकलित हैं जिसमें साधक–साधिकाओं को मार्गदर्शन दिया है कि प्रेम शुद्ध कैसे हो। बड़ी गहरी समझ और जागृति की जरूरत है। साधना में निष्ठा, लगन एवं धैर्य भी अनिवार्य है।

परिवार, समाज, शिक्षा और जगत की विभिन्न परिस्थितियों ने हमारे मन को नकारात्मक ढंग से सम्मोहित कर दिया है। चिंता, तनाव, विषाद, निराशा आदि उसके परिणाम हैं। 'सेल्फ–हिप्नोसिस' यानी 'स्व–सम्मोहन' की कला सीखकर हम इन दुखद संस्कारों से मुक्त हो सकते हैं तथा नए सकारात्मक बीज अपने अवचेतन मन में बो सकते हैं। शीघ्र ही उनके शांतिदायी, प्रेमपूर्ण, आनंद से ओत–प्रोत, रसीले फलों से जीवन रूपी वृक्ष लद जाएगा। प्रसन्न व्यक्ति ही प्रेममय हो सकता है। दुखी इंसान केवल दुख ही दे सकता है। हम वही तो बांट सकते हैं, जो हमारे पास है। इसलिए इन दो पृथक दिखने वाले विषयों को इस किताब में एक साथ लिया है।

प्रेम भावना से जुड़ी नैगेटिव हिप्नोसिस को तो सब जानते हैं। सेल्फ–सजेशन, आत्म–सुझाव के द्वारा नई जीवन–शैली जन्माई जा सकती है। पॉजिटिव हिप्नोसिस से आनंद–सुमन खिलेंगे और उनकी सुगंध प्रेम बनकर फैलेगी। इस पुस्तक में प्रायः 'सम्मोहन'

शब्द का प्रयोग ऐसे ही सकारात्मक अर्थ में किया गया है। वास्तव में तो इसे 'डि-हिप्नोसिस' या 'असम्मोहन' या 'प्रति-सम्मोहन' कहना चाहिए, किंतु तब भाषा कठिन प्रतीत होने लगेगी। निवेदन है कि ये प्रवचन और प्रश्नोत्तर पढ़कर, अपना बौद्धिक ज्ञान मात्र नहीं बढ़ाना; बल्कि समझना, मनन करना, प्रयोग करना और तदानुसार विवेकपूर्वक जीना आरंभ कर देना।

सारी मनुष्यता के मन में बड़ी गहरी कंडीशनिंग है कि सेक्स ही प्रेम है। इस हिप्नोसिस के खिलाफ, 'ध्यान सूत्र' नामक प्रवचनमाला में परमगुरु ओशो कहते हैं- 'आप जानकर हैरान होंगे, प्रेम और काम, प्रेम और सेक्स विरोधी चीजें हैं। जितना प्रेम विकसित होता है, सेक्स क्षीण हो जाता है। और जितना प्रेम कम होता है, उतना सेक्स ज्यादा हो जाता है। जिस आदमी में जितना ज्यादा प्रेम होगा, उतना उसमें सेक्स विलीन हो जाएगा। अगर आप परिपूर्ण प्रेम से भर जाएंगे, आपके भीतर सेक्स जैसी कोई चीज नहीं रह जाएगी। और अगर आपके भीतर कोई प्रेम नहीं है, तो आपके भीतर सब सेक्स है।

सेक्स की जो शक्ति है, उसका परिवर्तन प्रेम में होता है। इसलिए अगर सेक्स से मुक्त होना है, तो सेक्स को दबाने से कुछ भी न होगा। उसे दबाकर कोई पागल हो सकता है। और दुनिया में जितने पागल हैं, उसमें से सौ में से नब्बे संख्या उन लोगों की है जिन्होंने सेक्स की शक्ति को दबाने की कोशिश की है। और यह भी शायद आपको पता होगा कि सभ्यता जितनी विकसित होती है, उतने पागल बढ़ते जाते हैं। क्योंकि सभ्यता सबसे ज्यादा दमन सेक्स का करवाती है, और इसलिए हर आदमी अपने सेक्स को दबाता है, सिकोड़ता है। वह दबा हुआ सेक्स विक्षिप्तता पैदा करता है, अनेक बीमारियां पैदा करता है, अनेक मानसिक रोग पैदा करता है।

सेक्स को दबाने की जो भी चेष्टा है, वह पागलपन है। कोई कारण नहीं है सिवाय इसके कि वे सेक्स को दबाने में लगे हुए हैं। और उनको पता नहीं है कि सेक्स को दबाया नहीं जा सकता। प्रेम के द्वार खोलें, तो जो शक्ति सेक्स के मार्ग से बहती थी, वह प्रेम के प्रकाश में परिणत हो जाएगी। जो सेक्स की लपटें मालूम होती थीं, वे प्रेम का प्रकाश बन जाएंगी। प्रेम को विस्तीर्ण करें। प्रेम सेक्स का क्रिएटिव उपयोग है, उसका सृजनात्मक उपयोग है। जीवन को प्रेम से भरें।

आप कहेंगे, हम सब प्रेम करते हैं। मैं आपसे कहूं, आप शायद ही प्रेम करते हों, आप प्रेम चाहते होंगे। और इन दोनों में जमीन-आसमान का फर्क है। प्रेम करना और प्रेम चाहना, ये बड़ी अलग बातें हैं। हममें से अधिक लोग बच्चे ही रहकर मर जाते हैं। क्योंकि हरेक आदमी प्रेम चाहता है। प्रेम करना बड़ी अद्‌भुत बात है। प्रेम चाहना बिल्कुल बच्चों जैसी बात है। छोटे बच्चे प्रेम चाहते हैं। मां उनको प्रेम देती है। फिर वे बड़े होते हैं। वे और लोगों से भी प्रेम चाहते हैं, परिवार उनको प्रेम देता है। फिर वे और बड़े होते हैं। अगर वे पति हुए, तो अपनी पत्नियों से प्रेम चाहते हैं। अगर वे पत्नियां हुईं, तो वे अपने पतियों से प्रेम चाहती हैं। और जो भी प्रेम चाहता है, वह दुख झेलता है। क्योंकि प्रेम चाहा नहीं जा सकता, प्रेम केवल किया जाता है।

चाहने में पक्का नहीं है, मिलेगा या नहीं। और जिससे तुम चाह रहे हो, वह भी तुमसे

चाहेगा। तो बड़ी मुश्किल हो जाएगी। दोनों भिखारी मिल जाएंगे और भीख मांगेंगे। दुनिया में पति–पत्नियों का जितना संघर्ष है, उसका केवल एक ही कारण है कि वे दोनों एक–दूसरे से प्रेम चाह रहे हैं और देने में कोई भी समर्थ नहीं है।

आप इसे अपने मन के भीतर थोड़ा विचार करके देखना। आपकी आकांक्षा हमेशा प्रेम चाहने की है। चाहते हैं कोई प्रेम करे, और जब कोई प्रेम करता है तो अच्छा लगता है। लेकिन आपको पता नहीं है, वह दूसरा प्रेम करना भी केवल वैसे ही है जैसे कि कोई मछलियों को मारने वाला आटा फेंकता है। आटा वह मछलियों के लिए नहीं फेंक रहा है। आटा वह मछलियों को फांसने के लिए फेंक रहा है। वह आटा मछलियों को दे नहीं रहा है, वह मछलियों को चाहता है, इसलिए आटा फेंक रहा है।

इस दुनिया में जितने लोग प्रेम करते हुए दिखायी पड़ते हैं, वे केवल प्रेम पाने के लिए आटा फेंक रहे हैं। और दूसरा व्यक्ति भी जो उनमें उत्सुक होगा, वह इसलिए उत्सुक होगा कि शायद इस आदमी से प्रेम मिलेगा। वह भी थोड़ा प्रेम प्रदर्शित करेगा। थोड़ी देर बाद पता चलेगा कि वे दोनों भिखमंगे हैं और भूल में थे, एक–दूसरे को बादशाह समझ रहे थे!

और थोड़ी देर बाद उनको पता चलेगा कि कोई किसी को प्रेम नहीं दे रहा है और तब संघर्ष की शुरुआत हो जाएगी। दुनिया में दाम्पत्य जीवन नर्क बना हुआ है क्योंकि हम सब प्रेम मांगते हैं, देना कोई भी जानता नहीं है। सारे झगड़ों के पीछे बुनियादी कारण इतना ही है। और कितना ही परिवर्तन हो, किसी तरह के विवाह हों, किसी तरह की समाज व्यवस्था बने, जब तक जो मैं कह रहा हूं नहीं होगा, दुनिया में स्त्री और पुरुष के संबंध अच्छे नहीं हो सकते। उनके अच्छे होने का एक ही रास्ता है कि हम यह समझें कि प्रेम दिया जाता है... प्रेम मांगा नहीं जाता, सिर्फ दिया जाता है। जो मिलता है, वह प्रसाद है, वह उसका मूल्य नहीं है। नहीं मिलेगा, तो भी देने वाले का आनंद होगा कि उसने दिया।

अगर पति–पत्नी एक–दूसरे को प्रेम देना शुरू कर दें और मांगना बंद कर दें, तो जीवन स्वर्ग बन सकता है। और जितना वे प्रेम देंगे और मांगना बंद कर देंगे, उतना ही... अद्‌भुत जगत की व्यवस्था है... उन्हें प्रेम मिलेगा। और उतना ही वे अद्‌भुत अनुभव करेंगे––जितना वे प्रेम देंगे, उतना ही उनका सेक्स विलीन होता चला जाएगा।'

मनुष्यता के मन में दूसरी गहरी कंडीशनिंग है कि विवाह से प्रेम पैदा हो जाएगा। 'आह दिस!' नामक प्रवचनमाला में किसी युवक ने प्रश्न पूछा– मुझे पता है कि आप विवाह के खिलाफ हैं लेकिन फिर भी मैं विवाहित होना चाहता हूं। क्या मुझे आपके आशीष मिलेंगे?

परमगुरु ओशो ने जवाब दिया–

'मैं विवाह के खिलाफ नहीं हूं, मैं प्रेम के पक्ष में हूं। अगर प्रेम तुम्हारे लिए विवाह बनता है तो अच्छा है लेकिन ऐसी आशा मत करो कि विवाह से प्रेम पैदा होगा। यह संभव नहीं है। प्रेम विवाह बन सकता है। फिर भी तुम्हें सजगता से प्रयास करना पड़ेगा अपने प्रेम को विवाह में बदलने के लिए। सिर्फ मूर्ख ही कानून के बारे में चिंतित होते हैं, अन्यथा प्रेम पर्याप्त है।

साधारणतः लोग अपने प्रेम को नष्ट कर देते हैं। वे उसे नष्ट करने के लिए सब कुछ करते हैं और फिर दुख झेलते हैं। और वे पूछते रहते हैं, 'क्या गलती हुई?' वे नष्ट करते हैं,

अनजाने में प्रेम को मिटाने के लिए हर संभव प्रयत्न करते हैं। प्रेम के लिए अपरिसीम अभीप्सा और इच्छा है लेकिन प्रेम के लिए बहुत सजगता चाहिए। तभी वह चरम शिखर पर पहुंच सकता है। और चरम शिखर है विवाह; उसका कानून से कोई लेना–देना नहीं है, वह दो हृदयों का समग्रता में मिलना है। वह दो व्यक्तियों का समस्वरित होकर जीना है।

लेकिन लोग प्रेम करने की कोशिश करते हैं और चूंकि वे बेहोश होते हैं... उनकी अभीप्सा अच्छी है लेकिन उनका प्रेम ईर्ष्या, मालकियत, क्रोध और कुरूपता से भरा होता है। जल्द ही वे उसे नष्ट कर देते हैं। बेहतर होगा कि विवाह से शुरू करें ताकि उसे नष्ट करने से कानून तुम्हें रोके। समाज, सरकार, अदालत, पुलिस, धर्मगुरु... ये सभी तुम्हें विवाह के संस्थान में जीने के लिए बाध्य करेंगे। और तुम सिर्फ गुलाम रहोगे। अगर विवाह एक संस्था है तो तुम उसमें एक गुलाम होओगे। केवल गुलाम ही संस्थाओं में रहना चाहते हैं। मेरी दृष्टि में विवाह बिल्कुल ही अलग घटना है। वह प्रेम की पराकाष्ठा है।

मैं विवाह के खिलाफ नहीं हूं लेकिन मैं असली विवाह के पक्ष में हूं। मैं झूठे, नकली विवाह के खिलाफ हूं जो कि होता है। लेकिन वह एक व्यवस्था है। वह तुम्हें एक तरह की सुरक्षा देता है, रक्षण करता है, व्यस्तता देता है। तुम्हें उलझाए रखता है। इसके सिवाय वह तुम्हें कोई आंतरिक समृद्धि नहीं देता, कोई पोषण नहीं देता। तो अगर तुम मेरे हिसाब से विवाह करो तो ही मैं तुम्हें अपने आशीष दे सकता हूं। प्रेम करना सीखो। प्रेम के नाम पर जो चलता है वह सब छोड़ दो। यह पर्वत पर चढ़ने जैसा है। प्रेम करने की क्षमता अस्तित्व में बड़े से बड़ी कला है। इतने परिष्कार की जरूरत है, इतनी आंतरिक संस्कृति, इतनी ध्यानपूर्ण चित्त दशा कि व्यक्ति को एकदम दिखाई पड़े कि कैसे वह नष्ट किए चला जाता है।

यदि तुम विध्वंसक होना छोड़ दो, यदि तुम अपने संबंध में रचनात्मक होना शुरु करो, यदि तुम उसे सहारा दो, उसका पोषण करो, यदि तुम्हारे भीतर दूसरे के लिए करुणा की क्षमता हो, सिर्फ वासना की नहीं... केवल वासना प्रेम को सम्भाल नहीं सकती, करुणा चाहिए। यदि तुम दूसरे पर करुणा कर सको, यदि तुम उसकी सीमाओं को, उसकी अपूर्णताओं को स्वीकार कर सको, यदि दूसरा जैसा है वैसे ही तुम उससे प्रेम कर सको तो फिर एक दिन विवाह घटता है। उसमें वर्षों लग सकते हैं या पूरा जीवन लग सकता है। तुम्हें मेरे आशीष मिल सकते हैं लेकिन कानूनी विवाह के लिए मेरे आशीषों की जरूरत नहीं है, और मेरे आशीष किसी काम के भी नहीं होंगे। और ध्यान रहे, इससे पहले कि उसमें छलांग लगाओ, उस पर पुनर्विचार करो।

मैंने सुना है कि श्रीमती मॉस्कोविट्ज को चिकन सूप बहुत पसंद था। एक बार वह सूप को चम्मच से हिला रही थी जब उसके पति के तीन दोस्त वहां आए। उनमें से एक ने कहा, 'श्रीमती मॉस्कोविट्ज, हम आपको यह बताने आए हैं कि आपके पति इजी, एक कार दुर्घटना में मर गए।' श्रीमती मॉस्कोविट्ज अपना सूप पीती रही। उन्होंने उसे फिर बताया, फिर भी कोई प्रतिक्रिया नहीं! असमंजस में पड़कर उस आदमी ने दुबारा कहा, 'हम आपको बता रहे हैं कि आपका पति मर गया।' वह सूप पीती रही और बीच में उसने कहा, 'सज्जनों, एक बार यह स्वादिष्ट सूप खत्म हो जाए तब आप मेरी भयंकर चीख सुनेंगे! अगर किसी अखबार के

पत्रकार या टी.वी. रिपोर्टर को बुला सकें तो और भी दिल दहलाने वाली चीख सुन पाएंगे!'

विवाह प्रेम नहीं है, वह कुछ और ही है। तो इससे पहले कि तुम फंस जाओ, थोड़ा होश सम्भालो। विवाह एक पिंजरा है, पत्नी तुम्हें फंसा लेगी और तुम पत्नी को फंसा लोगे। यह पारस्परिक पिंजरा है। और फिर कानून से तुम्हें एक-दूसरे को सताने की इजाजत मिलती है। और खासकर इस देश में... एक जन्म के लिए नहीं बल्कि जन्मों-जन्मों के लिए! मरने के बाद भी डाइवोर्स की अनुमति नहीं है। अगले जन्म में भी यही पत्नी मिलेगी, याद रखना!

प्रेम के संग जुड़े इन गलत सम्मोहनों की जड़ें उखड़ सकें और सही धारणाओं को अवचेतन हृदय की गहराईयों तक पहुंचने के सुअवसर मिल सकें, इसीलिए 'प्रेम और सम्मोहन' एक ही थाली में परोसे गए हैं।

दूसरा सवाल- यहां पर मांगना या इच्छा करना सिखा रहे हैं जबकि समाधि कार्यक्रम में सिखाया गया था कि अस्तित्व ने जो दिया है उसके लिए धन्यवाद भाव से भरो?

इसमें कन्फ्यूज्ड होने की जरूरत नहीं है, जो मिला है उसके लिए धन्यवाद से भरो... अभी भी मैं यही कह रहा हूं। जो नहीं मिला है उसके लिए प्रयास करो। धन्यवाद भाव तुम्हें आलसी न बना दे। धन्यवाद भाव से भरोगे तो तुम्हारे भीतर खुशी का संचार होगा, तुम प्रसन्न होओगे, शांत होओगे, तनावमुक्त होओगे। काफी कुछ मिला है उसकी तरफ देखो, परमात्मा ने जो दिया है उसके लिए खूब-खूब धन्यवाद भाव से भरो। और जो तुम चाहते हो उसके लिए कोशिश करो। परमात्मा ने तुम्हें चलने के लिए हाथ-पैर दिए हैं, सोचने, विचार करने के लिए बुद्धि दी है, तय करने के लिए, निर्णय करने के लिए तुम्हें विवेक दिया है ... ये भी तो परमात्मा की तरफ से उपहार हैं, इनके लिए धन्यवाद भाव से भरना।

परमात्मा ने तुम्हें यहां भेजा है सम्मोहन प्रज्ञा सीखने के लिए, अपने अवचेतन मन को परिष्कृत करने के लिए... यह भी तो परमात्मा की देन है, इन दोनों बातों में तुम्हें विरोध क्यों दिखाई देता है! परमात्मा ने पक्षियों को पंख दिए हैं उड़ने के लिए कि उड़ो और अपना भोजन ढूंढ़ो। परमात्मा ने पशुओं को पैर दिए हैं चलने-फिरने के लिए कि जाओ और अपने भोजन को तलाशो। परमात्मा ने पक्षियों को हुनर दिया है घोंसले बनाने का, वह उनका घर है। परमात्मा ने वृक्षों और पेड़-पौधों के लिए दूसरे प्रकार का इंतजाम किया है। न उनको पंख दिए, न उनको पैर दिए, उनको जमीन में गड़ा दिया है और उनका सारा इंतजाम वहीं किया है कि बादल खुद आएंगे और बरस जाएंगे, हवाएं बहेंगी और उनको श्वास देंगी, सूरज की रोशनी आएगी और उनके लिए भोजन पकाएगी, भांति-भांति के इंतजाम किए हैं।

उनको हरी पत्तियां दी हैं कि वे खुद अपना भोजन बना सकें। हमारे पास न हरी पत्तियां हैं, न पक्षियों जैसे पर हैं, न हमारे पास अन्य पशुओं जैसे सबल पैर हैं इसलिए मनुष्य को बुद्धि दी है, विवेक दिया है। वह अपने बुद्धि से इंतजाम करे। अगर मनुष्य ने घर बनाया है तो यह भी तो परमात्मा का उपहार है। परमात्मा ने उसको ऐसी बुद्धि दी है। जैसे चिड़ियों को बुद्धि दी है घोंसला बनाने की, वैसे ही मनुष्य को बुद्धि दी है कि तुम अपना इंतजाम खुद करो और घर बनाकर आराम से रहो। इन दोनों बातों में विरोध कहां है, अगर आपके भीतर मकान बनाने

की इच्छा पैदा हो रही है, कि बाइक खरीदने की इच्छा है, कि कार खरीदने की इच्छा है तो इसमें क्या हर्ज है।

पक्षियों को कोई जरूरत नहीं है बाइक की, न वे मोटरसाइकिल बनाते हैं और न ही उसकी इच्छा करते हैं। मनुष्य को आविष्कार करने की बुद्धि दी है क्योंकि उसके पैर कमजोर हैं और वह ज्यादा दूर तक पैदल नहीं चल सकता इसलिए उसको यातायात करने के लिए कुछ और बनाना होगा। यह परमात्मा का उपहार है। इन दोनों बातों में कहां कोई विरोध है! निश्चित ही जो मिला है उसके लिए खूब–खूब धन्यवाद भाव से भरना। इससे जीवन में खुशी आएगी, शांति आएगी, अहोभाव आएगा। और जो नहीं मिला है और प्राप्त करने की तुम्हारी इच्छा है, विवेकपूर्वक चुनाव करके कि क्या मेरे लिए जरूरी है, उसके लिए प्रयास करना। उसी प्रयास का हिस्सा यह गोल मैनेजमेंट का कार्यक्रम है, आत्मसम्मोहन का कार्यक्रम है ताकि हम अपने लक्ष्य अच्छे से पा सकें, उसके लिए हम अपनी शक्ति को एकाग्र कर सकें, एक दिशा में चल सकें, लगनपूर्वक कार्य कर सकें।

इन दोनों में कहीं भी कोई विरोध नहीं है। जो मिला है उसके लिए धन्यवाद से भरोगे तो शांति तुम्हारी संपदा होगी और विवेकपूर्वक निर्णय करके, चुनकर जो पाने योग्य है उसको पाने का प्रयास करोगे तो तुम्हारे जीवन में उमंग, ऊर्जा और उत्साह होगा। तो खुशी भी हो और ऊर्जा उमंग भी हो, दोनों जरूरी हैं। अगर तुमने केवल एक चीज को पकड़ा, जैसा कि दुनिया में बहुत से लोगों ने किया है... पश्चिम के लोगों ने उत्साह, उमंग, उत्सव को तो चुना, नए–नए अनुसंधान किए, नए–नए लक्ष्य बनाए, उनको हासिल करने के प्रयास किए, भारत और चीन के बीच ही हिमालय खड़ा है लेकिन कोई भारतीय और चीनी उस पर कभी नहीं चढ़ा, उसपर चढ़ने के लिए भी पश्चिम के लोग ही आए।

हमारे यहां सब हाथ पर हाथ धरे बैठे हैं कि प्रभु की जो मर्जी होगी सो होगा, उसकी मर्जी के बिना पत्ता भी नहीं हिलता, हमारे हाथ–पैर कहां से हिलेंगे! हमने अपने आलस्य के लिए तर्क ढूंढ़ लिए। पूरब और पश्चिम में यह बड़ा भेद है। पूरब के लोग आलसी हो गए। भाग्य, किस्मत, ईश्वर, ग्रह–नक्षत्र, ज्योतिष, हस्तरेखा, विधाता... न जाने कैसी–कैसी फिलॉसफी निकाल ली। कुल मिलाकर उनका मतलब था कि हमको कुछ करने की जरूरत नहीं है। इसका दुष्परिणाम हुआ कि हम आर्थिक रूप से पिछड़ गए, हजारों सालों तक गुलाम रहे, दरिद्र हैं, वैज्ञानिक बुद्धि नहीं हैं, चिंतन–मनन की शक्ति खो दी, काहिल और सुस्त हो गए... और बड़े तर्कपूर्ण उत्तर हमारे पास हैं!

इसका ठीक उल्टा पश्चिम में हुआ। वहां के लोग अतिकर्मठ हो गए, वह कर्मठता उन्हें पागलपन की तरफ ले जा रही है, उस कर्मठता ने विज्ञान को युद्ध का सेवक बनाकर रख दिया है, वह कर्मठता विक्षिप्तता बनी जा रही है, इतने ज्यादा कर्मठ हो गए हैं। जो मिला है उसकी कोई खुशी नहीं है उनके जीवन में, उसकी तरफ अब वे देखते ही नहीं, जो पाना है बस उसी की तरफ उनकी नजरें अटकी हुई हैं और बड़े तनावग्रस्त हैं, बड़े परेशान हैं। पिछले सौ साल में पश्चिम में जितने लोग पागल हुए हैं इतने पिछले एक हजार साल में भी नहीं हुए होंगे। जितने भांति–भांति के अपराध, षड्यंत्र हो रहे हैं उतने कभी नहीं हुए थे। प्रथम विश्वयुद्ध और

द्वितीय विश्वयुद्ध... पिछली सदी में ऐसी भयानक हिंसा, रक्तपात कभी नहीं हुआ था। यह है पश्चिमी देशों की देन, एटम बम। और अगर तीसरा विश्वयुद्ध हुआ तो वह शायद आखिरी होगा, उसके बाद कोई नहीं बचेगा, न पूरब बचेगा और न पश्चिम बचेगा। ऐसे खतरनाक हथियार बन गए हैं कि एक आदमी भी नहीं बचेगा। आदमी क्या, मक्खी और मच्छर भी नहीं बचेंगे। पश्चिम ने भी दुष्परिणाम भोगा है और पूरब ने भी भोगा है, दोनों की ही जीवनदृष्टि उचित नहीं है। परमगुरु ओशो जो दृष्टि देते हैं 'झोरबा दी बुद्धा' की, पूरब और पश्चिम के मिलन की, वही सम्यक् जीवन जीने की एकमात्र कला है।

तो जो मिला है उसकी खुशी मनाओ, उसका आनंद लो, धन्यवाद भाव से भरो, प्रभुकृपा मानो उसको और तुम्हारे भीतर जो पाने की आकांक्षा है, विवेकपूर्वक चुनकर, पुनः दोहरा रहा हूं, विवेकपूर्वक चुनकर, उसे पाने के लिए प्रयास करना। हर कुछ पाने के लिए दीवाने मत हो जाना नहीं तो तुम भारी मेहनत करोगे और अंत में पता चलेगा कि जो तुमने पाया है वह किसी काम का नहीं, उसका कोई मूल्य नहीं है। व्यर्थ की भाग-दौड़ में नहीं लगना, जो योग्य है, उचित है, पाने जैसा है, जिससे जीवन में कुछ सार्थकता आएगी, सुंदरता आएगी, जीवन में शांति की वृद्धि होगी उसी के लिए प्रयास करना, यही विवेक है। हाथ पर हाथ रखकर आलसी बनकर नहीं बैठना है।

जो मिला है निश्चित ही उसकी खुशी मनाओ, उस पर नजर रखो। दोनों बातों का मिलन चाहिए, इसमें से एक पक्ष को चुनकर दूसरे को नकार मत देना। वह भूल सदियों-सदियों से होती आई है, पूरी मनुष्य जाति बड़े स्किट्ज़ोफ्रेनिक ढंग से आज तक जीती रही। ओशो के बाद एक नया मनुष्य पैदा हुआ है, हम सबको वह नया मनुष्य बनना है।

तीसरा प्रश्न- सम्मोहन के दौरान भी भीतर मन का एक हिस्सा जागा ही रहता है और तर्क-वितर्क करता रहता है। क्या यह ठीक है?

अगर ऐसा हो रहा है तो उसको सम्मोहन की स्थिति न कहो। सम्मोहन की स्थिति का मतलब है कि तर्क-वितर्क करने वाला चेतन मन सोया-सोया सा हो जाए। हां, भीतर अवचेतन मन जागा रहेगा लेकिन वहां तर्क-वितर्क नहीं होते इस बात को समझना। हमारे मन के जो दो हिस्से हैं- एक है तर्कशील और दूसरा है श्रद्धावान। अवचेतन मन में कोई संदेह नहीं होता, कोई तर्क नहीं होता और चेतन मन में हमेशा प्रश्न होते हैं, संदेह होता है, तर्क चलते हैं पक्ष-विपक्ष दोनों में, इंकार करता है वह। अवचेतन मन बिल्कुल छोटे बच्चे जैसा है, वह स्वीकार करता है। जो भी सुझाव आता है उसको ग्रहण कर लेता है।

सम्मोहन का अर्थ है चेतन मन सोया-सोया सा हो जाए और केवल अवचेतन मन काम कर रहा हो, बहुत रिसेप्टिव मूड में... वह सम्मोहन की अवस्था है। अगर ऐसा नहीं हुआ तो उसको सम्मोहन की अवस्था मत कहो, यह तो सामान्य जागरण की ही अवस्था है। फिर से प्रयास करना आज आने वाले सत्रों में, ऐसी स्थिति बन जाए कि मानो सो गए हो। पूर्ण रूप से सोने के लिए नहीं कह रहा हूं, भीतर का एक हिस्सा जागा रहेगा, तर्कशील वाला नहीं,

पिक्टोरियल... इसलिए चित्रात्मक सुझाव आपको दे रहा हूं।

कल मैं कह रहा था कि बगीचे में जा रहे हैं, पंगडंडी है, पेड़ हैं, आप उस चित्र को देखें जैसे चित्र देख रहे हों। जैसे जलप्रपात में स्नान कर रहे हैं कि चांदनी रात में चट्टान पर बैठे हुए हैं, इसमें विचार करने की जरूरत नहीं है। एक फिल्म की भांति देखें और तब आप पाएंगे कि अवचेतन मन काम करने लगा। रात को जब हम सो जाते हैं तो चेतन मन तो सो जाता है लेकिन अवचेतन मन जो रात को सपने देखता है वह फिल्म की भांति होते हैं। ठीक वैसा ही हिप्नोसिस की अवस्था में होता है।

अंतिम प्रश्न– परमगुरु ओशो ने मुल्ला नसरुद्दीन के बहुतेरे प्रेरक किस्से सुनाए हैं। कृपया मुल्ला का कुछ जीवन परिचय दीजिए।

मुल्ला के ये किस्से रोचक तो हैं ही, अर्थगर्भित भी हैं। मजाक के संग प्रबोध देते हैं हमेशा। कभी मुल्ला के बेतुके से प्रतीत होने वाले किस्से भी ज़ेन कथाओं की भांति जीवन और संसार के किसी गहरे पक्ष की ओर इंगित करते हैं। परमगुरु ने इनका खूब सदुपयोग किया है। यह कोई ज़रूरी नहीं कि ये किस्से वाकई मुल्ला के ही हों। यह भी तय नहीं है कि मुल्ला नसरुद्दीन नामक कोई शख्स वाकई कभी हुआ भी था या नहीं। कुछ लोग अभी भी तुर्की में उसकी कथित कब्र देखने जाते हैं। मुल्ला का जीवन परिचय न पूछो, उससे प्रेरणा ग्रहण करो। वह खुद पर मजाक करके, स्वयं को हास्यास्पद बनाकर काफी कुछ सिखा देता है। सुनो–

एक दिन मुल्ला बाज़ार गया और उसने एक इश्तहार लगाया जिसपर लिखा था– 'जिसने भी मेरा गधा चुराया है वह मुझे उसे लौटा दे। मैं उसे वह गधा ईनाम में दे दूंगा'।

'नसरुद्दीन!'– लोगों ने इश्तहार पढ़कर कहा– 'ऐसी बात का क्या मतलब है!? क्या तुम्हारा दिमाग फिर गया है? '

'दुनिया में दो ही तरह के तोहफे सबसे अच्छे होते हैं'– मुल्ला ने कहा– 'पहला तो है अपनी खोई हुई सबसे प्यारी चीज़ को वापस पा लेना, और दूसरा है अपनी सबसे प्यारी चीज़ को ही किसी को दे देना।'

उद्गम की ओर, स्रोत की ओर उन्मुख करने वाली एक अन्य घटना सुनो– एक दिन मुल्ला नसरुद्दीन अपने गधे पर बैठकर किसी दूसरे शहर से अपने गाँव आया। लोगों ने उसे रोककर कहा– 'मुल्ला, तुम अपने गधे पर सामने पीठ करके क्यों बैठे हो?' मुल्ला ने कहा– 'मैं यह जानता हूँ कि मैं कहाँ जा रहा हूँ लेकिन मैं यह देखना चाहता हूँ कि मैं कहाँ से आ रहा हूँ।'

मुल्ला द्वारा कुछ पुराने वाक्यों पर नया पॉलिश–

1. जहां चाह, वहां आह! 2. हम दो हमारे दस! 3. यदि आपके पास कोई सुझाव है तो कृपया मत दीजिए 4. इतना न पढ़ो साकी कि कुछ न रहे बाकी 5. कभी कभी मेरे दिल में ख्याल आता है और कभी कभी नहीं भी आता 6. अच्छा हुआ जो तुम बेवफा निकले, वफादार

तो कुत्ते होते हैं 7. दो कदम तुम भी चलो, दो कदम हम भी चलें, बीच में आटो–रिक्शा कर लेंगे 8. आप आए बहार आई जहां बैठे दरार आई।

मुल्ला से पूछा गया– जागने के लिए क्या करना चाहिए? वह बोला–जल्दी से जल्दी सो जाना चाहिए। अतः उसकी नसीहत का ख्याल रखते हुए–**गुड नाइट।**

2

चार तलों के प्रेम

आज प्रेम के चार रूपों की हम चर्चा करेंगे। शरीर के तल पर जो प्रेम है उसमें भी चाहत तो अद्वैत की है कि 'दुई' मिट जाए। दो न रहें, एक हो जाएं। किन्तु वैसा आभास मात्र ही होता है। द्वैत मिटता नहीं। दो बने रहते हैं। एक आकर्षण भी है और साथ-साथ विषाद भी है कि जैसा चाहा था वैसा नहीं हुआ, क्योंकि वैसा हो नहीं सकता।

सिर्फ एक झलक मिलती है और खो जाती है। तो झलक मिलने की आशा है, उम्मीद है, आकर्षण है और खो जाने के बाद गहन तनाव, विषाद है।

शरीर के तल पर इतना ही हो सकता है। भौतिक विज्ञानी कहते हैं परमाणु में जहां इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन और न्यूट्रॉन इतने पास-पास हैं, वहां भी उनका मिलन नहीं हो पाता। एक निश्चित दूरी बनी ही रहती है। दो पार्टिकल्स कभी मिल कर एक नहीं हो सकते, तो शरीर तो बहुत बड़ी बात है!

जब इतने सूक्ष्म सब-एटॉमिक पार्टिकल्स नहीं मिल सकते तो भौतिक तल पर मिलन संभव नहीं है। केवल आभास मात्र घटित होता है। और चाहत है ऐसी कि दो, दो न रहें। बस ऐसा कविताओं में ही हो पाता है, वास्तविकता में नहीं हो पाता। वह द्वैत बना रहता है, संघर्ष बना रहता है, लड़ाई बनी रहती है। प्रेम भी चलता जाता है और लड़ाई भी चलती जाती है। साथ-साथ सुख-दुख दोनों चलते जाते हैं।

शरीर से ज्यादा गहरा तल मन के तल का है। मन के तल पर जो मिलन है वह थोड़ा ज्यादा देर संभव है, शरीर से ज्यादा गहरा, थोड़ा ज्यादा टिकाऊ। इसलिए कई बार प्रेम संबंधों में भी उतना सुख नहीं मिलता जितना कि दोस्ती में मिलता है।

शारीरिक संबंध नहीं है लेकिन मानसिक रूप से संबंधित हैं। विचारों का मिलना हुआ है, एकमत हैं, यह ज्यादा सुखदायी स्थिति बनती है। यद्यपि यह भी बहुत देर नहीं टिक सकती, अगर हम विचारों के विस्तार में जाएंगे तो सारी दोस्तियां टूट जाएंगी। छुटपुट विचार मिल सकते हैं।

तो मन के तल पर किसी सीमा तक मिलन जैसा लगता है कि बिल्कुल एक हो गए। अगर विस्तार में जाएंगे तो जिन मुद्दों पर हम बिल्कुल एक हो गए हैं उनका विस्तार में अगर निष्कर्ष निकालेंगे तो बहुत मतभेद खड़े हो जाएंगे और पता चलेगा कि कोई मिलन संभव नहीं हुआ।

गहरे से गहरे दोस्त भी कुछ मुद्दों पर सहमत होंगे, सभी मुद्दों पर नहीं हो सकते। तो जिनका मिलना–जुलना है उनके साथ ये वहम बना रह सकता है कि हम बिल्कुल एकमत हैं।

जिनके साथ हमें लंबे समय तक संपर्क में आना होता है उनके साथ हमारा वहम टूट जाएगा। क्योंकि विचार भी मिल नहीं सकते और विचार भी बदल रहे हैं, परिवर्तनशील हैं। आज मिल रहे हैं तो कोई जरूरी नहीं कि कल मिलें। वह व्यक्ति बदल जाएगा, आप बदल जाएंगे। तो जिस प्लेटफॉर्म पर खड़े होकर मुलाकात हुई थी वह प्लेटफॉर्म ही चेंज हो जाएगा। समय के साथ–साथ, अनुभवों के साथ–साथ विचार भी बदल रहे हैं।

इससे और ज्यादा मिलन भावनात्मक है, हृदय के तल पर। यहां शरीर भी महत्त्वपूर्ण नहीं, विचार भी महत्त्वपूर्ण नहीं, एक भावनात्मक जोड़ है। अंग्रेजी में भावना के लिए कहते हैं इमोशन, इमोशन यानी मूवमेंट, जहां गति हो। माना कि भावनात्मक जोड़ काफी लंबे समय तक टिकेगा शरीर की तुलना में, मन की तुलना में भावनाएं ज्यादा देर तक टिकेंगी लेकिन वे भी मूवमेंट करेंगी, बदलाहट होगी। इमोशन का मतलब जो आएंगी, जाएंगी। वे भी हमेशा एक सी नहीं हो सकतीं। इसलिए उनका नाम ही इमोशन है। पहले नहीं थीं फिर आ गईं, कब चली जाएंगी पता नहीं। एक हवा का झोंका है, आया, लेकिन हमारे बुलाने से नहीं आया। अपने आप आया और अपने आप चला जाएगा। एक दीवानगी छा गई भावना के तहत। वह झोंका कब छोड़कर चल देगा उसकी कोई भी भविष्यवाणी नहीं। और इस दीवानगी में इसलिए एक जल्दबाजी भी रहती है, इसको ठीक–ठीक जी लें, भोग लें क्योंकि पता नहीं ये कितनी देर टिकेगी। क्योंकि भीतर से हमें पता ही है कि यह भी नहीं टिकेगी।

दुनिया में बड़े भावनात्मक प्रेम करने वाले लोग हुए हैं, समय बीतने के साथ सब बह जाता है पानी जैसा, कुछ भी नहीं बचता। पीछे एक विषाद, एक कड़वाहट छूट जाती है, ऐसा लगता है कि कुछ धोखा हो गया। तब हम दूसरे को ब्लेम करते हैं कि उसने धोखा दिया।

सच्चाई ऐसी नहीं है कि किसी ने जानबूझकर धोखा दिया। सच्चाई ये है कि इमोशन्स ने पज़ेस कर लिया था, भूत–प्रेत की भांति पकड़ लिया था थोड़ी देर के लिए, वह भावना छोड़कर चली गई। न इसमें आपका कोई दोष है और न दूसरे का कोई दोष है। हवा का झोंका आया था और विदा हो गया, न बुलाने से आया था और न रोकने से रुकेगा।

तो प्रेम के इन तीन तलों से हम सब परिचित हैं। शारीरिक प्रेम सबसे उथला है इसलिए

उसका क्रय–विक्रय भी संभव है। वेश्याएं संभव हैं, खरीदा जा सकता है उनको। बहुत उथली बात है, कुछ भी गहराई की बात उसमें नहीं है।

मन का प्रेम जिसे हम मित्रता कहें वह इससे ज्यादा गहरा है, उसकी कोई खरीद नहीं हो सकती।

अभी थोड़े दिन पहले मैं एक लेख पढ़ रहा था, किसी ने विश्लेषण किया था हिन्दी फिल्म सिनेमा का कि आज तक जितनी भी फिल्में बनीं उनमें जो सुपरहिट हुई हैं उनमें क्या–क्या खूबियां थीं। एक बात बड़े मुद्दे की अपने विश्लेषण से निकाली। मैं बहुत प्रभावित हुआ उसका निष्कर्ष देख के। उसमें लिखा है कि जिन फिल्मों में स्त्री–पुरुष के प्रेम की तुलना में दोस्ती को ज्यादा महत्त्व दिया गया है– चाहे दो पुरुषों के बीच में हो, चाहे दो स्त्रियों के बीच में हो, चाहे स्त्री–पुरुष के बीच में हो– जहां मित्रता को हाईलाइट किया गया है, जहां पर काम–संबंध की भी कुर्बानी चढ़ा दी गई है दोस्ती की खातिर, वह कहानी हमेशा सुपरहिट हुई है।

पूरा वर्णन था कि पचास–साठ सालों में ऐसी कितनी फिल्में बनी हैं और वे सब सुपरहिट हैं, जहां–जहां दोस्ती को ज्यादा महत्त्व दिया गया है। उसकी यह बात मुझे बहुत गहराई में छू गई।

उसका यह विश्लेषण कि कामवासना की तुलना में मन का संबंध हमारे लिए ज्यादा मूल्यवान है, हम उसको ज्यादा कीमत देंगे; जहां मन मिल जाए, गहरी बात है; उससे और गहरी बात भावनात्मक है; क्या इससे और भी गहरी कोई बात हो सकती है? एक और प्रेम संभव है आत्मगत, चेतना के तल पर।

ये हमारे चार डाइमेंशन्स हैं। फिजिकल, मेंटल, इमोशनल और स्पिरीचुअल। फिजिकल सबसे बाहर, यह बिल्कुल दूर की, परिधि की बात है जो कि बहुत उथली है।

पुराने जमाने में आपने कहानियां पढ़ी होंगी, वेश्यागामी राजाओं की, जमींदारों की। उनकी पत्नियों को कोई आपत्ति नहीं होती थी क्योंकि यह बात जाहिर है कि यह कोई गहरा संबंध नहीं है। हां, अगर पति किसी के प्रेम में पड़ गया है तब खतरा है। वेश्या से कभी कोई खतरा नहीं माना गया। क्योंकि वह तो बिल्कुल शारीरिक संबंध है, पैसे के लेन–देन की बात है। इससे उस रानी के जीवन में कोई प्रभाव नहीं आने वाला इसलिए उसके लिए किसी चिंता की बात नहीं थी। अगर इमोशनल अटैचमेंट हुआ कहीं, तब मुश्किल होती थी।

तो शरीर का संबंध सबसे बाहरी, सबसे उथला है। इसकी कोई खास कीमत नहीं है। पशु–पक्षी, कीड़े–मकोड़े सब में होता है, मनुष्य से ज्यादा अच्छा ही होता है। एक मच्छर रोज डेढ़ सौ बच्चे पैदा करता है, मक्खी ढाई सौ बच्चे देती है। मानसिक संबंध जहां से शुरू होता है वहां से सच पूछो तो मनुष्यता की शुरुआत होती है। अगर हम केवल शारीरिक तल पर ही जी रहे हैं तो पशुवत ही हैं। कुछ खास फर्क नहीं।

असली मनुष्यता की शुरुआत मन से होती है। शब्द भी मन से बना है। जब हमारे लिए विचार, मन ये महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं देह से भी ज्यादा, जहां शारीरिक सौंदर्य की तुलना में हमें

मानसिक सौंदर्य अभिभूत करने लगा, वहां से हम पहली बार मनुष्य जैसे होना शुरू हुए। अन्यथा मनुष्यता की कोई खूबी नहीं है।

पशुओं के पास मन नहीं है। उनके पास मन का आकर्षण नहीं है। मन के साथ ही समस्याएं भी खड़ी होती हैं। जहां तक तन का संबंध है वह स्थायी हो सकता है क्योंकि वह नाममात्र का ही संबंध है उसमें कुछ खास है ही नहीं। पुराने जमाने में बालविवाह किए जाते थे और जिंदगी भर बड़े आराम से चलते थे। टिकी रहती थी बात क्योंकि वस्तुतः कुछ ऊपर से है ही नहीं। बिगड़ेगा क्या जब कुछ बना ही नहीं है।

तो जहां से मन शुरू होता है वहां से स्वतंत्रता शुरू होती है। मन का स्वभाव चंचलता है, बदलाहट है। यहीं से फिर दुख भी शुरू होंगे। याद रखना, जितना गहरा सुख मिलेगा उतने ही गहरे दुख की संभावनाएं बनती चली जाएंगी। शरीर के तल पर न कोई गहरा सुख है और न कोई गहरा दुख है, बहुत उथली–उथली बात है। तो मन के तल पर घाव भी गहरे लगेंगे, उड़ान भी ऊंची भरी जाएगी और जब गिरेंगे तो हाथ–पैर भी टूटेंगे।

चालाक लोगों ने विवाह व्यवस्था खोज ली थी कि बचपन में ही शादी कर दो। ऐसा समय ही न आए कि कोई मानसिक आकर्षण पैदा हो। प्रेम का मौका ही मत दो। कामवासना से रीप्लेस कर दो और प्रेम का मौका ही कभी न आए तो समाज स्थिर रहेगा और उनकी ये बात चालाकीपूर्ण है, लेकिन सच है। समाज स्थिर रहेगा।

जैसे ही मन को मौका देंगे, समाज की स्थिरता टूटने लगेगी, परिवार का बचना मुश्किल हो जाएगा। जहां–जहां प्रेम का स्वागत किया गया, स्वतंत्रता दी गई वहां पर समाज टूटने लगा, परिवार बिखरने लगा। बहुत नए–नए प्रकार के दुख पैदा होने लगे, भारी कष्टों में गिरे। याद रखना, उन्होंने सुख भी जाना, बैलेंस होगा उसी तुलना में तो उतने ही कष्ट भी भुगतने होंगे।

प्रकृति में एक संतुलन का नियम है। जितना सुख उतना ही दुख बराबरी से। इमोशनल प्रेम के तल पर और भी गहरा सुख है, दुख भी उतना ही गहरा है। जहां भावनात्मक प्रेम का संबंध है वहीं सारे उपद्रव भी खड़े होते हैं। तुम अगर मुझको न चाहो तो कोई बात नहीं, किसी और को चाहो तो मुश्किल होगी। फिर बंदूकें चलेंगी... इमोशनल अटैचमेंट है। आदमी मरने को भी तैयार हो जाएगा, मारने को भी तैयार हो जाएगा। कुछ भी कर सकता है। इमोशन्स के तहत वह पूरी तरह अंधा हो जाता है। जैसे किसी भूत–प्रेत ने पकड़ लिया हो। भावावेश में उसे कोई भी समझदारी की बात, कोई भी बुद्धिमानी की बात समझ नहीं आती। जब तक ये भावावेश है, वह बिल्कुल अंधा है। इसमें एक प्रकार का सुख है क्योंकि इसमें एक गहन एकाग्रता घटित होती है। मन की चंचलता अब नहीं है यहां, अब यहां कोई विचार और तर्क इत्यादि नहीं हैं। एक भावना ने उसको पूरी तरह से पकड़ लिया है। उसके कब्जे में है वो, एक प्रकार की दीवानगी है, पागलपन है। इस पागलपन का भी एक सुख है। लेकिन यह घटना थोड़ी देर के लिए घटी है, यद्यपि जब घटती है तो ऐसा लगता है कि जन्मों–जन्मों की कहानी है, बस सदा–सदा ऐसा ही रहेगा। थोड़ा समय बीतेगा और सब गायब हो जाएगा।

चाहे न देखे।

जहां दीप जल रहा है वहां रोशनी होगी ही होगी। जहां फूल खिला है वहां सुगंध फैलेगी ही फैलेगी। ये फूल किसी खास व्यक्ति के लिए सुगंध नहीं उड़ा रहा है कि कोई कवि यहां से निकलेगा और कविता लिखेगा मेरे ऊपर। सुबह सूरज निकला है तो इसलिए नहीं कि कोई सूर्य नमस्कार करे, कि जल डाले सूरज पर और पूजा करे। सारी मनुष्य जाति खत्म हो जाए तब भी सूरज निकलता रहेगा, कोई भी फर्क न पड़ेगा।

प्रेम जब ऐसा हो जाए स्वभावगत, किसी अन्य पर निर्भर नहीं, स्वस्फूर्त, हमारे होने की एक क्वॉलिटी, तब अप्स एण्ड डाउन्स से मुक्ति होती है। तब ये कोई क्रिया नहीं है, ये लहर जैसी नहीं है जो आई–गई। यह स्वभाव है, ऐसी हमारी चेतना ही है। इसमें ऐसा नहीं कि हम कुछ विशेष कर रहे हैं। अगर हम कुछ विशिष्ट कर रहे हैं तो याद रखना, उससे फिर छुट्टी भी चाहिए।

कोई क्रिया लगातार नहीं की जा सकती। अगर आप पैदल चले हैं तो उसके बाद बैठना भी होगा, अगर आप दिन में जागे हैं तो रात को सोना होगा। हर चीज के लिए विश्राम करना पड़ेगा। कोई काम लगातार नहीं हो सकता। केवल 'स्वभाव' लगातार हो सकता है। क्रियाएं हमारा स्वभाव नहीं हैं और इसलिए वे लगातार नहीं हो सकतीं।

जब हम सामान्य अर्थों में किसी को प्रेम करते हैं... फिजिकल, मेंटल या इमोशनल तब हम ऐक्टिवली कुछ कर रहे हैं और निश्चित ही यह क्रिया थकाने वाली होगी और इससे फिर छुटकारा चाहिए, इससे विश्राम चाहिए। ये हमें थका देगी, तोड़ देगी थोड़ी देर में, रेस्ट चाहिए। उस रेस्टिंग फेज में अप–डाउन आ जाएगा।

जो बात स्वभावगत है, जो हमारे होने का गुणधर्म है केवल उसमें रेस्ट नहीं चाहिए क्योंकि उसमें हम कुछ कर नहीं रहे। अगर हमारा प्रेम एक क्रिया है तो वह बार–बार टूटेगा। वह हमेशा नहीं चल सकता। उसे विश्राम करना पड़ेगा, वह थकाने वाला होगा। सौभाग्यशाली हैं वे प्रेमी–प्रेमिका जिनका मिलन नहीं हो पाता, यदा–कदा दो–चार मिनट को मिले फिर बिछुड़ गए। बीच में दुश्मन समाज खड़ा है। उन्हें लगता है दुश्मन किंतु वही उनका परममित्र है जो उन्हें नहीं मिलने दे रहा है। उसी की वजह से उन्हें भ्रम बना रहता है कि गहन प्रेम है। काश हम मिल जाएं तो कितना महाआनंद हो जाए।

उनको पता नहीं है कि अगर मिल जाएं तो कैसी दुर्गति होगी। अभी कभी–कभार मिलते हैं वे चार–छः मिनट के लिए कॉलेज की बिल्डिंग के पीछे, कि कहीं मंदिर के पीछे।

मंदिरों का एक ही सदुपयोग है, प्रेमी–प्रेमिकाओं का मिलन स्थल। पांच–दस मिनट के लिए चोरी–छिपे मिले, इससे उन्हें लगता है कि हम कितने गहरे प्रेम में हैं क्योंकि बीच में उनको विश्राम मिल जाता है। जब इनका विवाह हो जाएगा, चौबीस घंटे ये संग–साथ रहने लगेंगे तब बीच का रेस्टिंग फेज गायब हो गया। अब वे एक–दूसरे से उम्मीद कर रहे हैं कि वैसा ही प्रेम करते रहो जैसा पहले तुमने सैंपल में दिखाया था।

सारे दुकानदार सैंपल में जो सामान दिखाते हैं थोक में वैसी सप्लाई नहीं करते हैं। वो

तो सैंपल की चीज अलग थी... दिखावे के लिए। वैसा दिखावा पांच–दस मिनट ही हो सकता है। अब वो पत्नी चाहती है कि अभी भी वैसे ही गीत गाओ, वही प्रशंसा वाली कविताएं कहो। अब ये संभव नहीं है। अगर अब वो कविता करता रहेगा तो नौकरी करने कब जाएगा। इसको दुकान भी चलानी है और पच्चीस काम करने हैं, बीच में रेस्ट चाहिए।

तो जब भी हम कोई क्रिया करेंगे शारीरिक, मानसिक या हार्दिक वो लगातार नहीं हो सकती। वहां घृणा उत्पन्न होने लगेगी। वह घृणा एक प्रकार का रेस्ट है। जब पति–पत्नी लड़ रहे हैं तो ये रेस्टिंग फेज है उनका। अभी थोड़ी देर के लिए प्रेम से छुटकारा, इसके बाद पुनः वे प्रेम कर पाएंगे थोड़ी देर।

आदमी जो सो गया है अब उसने क्षमता जुटा ली जागने की और जो आदमी जाग रहा है उसने क्षमता जुटा ली सोने की। क्योंकि सोना जगने में ले जाता है और जगना सोने में ले जाता है। ऐसे ही वो जो मियां–बीवी का लड़ाई झगड़ा है वो वापस प्रेम उत्पन्न कर देगा, प्रेम से फिर लड़ाई निकल आएगी, लड़ाई में से फिर प्रेम निकल आएगा और इस प्रकार से गाड़ी चलती रहेगी।

तीन तलों पर ऐसा ही संभव है, इस बात को जानकर समझकर, अपने जीवन में, आसपास के दूसरों के जीवन में इस बात को परखकर और इस बात को भी जानकर कि जो लोग इन अप्स एण्ड डाउन्स को छोड़कर भागे उनकी भी समस्या हल नहीं हुई तब हमें सूझ आती है कि फिर क्या किया जाए।

उपाय ये है कि हम अपने चैतन्य में स्थित हों, वहां एक अद्‌भुत, सूक्ष्म प्रेम जिसे हम दिव्य प्रेम कहें, वह मौजूद है। हमें पैदा नहीं करना है, वह वहां है ही। करने की भाषा छोड़ देना, वह है। हम केवल उसके प्रति संवेदनशील हो जाएं।

जैसे हम ओंकार के प्रति संवेदनशील हो गए तो सुनाई पड़ने लगा। हमने पैदा नहीं कर दिया ओंकार, ओंकार तो सदा–सदा से था, हमने उस तरफ नजर डाली।

ठीक ऐसे ही आलोक सदा–सदा से था, कोई रोशनी हमने नहीं जला दी। अगर हमने जलाई होती तो फिर उसका फ्यूज भी उड़ता। नहीं! जल ही रही थी, हम केवल उस तरफ अपनी दृष्टि ले गए।

ठीक ऐसे ही भीतर मौजूद शाश्वत प्रेम के प्रति संवेदनशील हो जाओ। और यह तभी संभव है जब बाहर से, पर से हमारी दृष्टि हटे।

अगर हम बाहर उलझे हुए हैं तो अपने भीतर के स्वस्फूर्त प्रेम के प्रति हम कभी सेंसिटिव नहीं हो पाएंगे। हम हमेशा बाहर ही उलझे हुए हैं।

तो यह जो एक बात मैंने आपसे कही इससे समझ निर्मित होगी। इस समझ की वजह से आप बाहर के प्रेम से थोड़ी देर के लिए छूट के अपने भीतर स्थिर हो पाएंगे, तब एक दिव्य प्रेम का एहसास होगा जिसे हम कहें भक्ति। यह हमारे अन्य प्रेमों से बिल्कुल भिन्न है।

अन्य सारे प्रेम परमुखी हैं, यह स्वमुखी है। अन्य प्रेम हमारी क्रियाएं हैं। हम करेंगे तो होंगे, नहीं करेंगे तो नहीं होंगे। यह दिव्य प्रेम हमारी क्रिया नहीं है, यह बस पहले से ही मौजूद है। बस हमारे संवेदनशील होने की बात है।

इसमें कोई अप्स एण्ड डाउन्स नहीं हैं। जैसे ओंकार की धुन चालू–बंद नहीं होती, लगातार चलती रहती है ऐसा ही यह दिव्य प्रेम भी है... सदा–सदा एक सा है।

अन्य प्रेम बड़ी ऊष्मा और गर्मी से भरे हुए हैं। यह प्रेम शांत और शीतल है। इसमें कोई उत्तेजना नहीं।

जब तक हमारे मन में उत्तेजना का आग्रह है कि जीवन में एक्साइटमेंट हो तब तक हम बाहर के तीन प्रकार के प्रेम में फंस जाएंगे। जब हम विवेकपूर्वक यह बात देख लेते हैं कि जहां–जहां उत्तेजना है, एक्साइटमेंट है वहां पर्वत और खाई बारंबार आएंगे, तब हम समझपूर्वक उत्तेजना का आग्रह छोड़ देते हैं और शांत चेतना में प्रवेश करते हैं। यह गहन समझ के साथ ही संभव है, शांत प्रेम से राजी।

उत्तेजना वाला आग्रह गिरा देना। संसार छोड़ के जंगल में नहीं भागना है, उत्तेजना छोड़नी है। खूब अच्छे से इसको समझ लेना। संसार, परिवार छोड़कर भागने से कुछ नहीं होगा। तुम जहां जाओगे वहीं फिर एक नए प्रकार का संसार बस जाएगा, नए प्रकार के संबंध फिर निर्मित हो जाएंगे। तो संसार और लोगों को नहीं छोड़ना है। जीवन के इस नियम को परख कर उत्तेजना का आग्रह छोड़ना है।

वह जो उत्तेजना की चाहत है, दीवानगी की चाहत है, वह इमोशनल प्रेम में जो पगला जाते हैं, एक प्रकार का एक्साइटमेंट, मजनू बने घूम रहे हैं, वे एक्साइटेड हैं। कोई भी एक्साइटमेंट कितनी देर तक टिक सकता है। सजगतापूर्वक एक्साइटमेंट का आग्रह विदा करो, शांति के साथ नाता जोड़ो।

ऐसे शांत, प्रेमल व्यक्ति को जरूरी नहीं कि संसार में लोग समझ भी पाएं कि वह प्रेमपूर्ण है। कई बार तो लगेगा कि ये व्यक्ति तो बिल्कुल ही उपेक्षापूर्ण है, अलग, क्योंकि कोई उत्तेजना नहीं है। इसलिए एक विचित्र घटना घटी है; दुनिया में जो सच्चे प्रेमी हुए हैं, सचमुच में प्रेम से जो लबालब हुए हैं उनको लोगों ने प्रेमपूर्ण समझा ही नहीं। क्योंकि उनके भीतर कोई उत्तेजना नहीं थी। न उनके भीतर उत्तेजना थी और न उनके पास आकर किसी को उत्तेजना पैदा हुई। और लोग इस फिराक में घूम रहे हैं कि उत्तेजना पैदा हो। तो जरूरी नहीं कि ऐसे व्यक्ति के पास पहुंचकर हमें अच्छा लगे। उत्तेजना की चाहत को विदा करो और तुम अपने भीतर उस शांत, शीतल प्रेम में डुबकी लगाने लगोगे। चलो अब लतीफे पर समापन करें–

महिला– 'अच्छे तंदरुस्त और मजबूत नजर आते हो कहीं काम धाम क्यों नहीं करते?'

भिखारी– 'आप भी इतनी सुंदर नजर आती हैं कहीं फिल्मों में हीरोइन क्यों नहीं बन

जातीं?' ऐसा सुनते ही महिला ने भिखारी को सौ का नोट दे दिया।

पत्नी ने पूछा– 'सभी स्कूलों के सामने बोर्ड लगा रहता है कि सावधान, गाड़ी धीमी चलाएं। मगर इस गर्ल्स कालेज के सामने सूचना क्यों नहीं लिखी?' चंदूलाल बाला– 'इसकी जरूरत नहीं। यहां से गुजरने वालों की कार अपने–आप धीमी हो जाती है।'

शुभ रात्रि।

3

प्रेम प्रवाह में दो अवरोध

एक मित्र ने पूछा है कि सारी दुनिया में प्रेम की इतनी चर्चा है। सभी चाहते हैं कि वे प्रेमपूर्वक जिएं फिर भी प्रेम इतना कम क्यों दिखाई देता है?

यह एक महत्त्वपूर्ण सवाल है। जो बिल्कुल सहज, स्वाभाविक एवं प्राकृतिक होना चाहिए उसके दर्शन मुश्किल हो गए हैं। जरूर हमने ऐसा कुछ इंतजाम किया है कि जीवन में प्रेम का प्रवाह नहीं हो पाता। सूरज उगता है लेकिन हमने अपने द्वार-दरवाजे बंद कर रखे हैं, हमारे घर में अंधेरा ही रह जाता है। फिर जब हम अंधेरे से परेशान हो जाते हैं और हम जो सवाल पूछते हैं कि प्रेम कैसे पैदा हो, यह करीब-करीब ऐसा है कि सूरज को कैसे उगाएं। और चूंकि हमने प्रश्न ही गलत पूछा है इसलिए उसका जो कुछ भी उत्तर दिया जाएगा, बिल्कुल ही गलत होगा।

सूरज को उगाने की कोई तरकीब नहीं है, ठीक वैसे ही प्रेम को जन्माने की कोई तरकीब नहीं है। जो लोग भी प्रेम की साधना करने चलते हैं वे किसी विधि के द्वारा प्रेम पैदा करने की कोशिश करते हैं जो कि बिल्कुल असंभव है। ऐसा नहीं हो सकता। जब हम प्रेम को पैदा करने की कोशिश करते हैं तब हम एक कुशल अभिनेता बन जाते हैं बस। प्रेम तो पैदा नहीं होता, हम पाखण्डी हो जाते हैं बस। हम वह प्रदर्शित करना शुरू कर देते हैं जो नहीं है।

ये और भी खतरनाक स्थिति हो जाती है। इससे बेहतर तो यही था कि हमको पता था कि हमारे भीतर प्रेम नहीं है। कम से कम एक पीड़ा थी, एक कसक थी, उस तरफ जाने की जिज्ञासा थी। लेकिन जब हम प्रेम का प्रदर्शन करने लगे, पाखण्डी हो गए, हमारा व्यवहार ऊपर-ऊपर से

प्रेमपूर्ण दिखने लगा, अब वह प्यास भी न रही। हम इस झूठ से तृप्त हो गए। वास्तविक प्यास तो नहीं बुझी और एक झूठी तृप्ति का एहसास हो गया। अब तो यात्रा ही बंद हो गई।

तो प्यारे मित्रों, आज के सत्र में मैं इस बात पर थोड़ी सी चर्चा करना चाहूंगा कि प्रेम सीधा-सीधा पैदा नहीं किया जा सकता। हम जो भी करेंगे वह क्रियाकाण्ड और अभिनय होगा। सावधान! हम पाखण्डी हो जाएंगे, प्रेमपूर्ण नहीं हो पाएंगे। फिर आप पूछेंगे कि क्या हम कुछ भी नहीं कर सकते। डायरेक्ट कुछ नहीं कर सकते लेकिन इनडायरेक्ट, परोक्ष रूप से कुछ किया जा सकता है। जैसे मैंने उदाहरण दिया कि सूरज को तो नहीं उगाया जा सकता, किन्तु अगर अपनी खिड़की, द्वार-दरवाजे खोलें, अपने पर्दे खिसकाएं, हम आंख खोलकर प्रतीक्षा करें तो निश्चित ही सुबह होगी और सूरज आएगा।

तो पॉजिटिवली हम सूरज को उगाने के लिए कुछ नहीं कर सकते। लेकिन हमने जो उपाय कर रखे हैं जिससे सूरज के साथ हमारा संबंध नहीं जुड़ पाता, उनको तो हम ही दूर कर पाएंगे। सूरज आकर हमारी खिड़की नहीं खोलेगा, हमारे पर्दे नहीं खिसकाएगा और अगर हम सो रहे हैं तो सूरज आकर हमें नहीं जगाएगा। यह हमें स्वयं ही करना होगा। तो सीधा-सीधा प्रेम तो हम नहीं पैदा कर सकते लेकिन प्रेम के रास्ते में क्या-क्या अवरोध, बाधाएं हमने खड़ी की हैं, चाहे जानबूझकर, चाहे अनजाने में समाज ने, शिक्षा ने हमें वैसा संस्कारित किया है, उन अवरोधों को हटाना, इतना किया जा सकता है।

तो प्रेम तो सहज और प्राकृतिक है। सूरज तो माना कि कभी-कभी उगता है और फिर डूब भी जाता है, कभी दिन कभी रात होती है लेकिन प्रेम के मामले में ऐसा नहीं है। दिन और रात प्रेम का प्रकाश सर्वत्र छाया हुआ है। लेकिन हमने किस प्रकार, कौन-कौन सी खिड़की, दरवाजे बंद किए हैं ये हमें समझना होगा और समझपूर्वक इसे खोलना होगा। निश्चित ही प्रेम की हवाएं, प्रेम की किरणें, प्रेम की सुगंध हमारे हृदय कक्ष में भी भर जाएगी।

इन थोड़ी सी बातों पर आपका ख्याल लाना चाहूंगा।

इसके पहले तक आपने जो समाधियां की हैं उन सबमें कोई डायरेक्ट टेकनीक थी। ओंकार नाद कैसे सुनना है यह एक विधि है। यह विधि कोई भी पूरी कर लेगा तो उसको ओंकार नाद सुनाई देने लगेगा। भीतर का आलोक कैसे देखा जाता है, उसकी एक विधि है। उस विधि को आप पूरी कर लें तो आपको आलोक दिखने लगेगा। बिल्कुल टेकनिकल काम है, वैज्ञानिक तरीका है कि ऐसा-ऐसा करने पर इसका ऐसा परिणाम आएगा, इसका कोई अपवाद नहीं हो सकता। दिव्य सुगंध, कि दिव्य स्वाद एक विधि है, वह विधि पूरी कर ली जाए तो उसका वैसा ही परिणाम बिल्कुल सुनिश्चित है, होगा ही होगा। लेकिन प्रेम समाधि में ऐसा नहीं है, इसकी कोई डायरेक्ट विधि नहीं है।

आपको बड़ी सावधानीपूर्वक यह समझना होगा कि इनडायरेक्ट रास्ते में हमने कौन-कौन सी अटकलें लगा रखी हैं। सजगतापूर्वक उन्हें हटाना होगा। यह समाधि अन्य समाधियों की तुलना में थोड़ी भिन्न है। आप करते रहेंगे और पांच दिन में उसकी विधि सीख जाएंगे। ऐसे प्रेम पैदा हो जाएगा तो आप अभिनेता या अभिनेत्री बन जाएंगे। नहीं, यह तो और भी खतरनाक होगा! आप और ज्यादा झूठे और पाखण्डी हो जाएंगे। ऐसी कोई विधि नहीं है।

हमारे समाज ने संस्कार भर दिया है, उनका सम्मान नहीं है। बातें जरूर करते हैं प्रेम की लेकिन हम सब ढोंगी हैं। उदाहरण के लिए प्रतियोगिता, प्रतिष्ठा, क्लास में फर्स्ट आना। हम कहते जरूर हैं कि ये हमारे क्लासमेट हैं, क्लासफेलो हैं, हमारे मित्र हैं लेकिन इन्हीं मित्रों को तो पीछे पछाड़ना है। इन्हीं के आगे निकलना है। क्लास में पचास बच्चे हैं उसमें से एक ही प्रथम आ सकता है, बाकी के उनचास को पीछे ही आना होगा, और कोई उपाय नहीं है। यही असली दुश्मन हैं जिनको हम दोस्त कह रहे हैं। प्रवंचनापूर्ण शब्द, दोस्त... लेकिन दोस्त हो नहीं पाए।

प्रशिक्षण लेकर फिर हम बाहर निकले, फिर भी आगे बढ़ना है, दूसरों से ज्यादा सुंदर होना है, दूसरों से ज्यादा बड़ा मकान हो। अर्थात् जिन्हें हम पहचानते हैं वे सभी अनजाने में दुश्मन ही हैं। उनकी हार पर ही हमारी जीत निर्भर है। ये दोस्ताना संबंध नहीं है। जो शत्रु हैं वे पहचान में आ गए हैं और बाकी को भविष्य में पहचानना है। सारे शत्रु इकट्ठे मौजूद हैं, ये भला दोस्त कैसे हो सकते हैं! संघर्ष है, इन्हीं से तो आगे निकलना है। ऐसे ही राजनीति में देख लो। चाहे एक ही पार्टी के नेता हों लेकिन एक-दूसरे को पछाड़ने में लगे हुए हैं।

देश की तो छोड़ो, एक छोटी सी संस्था को ही देख लो, उसमें भी राजनीति होती है कि किसकी चलेगी। लगातार एक प्रतिद्वंद्व चलता रहता है। यह जो मानसिकता है इससे किसी के प्रति प्रेमपूर्ण हुआ ही नहीं जा सकता, ये सब घोषित अथवा संभावित शत्रु हैं। जो आज नहीं हैं वे कल हो जाएंगे। हम कहते जरूर हैं कि हम बुद्ध का सम्मान करते हैं कि राम हमारे लिए मर्यादा पुरुषोत्तम हैं, कि महावीर के हम पुजारी हैं लेकिन वास्तव में बुद्ध, महावीर और राम की पूजा करके हम एक बहुत कुरूप सत्य को ढांकते हैं। वास्तव में हम सिकंदर और हिटलर के अनुयायी हैं।

गौर से टटोलना, तुम क्या बनना चाहते हो। तुम्हारी कामनाएं हिटलर और सिकंदर जैसी हैं! और शायद इस कुरूप तथ्य को ढांकने के लिए बुद्ध की मूर्ति के आगे दीया जलाते हो, महावीर के गीत गाते हो और नानक के शबद पढ़ते हो। नानक जैसा हमारे भीतर कुछ भी नहीं है, राम जैसा हमारे भीतर कुछ भी नहीं है। हां, रावण के सारे गुण मौजूद हैं और रावण की हम निंदा करते हैं। उसकी मूर्ति को हम जलाते हैं दशहरा में।

राम की हम पूजा करते हैं और राम के कोई भी गुण हमारे भीतर मौजूद नहीं हैं। और हम कतई नहीं चाहेंगे कि हम राम जैसे हों। अगर आपके पिता आपको कहें कि बेटा चौदह साल के लिए वनवास चले जाओ तो आप चले जाओगे? आप पिताजी के ऊपर कोर्ट केस दायर कर दोगे, मुकदमा लगवा दोगे कि ये बुड्ढा सनक गया है, जवान बीवी की बातों में आ गया है, सठिया गया है, मेंटल इलाज किया जाए। राम जैसे कोई भी गुण आप में नहीं हैं और न ही आप चाहते हैं कि ऐसा हो। रावण जैसे सारे गुण हैं।

रावण की क्या खूबी है, वह अपनी पत्नी से तृप्त नहीं है और अन्य सबकी पत्नियों पर उसकी नजर है। गौर से टटोलना, दूसरों की बीवियों पर नजर है और उनको हड़पने की कोशिश कर रहे हो। आप सीता हरण ही कर रहे हो चाहे कितना ही अच्छा उसको नाम दे दो। कुल मिलाकर कोशिश यही है कि दूसरे की बीवी उठा लाओ। ये अलग बात थी कि रावण शक्तिशाली था, उस काम को करने में सफल हो गया लेकिन आप कर नहीं पा रहे हो।

अगर आपके पास भी शक्ति होती तो आपने भी ढेर लगा लिया होता, बीवियों का। ठीक है मजबूरी है कि खर्चा निकालना मुश्किल है लेकिन अगर आप अमीर होते तो निश्चित ही बड़ा महल होता, दर्जनों बीवियां होतीं। एक बार मैं हवाईजहाज में सफर कर रहा था। उसमें एक व्यक्ति की चालीस बीवियां थीं, सबको साथ लेकर जा रहा था कहीं घूमने। वह संपन्न है, याद रखना। हमारी मेंटलिटी अलग नहीं है, हमारी उतनी औकात नहीं है, चालीस बीवियों को पालने की। अगर होती तो हम भी कर लेते। हमारी दृष्टि तो वही है।

तो गौर करना, रावण जैसे हो कि राम जैसे? कहते हैं कि रावण ने सोने की लंका बसा ली थी, इतनी समृद्धि पैदा कर ली थी। क्या हमारे भीतर भी समृद्धि पैदा करने की कामना है?... तो फिर हम भी रावण हैं। क्या हम भी सोने की लंका बसाने की कोशिश नहीं करते हैं? नहीं सफल हो पा रहे हैं ये अलग बात है, कामना तो हमारी वही है। हमारे पास समझ नहीं है, बुद्धि नहीं है, सामर्थ्य नहीं है। कामना तो हमारी वही है कि खूब संपन्नता आ जाए, पैसों का ढेर लग जाए। किसी भी विधि धन ही धन आता जाए।

इस बात पर गौर करना कि हम हिटलर के शिष्य हैं, माओ के शिष्य हैं कि महावीर के। और आप पाओगे कि हमारी सारी पूजा झूठी है। और इसी कुरूप सत्य को ढांकने के लिए हम फूल चढ़ाते हैं बुद्ध की मूर्ति पर।

मुझे याद आता है कि बचपन में मुझे किसी भी खेल में रुचि नहीं थी, मैंने कभी कोई खेल नहीं खेला। तो शुरुआत में तो इस बात का एहसास नहीं होता था। थोड़ा बड़ा हुआ तो समझ में आया कि अन्य लोगों को खेल में कितनी रुचि है। कोई फुटबाल का शौकीन है, कोई क्रिकेट का शौकीन है, कोई बैडमिंटन का दीवाना है, कोई टेबल टेनिस का दीवाना है। न मैंने ये खेल कभी खेले, न खड़े होकर देखे, न आज तक टी.वी. में कोई मैच देखा। मुझे अभी भी नहीं पता कि क्रिकेट का खेल कैसा होता है।

फिर मैंने एक बार विश्लेषण किया कि ऐसा क्यों है, मुझे क्यों रुचि नहीं है किसी भी खेल में और लोग इतने दीवाने हैं। बहुत बाद में समझ में आया कि मेरे भीतर जीतने की आकांक्षा नहीं है। अगर दौड़ में मजा आता है तो मैं अकेले ही दौड़ लूंगा। फुटबाल के पीछे दौड़कर दूसरों को क्यों हराना। अगर दौड़ में मजा है तो दौड़ने का मजा तो अकेले भी लिया जा सकता है, दूसरों से प्रतियोगिता का क्या संबंध। अगर पैदल चलने में मजा आ रहा है तो यूं ही चल लूंगा, तैरने में मजा है तो अकेले ही तैर लूंगा।

मुझे पतंग उड़ाने में मजा आता था तो अक्सर चांदनी रात में पतंग उड़ाता था जिससे दूर तक दिखाई दे। पतंग के दांव-पेच लड़ाना, दूसरों की पतंग काटना, यह बात मेरी समझ में नहीं आई कि लोग इसलिए पतंग क्यों उड़ाते हैं । फिर मैंने युवावस्था में भी वही बात गौर की कि जो लोग प्रेम कर रहे हैं इनके प्रेम में भी प्रेम में रुचि कम, जीतने में ज्यादा है। अपने चारों तरफ गौर करना कि जो लोग अपने आपको बहुत बड़ा प्रेमी कह रहे हैं उनका वास्तविक रस जीतने में है। जब एक स्त्री समर्पित हो जाती है किसी पुरुष के प्रति, तब पुरुष का उसमें से सारा रस खत्म हो जाता है क्योंकि जीत हो गई, अब क्या करें।

सिंकदर आक्रमण करने गया और देश को जीत लिया, अब क्या करेगा। स्वभावतः

वह आगे बढ़ेगा और दूसरे राज्यों पर आक्रमण करेगा। इसलिए महिलाओं को भी पता है कि पूर्ण समर्पण नहीं करना है। नहीं तो ये सज्जन पलटकर दुबारा देखने वाले भी नहीं, इनकी नजर और कहीं जाने लगेगी। पत्नी में क्यों इंटरेस्ट नहीं है, क्योंकि पत्नी जीत ली गई है। इसलिए पड़ोसन पर नजर पड़ रही है, क्योंकि अभी वह जीती नहीं गई है। पड़ोसन को भी पता है कि जल्दी सरेंडर नहीं होना है, देर लगानी है। होना उसको भी है लेकिन वह भी साइकोलॉजिकल ट्रिक को समझ गई है। ये पुरुष जैसे ही जीत जाएगा उसका इंटरेस्ट समाप्त हो जाएगा।

एक बार अपनी विजय पताखा फहरा दी कि ये राज्य हमारा है अब आगे बढ़ें। वहीं थोड़े ही खड़े रहना है। यह तो अहंकार का दांव–पेंच हो गया, इसमें प्रेम कहां रहा। यह जो प्रतियोगिता की, जीत की, दूसरों से आगे निकलने की बात बचपन से हमें सिखाई गई है, वह हर क्षेत्र में लागू हो गई। यहां तक कि हम जिसको प्रेम–मोहब्बत कहते हैं, उसमें भी लागू हो गई। और परिणाम यह हुआ कि प्रेम जैसे सुंदर शब्द की आड़ में वह कुरूप अहंकार ही खड़ा है और यह प्रेम भी एक प्रकार की हिंसा है, दूसरों को परास्त करने का उपाय है कि उसको हराना है।

दो–तीन साल पहले एक युवक आया था। अपनी दुखद कहानी सुनाते–सुनाते उसने बताया कि उसकी अब तक छब्बीस गर्लफ्रेंड्स हो चुकी हैं। मैंने कहा कि सत्ताइसवीं पर भी नजर पड़ ही गई होगी। क्या चल रहा है मामला? उसने कहा कि स्वामी जी आप तो अंतर्यामी हैं। बिल्कुल ठीक पकड़ा आपने, अभी एक के पीछे पड़ा ही हूं मैं। देखा शब्द 'पीछे पड़ा'। जैसे किसी पर हमला कर रहे हों, अटैक कर रहे हों। मैंने कहा कि इस कहानी की शुरुआत कैसे हुई? उसने कहा कि मेरा एक दोस्त है, उसकी पचास से ज्यादा प्रेमिकाएं हैं, वह हमेशा अपने आपको बहुत सुपीरियर बताता है। मैं उसको नीचा दिखा के रहूंगा।

मैंने कहा अब पूरी कहानी समझ में आ गई। तुम्हें इन छब्बीस से भी कोई मतलब नहीं, तुम्हें किसी से भी कोई मतलब नहीं है। तुम्हें अपने दोस्त से कंपीटीशन है। जब तक तुम उस गिनती को पार न कर जाओगे, तुम्हें तसल्ली नहीं होगी। और उसके पहले वह बहुत सुना रहा था कि मैं बहुत प्रेमपूर्ण हूं। फिर मैंने कहा कि तुम एक बार गौर से देखो तो कि तुम प्रेमपूर्ण नहीं हो, तुम्हें एक से भी प्रेम नहीं हुआ। ये सब तुम्हारे प्रेम के आभूषण हैं। तुम्हें गिनती से प्रेम है, किसी भी स्त्री से प्रेम नहीं है।

अगर स्त्री से प्रेम होता तो एक से भी प्रेम पर्याप्त था। तुम्हें स्त्री से कुछ लेना–देना नहीं है, तुम्हें अपनी गिनती बढ़ानी है। पहले तो वह नहीं माना, फिर मैंने कहा कि तुम पांच मिनट चुप–चाप बैठो और अच्छे से टटोलो, निरीक्षण करो। फिर पांच मिनट बाद उसने कहा कि आप ठीक ही कह रहे हैं, मुझे किसी लड़की से कुछ लेना–देना नहीं है, मुझे तो बस अपने दोस्त को नीचा दिखाना था। वो अपने आपको क्या समझता है, बहुत स्मार्ट? मैं उससे ज्यादा स्मार्ट हूं, उससे ज्यादा अमीर हूं, उसको पछाड़कर ही रहूंगा।

क्या इस प्रेम को प्रेम कहा जाएगा? यह तो एक प्रकार की हिंसा और प्रतियोगिता से उत्पन्न हुआ है, इसका तो बीज ही कड़वा और जहरीला है, इसका फल सुखदायी कैसे हो

सकता है। फिर वह युवक जो अपनी दुखद कहानी सुना रहा था, बात साफ हो गई कि क्यों इतनी जटिलताएं और दुख उत्पन्न हो रहे हैं। वह तो होने ही वाले हैं। बीज ही कड़वा है तो फल मीठा कैसे हो सकता है?

कुछ दिनों पहले एक सज्जन पूछ रहे थे कि महाजीवन करने से क्या फायदा है? मैंने कहा कि देखो यहां तीन साल से चल रहा है महाजीवन प्रज्ञा। मुझे कुल एक ही चीज नजर आती है जिसमें लोग सदुपयोग करते हैं महाजीवन के ज्ञान का। और वह है जिस स्त्री से उन्हें प्रेम है अब वह किसी और की बीवी है। अभी तक वे गाना गा रहे थे कि कभी–कभी मेरे दिल में ख्याल आता है, मैं जानता हूं कि तू गैर है मगर फिर भी। अब इसके बाद वे ऐसा नहीं कहते।

महाजीवन करने के बाद अब वे कहते हैं कि पिछले जन्म में तू मेरी बीवी थी, उसके पिछले जन्म में भी हम संग–साथ थे। पीछे की पूरी कहानी याद करते हैं और वह महिला भी तुरंत मानने को तैयार हो जाएगी क्योंकि इससे उसकी गिल्ट फीलिंग खत्म हो जाएगी। ये विचित्र खेल मैं देख रहा हूं महाजीवन प्रज्ञा करने वालों का। कुल मिलाकर एक ही उपयोग है उनका कि वह स्त्री–पुरुष बिना अपराध भाव के अब अपना संबंध जोड़ सकें। दोनों गिल्ट फीलिंग से मुक्त हो गए। ये तो जन्म–जन्म के पति–पत्नी हैं।

कितने जन्मों की कहानी आ गई। हम तुम युग–युग से गीत मिलन के गाते रहे हैं, और इस जन्म के पति–पत्नी जो हैं ये तो दुश्मन हैं। ये तो बीच में पता नहीं कहां से टपक आए– विलेन। हटाओ इनको रास्ते से और अपना जनम–जनम का नाता, सौ–सौ बार मैंने जनम लिया। ये बीच में पता नहीं कौन टपक आए। अपराध बोध से मुक्ति मिल जाती है और वैसे विजन दिखाई दे जाते हैं क्योंकि वो विजन रिलीविंग हैं, याद रखना। वह विजन इनको गिल्ट फीलिंग से मुक्त कर देंगे, इस प्रकार के सपने पैदा हो जाएंगे। ये करना तो वही चाह रहे थे लेकिन लॉजिकल बेस नहीं मिल रहा था।

भीतर के अंतःकरण से एक आवाज आ रही थी कि कुछ गलत तो नहीं हो रहा, अब अंतःकरण बिल्कुल चुप हो जाएगा कि यह तो बिल्कुल ठीक है जो कर रहे हैं। अच्छा हुआ देवी मिल गईं। सौ जन्मों के बाद इस जन्म में बिछुड़ना हो गया था। लेकिन सच्चे प्रेमी तो एक–दूसरे को ढूंढ़ ही लेते हैं, हमने भी ढूंढ़ लिया। वो देवी बिल्कुल अपराधबोध से मुक्त, उनको भी नहीं लगेगा कि कुछ गलत कर रहे हैं। बल्कि अभी जो उनके पतिदेव बैठे हैं वो गलत आदमी हैं, वे बीच में टपक आये। हमारी सौ जनम की कहानी में बीच में टांग अड़ाई, इसकी टांग तोड़ी जाए।

सावधान! धर्म के नाम पर, अध्यात्म के नाम पर, पिछले जन्मों की कहानी के नाम पर जो कर रहे हैं, गौर से टटोलना कि क्या वास्तव में उसमें प्रेम है या अहंकार की चाल? एक बार यह समझ में आ जाए तब हम इस चाल को जो संघर्ष में, लड़ाई में उत्सुक है, जीतने में उत्सुक है, तब हम इस बाधा को हटा सकेंगे। और वह सहज प्रेम का प्रवाह जो होना चाहिए वह हो सकेगा। तो मैं आपसे यह नहीं कह रहा हूं कि प्रेम कैसे पैदा हो जाए, सूरज कैसे उग आए। मैं कह रहा हूं कि दरवाजा कैसे खुले।

ये जो दरवाजा बंद है, इस पर अहंकार का ताला लगा हुआ है और इस दरवाजे का नाम है प्रथम होने की दौड़। जब तक हम इस दौड़ में लगे हैं दूसरे को हराने की कोशिश में, दूसरे के सिर पर चढ़ने की कोशिश में, आधिपत्य जमाने की कोशिश में, तब तक प्रेम नहीं हो सकता। और ऐसा भी नहीं हो सकता कि आप जिस दुकान में, ऑफिस में, संस्था में, फैक्ट्री में काम कर रहे हैं वहां आप सबके साथ संघर्षपूर्ण हैं, सबको दबाने की, कुचलने की कोशिश कर रहे हैं, वहां पावर पॉलिटिक्स का गेम चल रहा है और घर में आप अपने पति-पत्नी के साथ, बच्चों के साथ प्रेमपूर्ण होंगे, ऐसा नहीं हो सकता।

आपकी जीवनशैली खतरनाक ढंग की है। घर में आप घंटा-दो घंटा जो प्रेम दिखा रहे हैं वह कोरा अभिनय ही होगा, आपका असली रूप वहां प्रकट हो रहा है जहां आप काम कर रहे हैं। वहां आपका सबसे संघर्ष है, सबसे लड़ाई है। सबको अपने मनमुताबिक चलाने की कोशिश है। जब आप दस-पांच मिनट को किसी से दोस्ताना बातें करते हैं ये शंकास्पद है, ये सही हो ही नहीं सकता। जिस व्यक्ति के अंदर प्रेमपूर्ण हृदय है, वह कहीं भी हो, वह सर्वत्र वैसा ही प्रेमपूर्ण होगा। ऐसा थोड़े ही है कि अचानक वह व्यक्ति बदल जाएगा।

एक जगह बहुत हिंसक है, राजनीतिज्ञ है, कूटनीति कर रहा है, चुगली कर रहा है, बदमाशी, नीचे गिराने की कोशिश, निंदा, आलोचना और दूसरी तरफ अचानक दिव्य प्रेम से ओतप्रोत हो गया, ऐसा कैसे होगा! अगर उसके अंदर प्रेम होगा तो सभी जगह होगा। जहां भी वह होगा, प्रेम भी उसके साथ होगा। और अगर वह संघर्षशील है, लड़ाकू है तो वह जहां भी होगा वहीं लड़ाई होगी। अगर वह प्रेमपूर्ण होना दिखा रहा है तो वह केवल दिखावा ही होगा, वास्तविक नहीं हो सकता।

तो दूसरी बात महत्त्वपूर्ण है। प्रेम के नाम पर जो चल रहा है अपने भीतर उसको गौर से टटोलना। याद रखना, अगर आपको अपने बारे में सही-सही जानकारी नहीं है तो आपकी पूरी जिंदगी यूं ही व्यर्थ चली जाएगी। अच्छे से, एक आलोचक दृष्टि के साथ अपने भीतर टटोलना कि आप जिसे प्रेम कहते हैं, क्या वह सचमुच में प्रेम है या कुछ चालबाजी है, दिखावा है। किसी से अगर कुछ लेना है तो उसे कुछ तो देना पड़ेगा ऐसा व्यवसाय है, गौर से टटोलना। माना कि बहुत पीड़ा होगी यह जानकर कि मेरे भीतर प्रेम नहीं है किन्तु यही टर्निंग प्वाइंट होगा। तभी आप द्वार-दरवाजे खोलने को तैयार होंगे।

अगर आप इस भ्रम में हैं कि मैं तो ऑलरेडी बहुत प्रेमपूर्ण हूं, छब्बीस प्रेमिकाओं को प्रेम कर चुका हूं, महाप्रेमी, मुझसे बड़ा मजनू और कौन होगा, फिर आप पागल होने की दिशा में जा रहे हैं। यह जो मिथ्या प्रेम है यह वास्तविक प्रेम को आने ही नहीं देगा। दुनिया का एक नियम है, झूठे सिक्के वास्तविक सिक्के को प्रचलन से बाहर कर देते हैं। अगर आपकी जेब में हजार रुपए का एक नकली नोट पड़ा है और एक असली नोट पड़ा है तो आपकी पहली कोशिश होगी कि पहले नकली नोट को चला दें। असली वाला तो बाद में कभी भी चल जाएगा, नकली वाले को पहले चला दें। और जिसके पास भी जाएगा वह भी उसी को पहले चलाने की कोशिश करेगा।

इस प्रकार से बाजार में नकली नोटों की भरमार हो जाती है और असली नोट

तिजोरियों में छुप जाते हैं। ठीक वैसे ही वास्तविक प्रेम प्रचलन के बाहर हो जाता है और ये जो झूठा प्रेम है यह समाज में बड़ी तेजी से चल रहा है। इसके प्रति सचेत होना होगा। निश्चित ही डर भी लगेगा। अपने पिछले जीवन को देखकर दुख भी होगा लेकिन यह दुख आपको वास्तविक प्रेम की खोज की प्रेरणा देगा । अगर हम इस भ्रम में पड़े रहे कि हमको तो प्रेम आता ही है तो फिर हमें सच्चा प्रेम कभी भी नहीं मिल पाएगा। पूरी जिंदगी यूं ही झूठ–झूठ में बीत जाएगी।

तो आज मैंने दो बिन्दु कहे जो दरवाजे बनकर सूरज की रोशनी को आने से रोक रहे हैं। प्रथम होने की दौड़, प्रतिस्पर्धा, जीत की आकांक्षा, अहंकार– ये सबसे बड़ा अवरोध और दूसरा बड़ा अवरोध है मिथ्या प्रेम को, झूठे पाखण्ड को ही सच समझ लेना। फिर सच की प्यास ही नहीं पैदा होगी। अपने को भीतर ठीक से टटोलना। मैंने सुना है कि एक दिन मुल्ला और उसका एक दोस्त कवायतघर में बैठे चाय पी रहे थे और दुनिया और इश्क के बारे में बातें कर रहे थे। दोस्त ने मुल्ला से पूछा– 'मुल्ला! तुम्हारी शादी क्यों नहीं हुई?'

मुल्ला ने कहा– 'यार, मैं तुमसे झूठ नहीं बोलूँगा। मैंने अपनी जवानी सबसे अच्छी औरत की खोज में बिता दी। काहिरा में मैं एक खूबसूरत और अक्लमंद औरत से मिला जिसकी आँखें जैतून की तरह गहरी थीं लेकिन वह नेकदिल नहीं थी। फिर बग़दाद में भी मैं एक औरत से मिला जो बहुत खुशदिल और सलीकेदार थी लेकिन हम दोनों के शौक बहुत जुदा थे। एक के बाद दूसरी, ऐसी कई औरतों से मैं मिला लेकिन हर किसी में कोई न कोई कमी पाता था। और फिर एक दिन मुझे वह मिली जिसकी मुझे तलाश थी। वह सुन्दर थी, अक्लमंद थी, नेकदिल थी और सलीकेदार भी थी। हम दोनों में बहुत कुछ मिलता था। मैं तो कहूँगा कि वह पूरी कायनात में मेरे लिए ही बनी थी।' दोस्त ने मुल्ला को टोकते हुए कहा– 'अच्छा! फिर क्या हुआ? तुमने उससे शादी कर ली!'

मुल्ला ने ख्यालों में खोए हुए चाय की एक चुस्की ली और कहा– 'नहीं दोस्त! वो तो दुनिया के सबसे अच्छे मर्द की तलाश में थी। वह भी मेरे जैसी ही घमंडी थी। थोड़े दिन पहले मुझे खबर लगी कि वह भी अभी तक कुंवारी है।'

अहंकारी व्यक्ति प्रेम नहीं कर सकता। वह अगर किसी से संबंधित भी होता है तो कुछ कारण से। वह स्वार्थ की वजह से प्रेम का दिखावा करता है, वस्तुतः प्रेम नहीं करता। सारी दुनिया में इसी प्रकार चल रहा है– अहंकार, दिखावा, औपचारिकता, झूठ का खेल। मुल्ला नसरुद्दीन की दावत की कहानी सुनो। खुशी की बात यह है की मुल्ला नसरुद्दीन खुद हमें यह कहानी सुना रहे हैंः–

'एक दिन ऐसा हुआ कि किसी ने किसी से कुछ कहा, उसने किसी और से कुछ कहा और इसी कुछ–के–कुछ के चक्कर में ऐसा कुछ हो गया कि सब ओर यह बात फैल गई कि मैं बहुत ख़ास आदमी हूँ। जब बात हद से भी ज्यादा फैल गई तो मुझे पास के शहर में एक दावत में खास मेहमान के तौर पर बुलाया गया। मुझे तो दावत का न्योता पाकर बड़ी हैरत हुई। खैर, खाने–पीने के मामले में मैं कोई तकल्लुफ़ नहीं रखता, इसलिए तय समय पर मैं दावतखाने पहुँच गया। अपने रोज़मर्रा के जिस लिबास में मैं रहता हूँ, उसी लिबास को

पहनकर दिनभर सड़कों की धूल फांकते हुए मैं वहां पहुंचा था। मुझे रास्ते में रुककर कहीं पर थोड़ा साफ–सुथरा हो लेना चाहिए था लेकिन मैंने उसे तवज्जो नहीं दी। जब मैं वहां पहुंचा तो दरबान ने मुझे भीतर जाने से मना कर दिया।

लेकिन मैं तो नसरुद्दीन हूँ! मैं दावत का खास मेहमान हूँ!'

'वो तो मैं देख ही रहा हूँ'– दरबान हंसते हुए बोला। वह मेरी तरफ झुका और धीरे से बोला– 'और मैं खलीफा हूँ।' यह सुनकर उसके बाकी दरबान दोस्त जोरों से हंस पड़े। फिर वे बोले– 'दफा हो जाओ बड़े मियां, और यहाँ दोबारा मत आना!'

कुछ सोचकर मैं वहां से चल दिया। दावतखाना शहर के चौराहे पर था और उससे थोड़ी दूरी पर मेरे एक दोस्त का घर था। मैं अपने दोस्त के घर गया।

'नसरुद्दीन! तुम यहाँ!'– दोस्त ने मुझे गले से लगाया और हमने साथ बैठकर इस मुलाकात के लिए अल्लाह का शुक्र अदा किया। फिर मैं काम की बात पर आ गया।

'तुम्हें वो लाल कढ़ाईदार शेरवानी याद है जो तुम मुझे पिछले साल तोहफे में देना चाहते थे?'– मैंने दोस्त से पूछा।

'बेशक! वह अभी भी अलमारी में टंगी हुई तुम्हारा इंतजार कर रही है। तुम्हें वह चाहिए?'

'हाँ, मैं तुम्हारा अहसानमंद हूँ। लेकिन क्या तुम उसे कभी मुझसे वापस मांगोगे?' – मैंने पूछा।

'नहीं, मियां! जो चीज मैं तुम्हें तोहफे में दे रहा हूँ उसे भला मैं वापस क्यों मांगूंगा?'

'शुक्रिया मेरे दोस्त'– मैं वहां कुछ देर रुका और फिर वह शेरवानी पहनकर वहां से चल दिया। शेरवानी में किया हुआ सोने का बारीक काम और शानदार कढ़ाई देखते ही बनती थी। उसके बटन हाथीदांत के थे और बेल्ट उम्दा चमड़े की। उसे पहनने के बाद मैं खानदानी आदमी लगने लगा था।

दरबानों ने मुझे देखकर सलाम किया और बाइज्जत मुझे दावतखाने ले गए। दस्तरखान बिछा हुआ था और तरह–तरह के लज़ीज़ पकवान अपनी खुशबू फैला रहे थे और बड़े–बड़े ओहदेवाले लोग मेरे लिए ही खड़े हुए इंतजार कर रहे थे। किसी ने मुझे खास मेहमान के लिए लगाई गई कुर्सी पर बैठने को कहा। लोग फुसफुसा रहे थे– 'सबसे बड़े आलिम मुल्ला नसरुद्दीन यही हैं'। मैं बैठा और सारे लोग मेरे बैठने के बाद ही खाने के लिए बैठे।

वे सब मेरी ओर देख रहे थे कि मैं अब क्या करूँगा। खाने से पहले मुझे बेहतरीन शोरबा परोसा गया। वे सब इस इंतजार में थे कि मैं अपना प्याला उठाकर शोरबा चखूँ। मैं शोरबा का प्याला हाथ में लेकर खड़ा हो गया। और फिर एक रस्म के माफिक मैंने शोरबा अपनी शेरवानी पर हर तरफ उड़ेल दिया।

वे सब तो सन्न रह गए! किसी का मुंह खुला रह गया तो किसी की सांस ही थम गई। फिर वे बोले– 'आपने ये क्या किया, हज़रत! आपकी तबियत तो ठीक है!?'

मैंने चुपचाप उनकी बातें सुनीं। उन्होंने जब बोलना बंद कर दिया तो मैंने अपनी शेरवानी से कहा– 'मेरी प्यारी शेरवानी। मुझे उम्मीद है कि तुम्हें यह लज़ीज़ शोरबा बहुत अच्छा लगा

होगा। अब यह बात साबित हो गई है कि यहाँ दावत पर तुम्हें ही बुलाया गया था, मुझे नहीं।'

अहंकार भी वस्त्र से ज्यादा नहीं। लेकिन लोगों को ऊपरी आवरण से मतलब है– बस! प्रसंशा, तारीफ, यश, प्रतिष्ठा की चाहत है। वे उसी को प्रेम समझते हैं। प्रेम के नाम पर झूठे सिक्के प्रचलन में हैं, इसलिए प्रेम के असली सिक्के का इतना अकाल पड़ा है। मैंने सुना है कि एक चालाक आदमी की दो बीवियाँ थीं जो अक्सर उससे पूछा करती थीं कि वह उन दोनों में से किसे ज्यादा चाहता है?

वह हमेशा कहता– 'मैं तुम दोनों को एक समान चाहता हूँ'– लेकिन वे इस पर यकीन नहीं करतीं और बराबर उससे पूछतीं रहतीं– 'हम दोनों में से तुम किसे ज्यादा चाहते हो?' इस सबसे चालाक व्यक्ति हलाकान हो गया। एक दिन उसने अपनी प्रत्येक बीवी को एकांत में एक–एक नीला मोती दे दिया और उनसे कहा कि वे इस मोती के बारे में दूसरी बीवी को हरगिज न बताएं।

और इसके बाद जब कभी उसकी बीवियां उस से पूछतीं– 'हम दोनों में से तुम किसे ज्यादा चाहते हो?' –वह उनसे कहता– 'मैं उसे ज्यादा चाहता हूँ जिसके पास नीला मोती है'। दोनों बीवियां इस उत्तर को सुनकर मन–ही–मन खुश हो जातीं।

अब आप समझे कि सारी दुनिया में प्रेम की इतनी चर्चा है, सभी चाहते हैं कि वे प्रेमपूर्वक जिएं, फिर भी प्रेम इतना कम क्यों दिखाई देता है! नहीं समझे, तो और समझो–

मुल्ला–तलाक की नौबत इसलिए आ गई...कि विवाह के तीन साल बाद एक लड़की आ गई!

चंदूलाल–तो क्या हुआ दोस्त...अरे, लड़की हो कि लड़का, भगवान की मर्जी समझकर उन्हें बराबर नजर से देखना चाहिए।

मुल्ला–मगर जनाब, उस लड़की की उम्र 26 साल है।

एक महिला–अरे गलत अंगुली में अंगूठी क्यों पहन रखी है?

दूसरी महिला–मैंने शादी ही गलत इंसान से जो की है!

क्या आपको पता है कि केवल आपकी ही नहीं, दूसरों की प्रार्थनाओं का भी तो असर होता है। दो प्रिय सहेलियां साथ साथ शंकरजी की पूजा और उपवास करती थीं।

भगवान ने एक दिन प्रसन्न होकर एक–एक वरदान मांगने को कहा। पहली बोली– मुझे दुनिया की सबसे सुंदर स्त्री बना दो।

भगवान के तथास्तु कहते ही वह विश्व सुंदरी बन गई।

दूसरी उसे देख जल–भुन गई। बोली– प्रभु इसे वापिस वैसी ही बदसूरत कर दो।

शंकरजी तथास्तु कहकर अदृश्य हो गए।

चलो, अब हम भी यहां से अदृश्य हो चलें 'शुभ रात्रि' कहकर।

धन्यवाद। शुभ रात्रि।

4

प्रेम में तीन बाधाएं

आज तीन बिन्दुओं पर थोड़ी बात आपसे करूंगा। जो तीन बातें वास्तविक प्रेम के जन्म में बाधाएं पैदा करती हैं, उनमें से पहली चीज है – पसंद। इसी को हम प्रेम समझने लगते हैं। दूसरी महत्त्वपूर्ण बाधा है– मेरापन। अक्सर मोह को ही हम प्रेम कहने लगते हैं। ये दो बातें वस्तुतः प्रेम नहीं हैं किंतु प्रेम जैसी भासती हैं। और तीसरी महत्त्वपूर्ण बाधा है– अपेक्षा। ये तीन बाधाएं हट जाएं तो जीवन में प्रेम का सहज प्रवाह होने लगता है। मगर न जाने कबसे परंपरा चली आ रही है, पसंद को प्रेम समझने की!

परंपरा का नाम आया तो मुल्ला नसरुद्दीन का एक किस्सा याद आया।

कई लोगों की भींड़ में मुल्ला नसरुद्दीन नमाज़ अदा करने के दौरान आगे झुका। उस दिन उसने कुछ ऊंचा कुरता पहना हुआ था। आगे झुकने पर उसका कुरता ऊपर चढ़ गया और उसकी कमर का निचला हिस्सा झलकने लगा।

मुल्ला के पीछे बैठे आदमी को यह देखकर अच्छा नहीं लगा इसलिए उसने मुल्ला के कुरते को थोड़ा नीचे खींच दिया।

मुल्ला ने फौरन अपने आगे बैठे आदमी का कुरता नीचे खींच दिया।

आगेवाले आदमी ने पलटकर मुल्ला से हैरत से पूछा– 'ये क्या करते हो मुल्ला?'

'मुझसे नहीं, पीछेवालों से पूछो'– मुल्ला ने कहा– 'शुरुआत वहां से हुई है'।

मोह को प्रेम समझने की परंपरा भी सदियों से चली आ रही है। पता नहीं कहां से शुरुआत हुई!

पसंद और नापसंद को अगर हम प्रेम और घृणा कहने लगें तो फिर बड़ी गलतफहमी

खड़ी हो जाती है। पसंद या नापसंद, प्रेम या घृणा नहीं है। आपको किसी खास रंग के कपड़े पसंद हैं, किसी खास डिजाइन के जूते पसंद हैं, खास हेयर स्टाइल पसंद है, कोई विशेष खुशबू पसंद है, खाने में कोई सब्जी पसंद है, बैठने के लिए किसी खास प्रकार की कुर्सी पसंद है, कारों में कोई एक मॉडल आपको पसंद है। जहां तक वस्तुओं की बात है वहां तक तो पसंद, नापसंद शब्द उचित है। किन्तु मुश्किल वहां पर खड़ी हो जाती है, जब हम व्यक्तियों को भी उसी तरह से देखते हैं और व्यवहार करते हैं। कोई व्यक्ति हमें पसंद आया किन्हीं कारणों की वजह से और हम उसको प्रेम समझने लगें। अब यहां पर भ्रांति खड़ी हुई। हमको लगेगा कि हम तो प्रेमपूर्ण हैं जबकि यह प्रेम नहीं हुआ।

हमने उस व्यक्ति को उसकी मनुष्यता से घटाकर वस्तु के समान बना दिया। उसमें जो व्यक्ति की महिमा थी, उसे हमने नष्ट कर दिया। हम उससे वस्तु जैसे व्यवहार कर रहे हैं। हमारी पसंद की कसौटी पर अगर वह खरा उतरता है तो हम उससे कहते हैं कि आई लव यू।

वह शॉर्टफार्म अच्छा है 'इलू'... उसके कई मतलब निकलते हैं। अधिकांश तो वासना से भरकर जब हम कहते हैं इलू तो वहां तात्पर्य है आई लस्ट यू, मैं तुम्हें भोगना चाहता हूं। लेकिन ऐसा कहना असभ्य लगेगा इसलिए हम कहते हैं आई लव यू। और पीछे ब्रैकेट में छुपा है कि मैं तुम्हारा भोग करना चाहता हूं।

अधिकांश जगह इलू में लिखा हुआ है आई लाइक यू। लेकिन यह पसंद ठीक वैसी पसंद हुई, जैसी वस्तुओं की पसंद होती है, एक खास डिजाइन का मकान पसंद है।

हमने आदमियों को भी मकान जैसा समझ लिया, कार जैसा, कुर्सी जैसा समझ लिया। छोटी-छोटी चीजें पसंद नापसंद तय करती हैं। व्यक्ति का कोई मूल्य ही नहीं रहा। वस्तु के समान हो गया वह। अर्थात् हमारे लिए यूटीलिटेरियन दृष्टि है उसकी बस। उपयोगिता की दृष्टि से बस हमारे काम का है। इसलिए हम उससे अपना काम निकाल रहे हैं, हम अपना स्वार्थ पूरा कर रहे हैं।

जब आप कहते हैं आई लव माई कार, मुझे कार बहुत पसंद है और वैसे ही यदि आप किसी व्यक्ति के बारे में कह रहे हैं उसी अर्थ में, उसी भावार्थ में तो फिर बड़ी भ्रांति खड़ी हो जाएगी। कार के संबंध में तो ठीक, कार उपयोग के लिए है। लेकिन व्यक्ति के बारे में यह बात उचित नहीं। व्यक्ति का अपने आप में मूल्य है, चाहे उससे हमारा स्वार्थ पूरा होता हो चाहे न होता हो।

उसकी महिमा, उसकी गरिमा, उसकी कीमत अपने आप में है। वह स्वयं चैतन्य से ओत-प्रोत है, उसके जीवन का मालिक वह स्वयं है, उसके जीने का ढंग उसका अपना है। चाहे उससे हमारी इच्छाएं पूरी हों अथवा न हों, तब भी अगर हम प्रेम कर रहे हैं तब तो वास्तविक प्रेम है। और यदि हम उसे केवल वस्तु की तरह, कुर्सी की तरह, कार की तरह, मकान की तरह उपयोग कर रहे हैं, अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए, तब वहां प्रेम नहीं है।

इस भ्रांति से सावधान। पसंद को प्रेम मत समझना! कल मैंने आपसे कहा था प्रशंसा को प्रेम मत समझना, दया को प्रेम नहीं समझना। आज पसंद वाली बात कह रहा हूं। पसंद वस्तुओं के बारे में होती है, व्यक्ति के बारे में नहीं। व्यक्ति का मूल्य स्वयं अपने आप में है।

हमारी पसंद, नापसंद की कसौटी में वह फिट बैठे या न बैठे इससे कोई लेना–देना नहीं। हमारी पसंद नापसंद हमारे मन का हिस्सा है।

हम भारत में पैदा हुए हैं जहां के अधिकांश लोग सांवले रंग के हैं। यहां गोरा रंग सुंदर माना जाएगा। ये सिर्फ मान्यता की बात है, हमारी ऐसी कंडीशनिंग है। जो कम है उसकी कीमत ज्यादा हो गई। अफ्रीका में नीग्रो फिल्म की जो हिरोइन है, जिसके पीछे लाखों लोग दीवाने हैं, उससे शादी करना चाहते हैं, उसे अगर भारत में लाकर खड़ा कर दें तो उसकी तरफ कोई देखना भी पसंद न करेगा। उसके लाखों दीवाने हैं वहां के लोगों में से, क्योंकि उनकी पसंद अलग है।

चाइना में जो शक्ल सुंदर मानी जाती है वो अफ्रीका में सुदर नहीं मानी जाएगी, वह भारत में सुंदर नहीं मानी जाएगी। चाइना में गौतम बुद्ध की मूर्ति जिस प्रकार से बनती है उसे आप देखकर पसंद ही नहीं कर सकते। उसको आप मान ही नहीं सकते कि ये गौतम बुद्ध की मूर्ति है।

बचपन से हमारे संस्कार अलग हैं, इससे उस व्यक्ति का क्या लेना देना। जब हम किसी को प्रेम करते हैं तो हमारे लिए वह व्यक्ति महत्त्वपूर्ण होता है न कि हमारी मानसिक दशा। वह काला है कि गोरा है, लंबा है कि छोटा है ये बातें महत्त्वपूर्ण नहीं होतीं। वह हमारे काम आता है कि नहीं आता है– यह बात महत्त्वपूर्ण नहीं होती।

जब हम व्यक्तियों को उपयोगितावादी दृष्टि से देखते हैं, तब हमने व्यक्ति को घटाकर वस्तु बना दिया। और यही कारण है कि प्रेम संबंधों में इतना संघर्ष, झगड़ा चलता है। कोई भी व्यक्ति वस्तु बनना नहीं चाहता। वह दूसरा व्यक्ति प्रतिरोध करेगा कि तुमने मुझे सामान समझ लिया है क्या। मैं तुम्हारे उपयोग के लिए नहीं हूं।

पति–पत्नी दोनों एक–दूसरे का उपयोग करना चाह रहे हैं। पति पत्नी के शरीर का भोग करना चाह रहा है। पत्नी उपयोग करना चाह रही है पति का मशीन की तरह– सुरक्षा देने वाला, धन कमाने वाला। अगर इस तरह से उपयोग नहीं हुए तो संबंध टूट जाएगा क्योंकि उस व्यक्ति से कोई लेना–देना नहीं है। जो भी व्यक्ति इस चीज की पूर्ति करेगा हम उसकी तरफ आकर्षित हो जाएंगे।

हमें तो उपयोग से मतलब है। सावधान! यह प्रेम नहीं है, इसको पसंद शब्द कहना ज्यादा अच्छा होगा। ठीक है बचपन में हमारे जो संस्कार पड़ गए हैं उसके अनुसार हमारी पसंद नापसंद निर्मित हो गई, लेकिन पसंद को प्रेम का पर्यायवाची नहीं समझना।

दूसरी बात, मैंने कहा अटैचमेंट, मोह। लंबे समय तक हम जिसके साथ एसोसिएटेड रहे, किन्हीं कारणों से उनसे हमारा अटैचमेंट हो जाता है। 'मेरेपन' का भाव जुड़ जाता है कि ये मेरे हैं। यहां पर भी मालकियत की भावना आ गई, हम कब्जा करके बैठ गए। जमीन–जायदाद या मकान पर कब्जा हो तो बात समझ में आती है, हम व्यक्तियों पर भी वैसा ही कब्जा जमाकर बैठते हैं। फिर हम उसको वस्तु जैसा बना देते हैं और तब दूसरी तरफ से प्रतिरोध पैदा होता है।

हम जिसके ऊपर अटैचमेंट का शिकंजा कसकर बैठे हैं, वह तड़प रहा है छूटने के लिए

कि कैसे इस कैद से छुटकारा मिले। इस संबंध में छुटपुट अंश प्रेम का होगा, बाकी का जंजीर से कम नहीं। हमने कैद में बंद कर दिया, ठप्पा लगा दिया 'मेरे' का कि कटघरे से अगर बाहर निकले तो फिर ठीक नहीं। तुम केवल मेरे उपयोग के लिए हो, दूसरे का प्रवेश संभव नहीं।

जैसे मेरी जमीन, मेरा मकान– ठींक वैसे ही हमारे 'मेरे' के संबंध हैं। जैसे ही पता चले कि किसी और का इस पर कब्जा है, प्रेम तुरंत घृणा, दुश्मनी में बदल जाएगा। यह कैसा प्रेम!

मैंने सुना है चंदूलाल के घर में दीवाली की सफाई हो रही थी। पुरानी आलमारियों को साफ करते हुए चंदूलाल के हाथ में एक प्रेमपत्र आ गया जो पत्नी के नाम किसी ने लिखा था, कपड़ों के नीचे छुपा हुआ रखा था। उसके दो मिनट पहले ही चंदूलाल अपनी पत्नी से कह रहा था कि तेरे बिना मैं एक क्षण भी न जी सकूंगा इतना तुझसे प्रेम करता हूं। जैसे ही पत्र पढ़ा उसने कहा कि अब तेरे संग एक क्षण भी न जी सकूंगा, किसने तुझे ये लव लेटर लिखा?

तकलीफ क्या हो गई। जहां कब्जा मानकर रखा था कि सौ परसेंट मेरा अधिकार है, पता चला कि किसी और का भी पजेशन चल रहा है, मोह भंग हो गया।

ब्लड टेस्ट में कई बार पता चल जाता है कि जिसको बाप समझा जा रहा है वह बाप ही नहीं है, बड़ी मुश्किल खड़ी हो जाती है। अगर पता लग जाए तो बाप–बेटे का सारा संबंध खत्म। पच्चीस साल से बाप समझ रहा था कि यह मेरा बेटा है, इसको पाला–पोसा, बड़ा किया, इसके लिए सब प्रकार के इंतजाम किए, आज अचानक संयोग से पता चला कि यह तुम्हारा बेटा हो ही नहीं सकता, सारे संबंध खत्म और दुश्मनी खड़ी। यह कैसा प्रेम है!

जहां तक मालकियत थी, मेरेपन का भाव था वहां तक ठीक, जैसे ही पता चला कि मेरा नहीं, सारा खेल खत्म! मोह को हम प्रेम समझते रहे इतने लंबे समय तक, यह मोह प्रेम नहीं था। अगर प्रेम सचमुच में होता तो आज भी बरकरार होता, इससे क्या फर्क पड़ता है कि किसका बेटा है। किसी न किसी का तो होगा तो क्या हुआ, क्या फर्क पड़ता है। अगर वास्तविक प्रेम होता तो अभी भी रहता।

तीसरी बात जो प्रेम की भ्रांति खड़ी करती है, जो प्रेम में बहुत बड़ा अवरोध है वह है एक्सपेक्टेशन, अपेक्षा। हम व्यक्ति से उम्मीद करते हैं कि वह ऐसा–ऐसा हो, ऐसा–ऐसा करे, ऐसा–ऐसा न करे। हम एक फ्रेम उसको देते हैं कि इस फ्रेम में तुमको फिट होना होगा तो ही हमारे प्रेम के काबिल हो वरना नहीं। इसको कहते हैं कंडीशनल लव।

हमारा प्रेम बहुत शर्तपूर्ण है। ये–ये हमारी कंडीशंस हैं, अगर ये पूरी होंगी तो प्रेम रहेगा अन्यथा नहीं। ठीक इसी प्रकार वह दूसरा व्यक्ति भी अपनी फ्रेम फिट करेगा आपके ऊपर क्योंकि दोनों तरफ से शर्तें होंगी। एक व्यापारिक समझौता जैसा होगा।

एक व्यावसायिक लेन–देन कि आपको मेरे लिए ये–ये करना होगा, मैं आपके लिए ये–ये करूंगा। अगर इसमें जरा भी कहीं से कमी हुई तो सारा प्रेम खत्म। सशर्त प्रेम, जरा सोचें कि क्या ये किसी प्रेम के लक्षण हुए!

जहां तक हमारे मन में अपेक्षाएं हैं वहां तक प्रेम नहीं हो सकता। ये बहुत बड़ा अवरोध है। ये प्रेम को प्रवाहित होने ही नहीं देगा। बीच में दीवार खड़ी हो जाएगी शर्तों की। आप जरा सी शर्तें तोड़कर देखना– जिनके साथ आपके प्रेम के नाते हैं, जहां आप समझते हो कि प्रेम

का नाता है, आप सिर्फ तीन दिन के लिए जरा सी एक शर्त तोड़कर देखना जानबूझकर और आप पाओगे कि सारा मामला खत्म।

कहीं कुछ प्रेम नहीं था, सिर्फ धोखा। जब तक आप वह शर्तें पूरी कर रहे हो तब तक ठीक, जिस दिन आपने शर्तें पूरी करनी बंद कर दीं, उस दिन खेल खत्म। और वैसे ही दूसरी तरफ से भी होगा। दूसरा व्यक्ति अगर अपनी शर्त तोड़ दे तो सारा खेल खत्म।

महात्मा गांधी के बेटे ने उनकी शर्तें तोड़ दीं तो महात्मा गांधी ने घर से निकाल दिया। न केवल घर से निकाल दिया, बल्कि घोषणा भी कर दी कि मेरी अर्थी में कंधा देने नहीं आएगा और मेरा दाहसंस्कार भी नहीं करेगा। और वैसा ही किया गया। महात्मा गांधी की पत्नी ने सोचा कि बेटे से मिल लें तो उनके ऊपर भी शर्त लगा दी कि अगर बेटे से मिलीं तो आज से तुम मेरी पत्नी नहीं, तुम भी घर से बाहर।

कंडीशंस हैं, इन शर्तों के अंदर रहना हो तो रहो वरना 'गेटआउट'। चाहे ये बात हम कहें अथवा न कहें, रिटेन ऑर अनरिटेन, बट देयर आर सो मेनी कंडीशंस। अंजाने में वे शर्तें लगी हुई हैं एक–दूसरे के ऊपर, शिकंजा कसा हुआ है, इससे जरा भी टस से मस नहीं होना वरना हम अपना प्रेम विदड्रॉ कर लेंगे। ये कैसा प्रेम है!... बस जरा सी बात में टूटने के कगार पर ही बैठा है। बिल्कुल कगार पर है, अब टूटे कि तब टूटे।

अक्सर रेल में सफर करता हूं तो बड़ी विचित्र घटनाएं देखने को मिलती हैं। अंजान, अपरिचित लोग बैठे रहते हैं, आठ–दस लोग एक ही डिब्बे में। वे एक–दूसरे से अच्छे से बातचीत करते हैं, काफी दिल खोलकर बात करते हैं, एक साथ चाय पी रहे हैं, बॉक्स खोलकर एक ही साथ नाश्ता कर रहे हैं, गपशप कर रहे हैं, एक–दूसरे से अखबार लेकर पढ़ रहे हैं।

कई बार मैं ऐसी बातें उन अपरिचित लोगों को आपस में करते हुए सुनता हूं जो शायद वे अपने परिवारजनों से अथवा गहरे मित्रों से भी नहीं करते होंगे। चार–छः घंटे बाद किसी का स्टेशन आएगा तो वह उतर जाएगा। हो सकता है जिंदगी में अब इनसे फिर कभी दुबारा मुलाकात न हो और इतना दिल खोलकर मिल रहे हैं वे! क्यों? क्योंकि कुछ भी अपेक्षा नहीं है।

अगर सामने वाले ने अपने थर्मस से निकालकर आपको चाय पिला दी तो आपके मन में बड़ा धन्यवाद आएगा क्योंकि कोई अपेक्षा नहीं थी कि वह चाय पिलाएगा। बिल्कुल अपेक्षा नहीं थी, पूछ लिया तो बहुत बढ़िया बात। और घर में आपकी पत्नी पच्चीस साल से चाय पिला रही है उसके प्रति कोई धन्यवाद पैदा नहीं होता क्योंकि ये तो उसकी ड्यूटी है, उसको तो करना ही पड़ेगा। चाय पिला दिया तो कौन सी बड़ी बात हो गई!

जहां अपेक्षा है वहां धन्यवाद भाव खत्म हो गया, प्रेम खत्म हो गया। देख रहे हैं अपेक्षा कैसा विरोध खड़ा करती है। और ये व्यक्ति अंजाना, अपरिचित, इसने चाय पिला दी तो धन्यवाद भाव से भर गया।

प्रेम की पहली झलक प्रकृति के संग मिल सकती है। क्योंकि वहां हमारी अपेक्षाएं न्यूनतम हैं, शून्य। आकाश से आप क्या उम्मीद करते हैं, कुछ भी नहीं। पेड़–पौधों से आप

क्या चाहते हैं, कुछ भी नहीं। उनका हरा रंग देखकर ह्रदय में खुशी की लहर दौड़ गई यही काफी है। कभी धूप में चलते–चलते छाया में बैठ गए यही बहुत है। कुछ चाहत नहीं है, कुछ एक्सपेक्टेड नहीं है। एक नदी के पास चट्टान पर बैठकर, लेटकर आप खूब आराम महसूस करते हैं। क्योंकि अपेक्षा जीरो है।

प्रकृति के बाद दूसरे नंबर पर आते हैं पशु–पक्षी, पालतू जानवर। मैं देखता हूं कि लोग इनके साथ ज्यादा प्रेम से रहते हैं बजाय मनुष्यों के। मनुष्यों से तो डर लगता है। मनुष्यों से मिलने का मतलब है कि तुरंत अपेक्षा शुरू, एक–दूसरे पर ड्यूटी लग जाएगी कि किसको क्या करना चाहिए, क्या नहीं करना चाहिए। कम से कम पशु–पक्षियों के संग, पालतू जानवरों के संग ऐसी अपेक्षाएं नहीं हैं।

पश्चिम में जापान में जहां मनुष्य–मनुष्य के बीच में प्रेम बहुत कम हो गया है, लगभग खत्म ही हो गया है, वहां पर पालतू जानवरों की कीमत ज्यादा हो गई है। जब मैं जापान गया था करीब बारह साल पहले तो जिनके घर में रुका था उनकी बिल्ली की मौत हो गई थी। वो नई बिल्ली खरीदने गए थे, ढाई लाख रुपए की बिल्ली खरीदकर आए थे। पालतू जानवरों के साथ आराम से रह रहे हैं।

मनोवैज्ञानिक सलाह दे रहे हैं कि अगर आप किसी प्रकार की क्रॉनिक बीमारी से पीड़ित रहते हैं, शारीरिक अथवा मानसिक, तो कृपया कोई पालतू जानवर पालिए ताकि आप रिलैक्स्ड हो सकें। मनुष्यों के साथ तो रिलैक्स्ड होना असंभव सा हो रहा है।

तीसरे नंबर पर आते हैं अपरिचित मनुष्य जिनसे हमारी कोई जान पहचान नहीं है। कई लोग कहते हैं कि यहां हम आते हैं समाधि कार्यक्रम में तो छः दिन बहुत अच्छा लगता है, घर जाकर ऐसा क्यों नहीं हो पाता? काश! आप ये छोटी सी बात समझ जाओ। घर वालों से अगर आप अपेक्षाएं बंद कर दो तो आपका घर भी मंदिर हो जाए, घर भी आश्रम हो जाए।

कई लोग कहते हैं कि यहां इतना अच्छा लगता है कि यहीं रह जाऊं। मैं कहता हूं कि वह तो इसलिए कि आप यहां छः दिन के लिए आए हैं, साठ दिन रह लोगे तो कुछ भी अच्छा नहीं लगेगा। जैसा आपने घर में नर्क निर्माण किया हुआ है वैसे ही यहां भी कर लोगे क्योंकि नर्क निर्माण करने की महारत हासिल है आपको।

घर को भी आपने ही नर्क बनाया है और यहां भी बना लोगे। घर से बदतर यहां बना लोगे, घर में तो केवल पांच–सात लोग थे, लेकिन यहां तो चालीस–पचास लोग हैं। काफी घना नर्क पैदा कर सकते हो, वह कला आपको अच्छे से आती है। छः दिन के लिए आए हो तो आप लोग कुछ अपेक्षा नहीं रखते इसलिए आप खुश रह पाते हो।

इस बात को जरा समझना, क्यों आपको इतना अच्छा लगता है, क्यों आपको प्रेमल व्यवहार लगता है– क्योंकि आपकी अपेक्षाएं नहीं हैं!

यहां प्रेम समाधि में प्रीति आई हुई है, बार–बार कहती थी कि मैं आश्रम में रहना चाहती हूं। मैंने एक दिन पूछा कि तुम किसलिए आश्रम आना चाहती हो, सबसे आकर्षक बिन्दु क्या है जिससे तुम अपना घर और नौकरी छोड़ने के लिए तैयार हो। वह बोली कि मुझे आपके साथ मॉर्निंग वॉक में बहुत मजा आता है इसलिए मैं चाहती हूं कि आश्रम में ही रहूं। मैंने कहा तब तो

तुम भूल ही जाओ। क्योंकि आश्रम में जो भी रहता है, आज तक मॉर्निंग वॉक में नहीं गया और न कभी जाएगा, मैं इसकी भी गारंटी दे रहा हूं! न आज तक कोई गया, न कोई जाएगा और अगर तुम आश्रम में रहने लगोगी तो ये बात तो भूल ही जाओ कि कभी मॉर्निंग वॉक में तुम जाओगी। वह कहने लगी कि क्यों, मैं तो उसी के लिए ही आना चाहती हूं। मैंने कहा तुमको मनोविज्ञान का पता नहीं है, तुम छः दिन के लिए आती हो तो तुम छः दिन आनंद लेती हो मॉर्निंग वॉक का। जिस दिन तुम यहां निरंतर रहने लगोगी तुम शायद ही कभी उठो। उठोगी तो नाराजगीपूर्ण उठोगी कि मुझे उठना पढ़ रहा है, ड्यूटी करनी पड़ रही है।

अभी जिस काम में भी तुमको आनंद आ रहा है वो सब तुम्हारे लिए ड्यूटी जैसे हो जाएंगे... बोझ... करने पड़ रहे हैं। अगर मैं किसी दिन कहूंगा कि प्रीति आज पैदल चलना है, तुम ऐसे चलोगी कि जैसे बोझा ढोना पड़ रहा हो, कहां फंस गए मजबूरी में, पैदल चलना पड़ रहा है। फिर सारा मजा किरकिरा हो जाएगा।

छः दिन के लिए आप आए हैं। क्यों इतना सुखदायी लगता है?... क्योंकि जिन मित्रों के बीच आप बैठे हैं इनमें से अधिकांश अपरिचित हैं। जो परिचित भी हैं तो छुटपुट नाम वगैरह बस जानते हैं लेकिन उनसे कुछ अपेक्षा नहीं है। न वो आपसे कोई अपेक्षा करते हैं कि आपको कुछ देना है कि लेना है इसलिए आप भी आराम से रह पाते हो।

अगर आपसे अपेक्षा है कि आपको ऐसा होना पड़ेगा तो फिर मुश्किल खड़ी हो जाती है। आपको फिर नाटक करना पड़ता है, ढोंग, पाखण्ड, वैसा दिखना पड़ता है जैसी अपेक्षा है। इसलिए जो पति–पत्नी यहां साथ आते हैं, मां–बेटी साथ आ गईं, कि बाप–बेटा एक साथ आ गए तो वो रिलैक्स नहीं हो पाते, क्योंकि उनकी अपेक्षाएं अभी भी साथ में हैं।

पत्नी की अपेक्षा है कि पति कैसा होना चाहिए और पति को वैसा ही व्यवहार करना पड़ेगा जैसा वह घर में कर रहा था इसलिए उसके लिए कोई फर्क ही नहीं पड़ा। आप रिलैक्स इसलिए हो पाते हो क्योंकि आप स्पॉन्टेनियस और सहज हो पाते हो, क्योंकि कोई आपसे कुछ एक्सपेक्ट नहीं कर रहा है। यू कैन बी नैचुरल... जैसे आप हो वैसे ही।

तो मैंने कहा कि प्रकृति के संग हम सर्वाधिक रिलैक्स और प्रेमपूर्ण हो पाते हैं। नंबर दो जानवरों और पशु–पक्षियों के संग। नंबर तीन अपरिचित मनुष्यों के संग। नंबर चार परिचित के दायरे में। नंबर पांच रिश्तेदार, कलीग्स जिनके साथ काम कर रहे हैं, परिवार के लोग क्योंकि यहां बहुत ज्यादा अपेक्षाएं हैं दोनों तरफ से। सबको नाटक करना पड़ रहा है। सभी लोग जैसे कि ड्रामा के मंच पर हों; थक जाते हैं नाटक करते–करते, वही थकावट फिर क्रोध बनकर प्रगट होती है दूसरे के ऊपर। और ठीक वैसे ही दूसरे की तरफ से भी हो रहा है। ये सारी प्रक्रियाएं अनजाने में चल रही हैं, हम इसके प्रति सजग नहीं हैं। और आखिरी मुश्किल की बात– परिवारवालों से भी ज्यादा खतरनाक जिसको प्रेम करना है वह है हमारा स्वयं का होना!

शायद ही मुझे कभी कोई ऐसा व्यक्ति मिलता है जो स्वयं को प्रेम करता हो। हम खुद से न जाने क्या–क्या अपेक्षाएं करते हैं। दूसरे करते हैं वह तो ठीक ही है, हम खुद भी! लंबी लिस्ट है हमारे पास अपने ही बारे में कि मुझे कैसा होना चाहिए। और हम लगातार अपने

आपको बदलने की हिंसक कोशिश करते रहते हैं। अपने साथ ही एक बलात्कार चल रहा है।

जबरदस्ती बदलने की कोशिश, एक अंतर्संघर्ष छिड़ा हुआ है। समाज ने, सभ्यता ने, शिक्षा ने और विशेषकर धर्मगुरुओं ने हमारे भीतर न जाने क्या–क्या भर दिया है कि तुम्हें ऐसा होना चाहिए। एक आदर्श इमेज और वो हमारे मन को पकड़ गई। और चूंकि हम वैसे नहीं हैं और नहीं हो पा रहे हैं इसलिए हम लगातार अपने ऊपर नाराज हैं और दुखी हैं। हम जैसे हैं हम वैसे ही अपने आपको प्रेम नहीं करते।

हमारे मन में एक आदर्श इमेज बैठी हुई है कि जब तक मैं ऐसा न हो जाऊं तब तक मैं प्रेम योग्य नहीं हूं। हम खुद ही खुद से नफरत करते हैं। और हम उम्मीद करके बैठते हैं कि दूसरे लोग हमें प्रेम करें। हम खुद ही अपने आपको प्रेम नहीं कर पा रहे हैं! जरा कल्पना करें आजकल क्लोन्स बनने लगे हैं बिल्कुल हू–ब–हू, आपकी जेरॉक्स कॉपी बन जाएंगे। सौ आदमी बिल्कुल आपके जैसे बनाकर छोड़ दिए जाएं आपके घर में, आपके मुहल्ले में, जहां आप काम करते हैं। बिल्कुल वही–वही लोग, बिल्कुल वही सूरत, वही हाव–भाव, वही बोलना–चालना, वही रंग रूप, ठीक वैसा ही मन, बिल्कुल आपकी जेरॉक्स कॉपी। मैं समझता हूं आप चौबीस घंटों के अंदर आत्महत्या कर लोगे। क्योंकि हम स्वयं से इतनी नफरत करते हैं जिसका हमको अंदाज नहीं। हम अपने ही जैसे लोगों के बीच में बिल्कुल नहीं रह पाएंगे। ऐसा शायद कभी आपने सोचा नहीं होगा।

जरा सोचना, कल्पना करना बिल्कुल आपके ही समान लोग हैं बस। शरीर से भी वैसे, मन से भी वैसे, उनकी सोच–विचार भी वैसे ही, सबकुछ वैसा ही हो। इतना बोरिंग, इतने उबाऊ हालात हो जाएंगे कि आत्महत्या ही करनी पड़ेगी। हम स्वयं से बहुत नफरत करते हैं। और कारण, एक्सपेक्टेशन फ्रॉम योरसेल्फ, अपने आपसे अपेक्षाएं।

इसमें से जितनी बातें मैंने आपको समझाईं, उसमें से अगर अपेक्षा वाली बात आपको क्लिक कर जाए, समझ आ जाए तो हम अभी से इसको ड्रॉप कर सकते हैं। हम अपने घर–परिवार में, अपने परिचित लोगों के साथ भी रह सकते हैं जैसा हम प्रकृति के संग हो सकते हैं। फिर हमें यहां–वहां भागने की जरूरत नहीं पड़ेगी कि हिल स्टेशन पर रिलैक्स होने जा रहे हैं।

भाई, घर में आपको कौन सता रहा है, क्यों हिल स्टेशन पर भाग रहे हैं, काहे के लिए यहां से वहां भागना। काश! हमें रिलैक्स होने की कला आ जाए। और उसका महत्त्वपूर्ण बिन्दु क्या है?... अपनी पसंद और नापसंद को दरकिनार करना, उनको बीच में आड़े मत आने देना, वे बाधाएं हैं। मोह, अटैचमेंट और मालकियत की भावना को अलग कर देना। दूसरों को पजेस मत करो, वे कोई सामान नहीं हैं। उनको उपयोगिता की दृष्टि से न देखो।

और तीसरी चीज, किसी चीज की अपेक्षा मत करो। और आप अभी, तत्क्षण स्वर्ग में जीने लगोगे। और कृपा करके स्वयं के प्रति भी अपेक्षा छोड़ दो। वो जो आइडियल, एक इमेज भीतर बैठी हुई है उसको नमस्कार करो। उसने आपको बहुत सताया है जो कि हर व्यक्ति के अंदर भरा हुआ है कि अच्छा बाप होना चाहिए, कि अच्छा बेटा होना चाहिए, कि अच्छी मां होनी चाहिए, कि अच्छी बहू होनी चाहिए, कि अच्छी पत्नी होनी चाहिए, कि अच्छा

पति होना चाहिए। अच्छा भाई कैसे हो, अच्छा पड़ोसी कैसे हो, एक अच्छा शिष्य कैसे हो, एक अच्छा धार्मिक व्यक्ति कैसे हो, एक आध्यात्मिक साधक कैसे हो और ये इमेज हमारे प्राण लिए ले रहीं है। यद्यपि उसमें से कुछ भी नहीं हो पा रहा। हम झूठे और पाखंडी हुए जा रहे हैं और पिसे जा रहे हैं और हमारी जिंदगी बर्बाद हुई जा रही है लेकिन वो अपेक्षाएं पूरी होतीं नहीं। और हम कसम खाकर जिद करके पीछे पड़े हुए हैं कि ऐसा हम करके रहेंगे।

मेरी आपसे विनती है कि स्वयं के प्रति अपेक्षारहित हो जाएं और देखें कैसा अद्भुत दिव्य और अलौकिक प्रेम व्याप्त हो जाता है। परमात्मा ने जैसा हमें बनाया वैसा उसे स्वीकारो, इसमें कोई हेरफेर करने की कोशिश बंद करो और तब तुम दूसरों का भी सम्मान कर पाओगे और उनमें हेरफेर करना भी बंद कर दोगे। उन विचारों को जैसे हैं वैसे रहने दो, परमात्मा ने जैसे बनाया है। क्यों काट–छांट कर रहे हो, क्यों नियम–कानून थोप रहे हो। तुम अपना जीवन जियो और उन्हें अपना जीवन जीने दो। यही अहिंसा का गहरे से गहरा अर्थ है। मालकियत छोड़ दो, मालकियत में हिंसा है। पसंद नापसंद आपके अपने भीतर की बात है, उसे दूसरों पर न थोपो। यह तुम्हारी अपनी प्रॉब्लम है। ये आपके मन के संस्कार हैं। इनको दूसरों के ऊपर मत थोपो। इससे दूसरों को क्या लेना–देना और वे कोई चीजें या वस्तुएं तो नहीं हैं कि हम पसंद और नापसंद की बात करें।

शादी–ब्याह के लिए लड़का–लड़की देखने जाते हैं तो ऐसे जाते हैं जैसे बाजार में सामान खरीदने गए हों, गाय–भैंस खरीदने गए हों जानवरों के बाजार में। फिर उम्मीद करते हैं ये पति–पत्नी एक–दूसरे से जिंदगी भर प्रेम करते रहें। शुरुआत ही प्रेम से नहीं हुई है, सौदे से हुई है। सावधान! अपेक्षा छोड़ो, मोह छोड़ो और पसंद नापसंद को प्रेम मानना छोड़ दो। इनकी वजह से हमारी जिंदगी नर्क हो गई है। अगर इसको स्वर्ग बनाना है तो इसी क्षण यह हो सकता है, एक सेकेण्ड भी भ्रांतियों में बर्बाद करने की जरूरत नहीं।

सुनो यह किस्सा– मुल्ला नसरुद्दीन इबादत की नई विधियों की तलाश में निकला। अपने गधे पर जीन कसकर वह भारत, चीन, मंगोलिया गया और बहुत से ज्ञानियों और गुरुओं से मिला पर उसे कुछ भी नहीं जंचा। उसे किसी ने नेपाल में रहनेवाले एक संत के बारे में बताया। वह नेपाल की ओर चल पड़ा। पहाड़ी रास्तों पर नसरुद्दीन का गधा थकान से मर गया। नसरुद्दीन ने उसे वहीं दफ़न कर दिया और उसके दुःख में रोने लगा। कोई व्यक्ति उसके पास आया और उससे बोला– 'मुझे लगता है कि आप यहाँ किसी संत की खोज में आये थे। शायद यही उनकी कब्र है और आप उनकी मृत्यु का शोक मना रहे हैं।'

'नहीं, यहाँ तो मैंने अपने गधे को दफ़न किया है जो थकान के कारण मर गया'– मुल्ला ने कहा।

'मैं नहीं मानता। मरे हुए गधे के लिए कोई नहीं रोता। इस स्थान में जरूर कोई चमत्कार है जिसे तुम अपने तक ही रखना चाहते हो!'

नसरुद्दीन ने उसे बार–बार समझाने की कोशिश की लेकिन कोई नतीजा नहीं निकला। वह आदमी पास ही गाँव तक गया और लोगों को दिवंगत संत की कब्र के बारे में बताया कि वहां लोगों के रोग ठीक हो जाते हैं। देखते–ही–देखते वहां मजमा लग गया।

संत के चमत्कारी कब्र की खबर पूरे नेपाल में फैल गयी और दूर–दूर से लोग वहां आने लगे। एक धनिक को लगा कि वहां आकर उसकी मनोकामना पूर्ण हो गयी है इसलिए उसने वहां एक शानदार मज़ार बनवा दिया जहाँ नसरुद्दीन ने अपने 'गुरु' को दफ़न किया था।

यह सब होता देखकर नसरुद्दीन ने वहां से चल देने में ही अपनी भलाई समझी। वह बखूबी समझ गया कि जब लोग किसी झूठ पर यकीन करना चाहते हैं तब दुनिया की कोई ताकत उनका भ्रम नहीं तोड़ सकती।

तुम स्वयं ही जागना न चाहो, तो कोई जगा नहीं सकता। शुभ रात्रि।

5

पूजा– कितनी सार्थक?

एक मित्र ने पूछा है कि क्या देवी–देवताओं की पूजा करना जरूरी है उनको प्रसन्न करने के लिए? कृपया मार्गदर्शन करें।

फिर उन पर दोषारोपण कर सकोगे आराम से! इन्द्र देवता से प्रार्थना की कि भगवान पानी बरसाओ, फिर सूखा पड़ जाए तो तुम हमेशा कह सकते हो कि इंद्र देवता नाराज हैं, अगर दोष है तो उनका होगा। ये भी हमारा उपाय है किसी और पर थोपने का। दुनिया में इतने लोग आस्तिक हैं उसका कारण यही वाली प्रवृत्ति है जिसकी मैंने अभी चर्चा की, हम किसी पर दोष तो लगा सकें। दुनिया में इतने लोग आस्तिक हैं, इतने लोग ज्योतिष को मानते हैं, ग्रह–नक्षत्रों को मानते हैं, भाग्य को मानते हैं, किस्मत को मानते हैं, विधाता को मानते हैं, क्यों? ताकि हम कहीं पर तो कह सकें कि यहां पर गड़बड़ है, हमारा कोई दोष नहीं है, हम तो भले–चंगे आदमी हैं। अब ग्रह–नक्षत्र खराब हैं तो क्या करें।

कितना आसान उपाय हमने निकाला है! अपनी असफलताओं को हम कहीं थोप सकते हैं कि क्या करें, विधाता ने अपनी किस्मत में लिखकर ही ऐसा भेजा था। हस्त रेखाओं को सारी दुनिया में माना जाता है। अब क्या कर सकते हो, रेखाओं में ऐसा ही लिखा है तो! अब तुम ब्लेड से काट–काटकर रेखाओं को तो नहीं बना सकते, जो बनी है सो बनी है। भगवान को और देवी–देवताओं को हम इसलिए मानते हैं ताकि फाइनल सारी जिम्मेवारी हम उन पर थोप सकें कि दुनिया बनाने वाले क्या तेरे मन में समाई, काहे को दुनिया बनाई।

एक तो स्टार्टिंग प्वाइंट से ही तुमने गलत किया जो सृष्टि की रचना की और फिर ऊपर से ये सारा उपद्रव। और हमारे सारे जीवन की जिम्मेवारी फिर तो खत्म हो गई इसलिए हम तो

दोषी नहीं हैं। जिसने दुनिया बनाई, जो इसको चला रहा है वही हमारे जीवन को भी चला रहा है। अगर कुछ भूल–चूक हुई है, गलती हुई है, कहीं गड्ढे में हम गिरे हैं, किसी काम में असफल हो गए हैं और परास्त हो रहे हैं तो दोष तो ऊपर वाले का ही है। आखिर गलती तो उसी से हुई जिसने हमें बनाया है।

अगर कोई स्रष्टा है तो मैन्यूफैक्चरिंग तो वहीं से शुरू हुई न! उसकी फैक्ट्री खराब है तो क्या करें! जहां से बनाने वाले ने हमको बनाकर भेजा उसका सांचा ही गड़बड़ होगा। हमारा दिमाग ही उसने ऐसा बनाया कि हमसे गलती होती है तो हम क्या कर सकते हैं। कितनी आसानी से हम बच गए, सारी जिम्मेवारी हमारी खत्म। अगर ईश्वर सर्वशक्तिमान है, क्योंकि हम उसको सर्वशक्तिमान मानते हैं, अगर वह सर्वशक्तिमान है तो जब हम गलती कर रहे थे तो बीच में बोलना चाहिए था उसको। उसने रोका क्यों नहीं, वह तो ताकतवर है न! वह हमें रोकता, सही रास्ते पर ले जाता। वह तो सर्वव्यापी है, सबकुछ देख रहा है। ओमनीप्रेजेंट, ओमनीसीएंट, ओमनीपोटेंट। वह चाहे तो क्या नहीं कर सकता।

तो अगर हमसे कुछ गलत हुआ है तो इंडायरेक्टली तो फिर वही जिम्मेवार है। उसने ऐसा गलत रास्ता बनाया ही क्यों, भटकने के चांसेस ही क्यों बनाए, गलत रास्ते ही क्यों बनाए। और अगर हम भटक गए तो उसने फिर रोका क्यों नहीं, बीच में आकर रोक सकता था। वह रास्ता बनाया ही क्यों जो गलत है। कुल मिलाकर सारी जिम्मेवारी तो फिर उसकी हो गई। दुनिया में इतने लोग आस्तिक हैं उसका कारण यही है। क्योंकि बड़ी ही आसानी से हम सारी जिम्मेवारी किसी पर थोप सकते हैं।

अगर परमात्मा सर्वशक्तिमान है तब तो हम उसके हाथ की कठपुतली हैं। धागे उसके हाथ में हैं और वह जैसे नचा रहा है वैसे ही हम नाच रहे हैं। कठपुतली का क्या दोष अगर उसका नृत्य गलत है, धागा खींचने वाला तो कोई और है। कठपुतली तो जिम्मेवार नहीं है कि उसके हाथ–पैर कैसे चल रहे हैं। दुनिया को जो चलाने वाला है वह जाने और उसका काम जाने। हम तो उसके हाथ की कठपुतली हैं, हम तो उसके हाथ की पतंग हैं। वह जैसी डोरी खींच रहा है वैसी पतंग उड़ रही है। हम पतंग को दोष तो नहीं दे सकते हैं कि तुम उत्तर या दक्षिण दिशा की ओर क्यों जा रही हो? भाई पतंग क्या कर सकती है। धागा जैसे खींचा जा रहा है पतंग वैसे ही जाएगी। पतंग की कोई अपनी मर्जी थोड़ी है।

हमारे देश में लोग नाम में जोड़ते हैं दास। किसी का नाम है रामदास, किसी का नाम है कृष्णदास, किसी का नाम है नारायणदास। मुसलमान लोग अपने नाम में गुलाम जोड़ते हैं। कोई गुलाम अली हैं, कोई गुलाम मोहम्मद हैं। हम चाहते हैं हम दास और गुलाम हों। तुलसीदास और सूरदास, बड़े–बड़े लोगों के नाम में दास जुड़ा है। प्रभु के दास हैं, मतलब हमारी सारी जिम्मेवारी खत्म, मालिक तो वह है। हम ज्यादा से ज्यादा उसके नौकर हैं, गुलाम हैं, हम उसकी आज्ञा का पालन कर रहे हैं लेकिन आज्ञा देने वाला तो वह है। तो नौकर की तो कोई जिम्मेवारी नहीं होती।

जिस आदमी ने हिरोशिमा और नागासाकी में बम गिराया और एक–एक लाख आदमी उन दो शहरों में भस्मीभूत हो गए, उससे दूसरे दिन पत्रकारों ने पूछा कि आपको संकोच नहीं लगा कुछ? उन्होंने कहा कि कैसा संकोच, मैं तो नौकरी कर रहा हूं फौज में, जो ऊपर से आदेश आएगा मैं तो उसका पालन करूंगा। दो लाख आदमी जलकर राख हो गए और वह आदमी खुश है। वह आदमी कह रहा है कि मैं घर आया लौटकर रात को तो पत्नी–बच्चों के साथ बातचीत की, खाना खाया, उनको सारी कहानी सुनाई कि क्या–क्या हुआ और चैन से सोया। अच्छी नींद सोया कि मैंने तो अपना कर्तव्य निभा दिया।

इस आदमी को हम दोषी नहीं ठहरा सकते क्योंकि यह एक बड़े सिस्टम का गुलाम है, एक बड़ी मशीन का एक छोटा सा पुर्जा है, इसका तो कोई दोष नहीं। वह तो अमेरिका के राष्ट्रपति ने तय किया था। राष्ट्रपति ने राष्ट्राअध्यक्ष को आदेश दिया, राष्ट्राध्यक्ष ने अपने सब–ऑर्डिनेट को आदेश दिया, उन्होंने अपने आदमियों को आदेश दिया और इसने जाकर वहां बम पटक दिया। इसकी तो हम कोई जिम्मेवारी नहीं ठहरा सकते। जब हम अपने को प्रभु का दास और गुलाम कहते हैं, देवी–देवताओं का गुलाम कहते हैं तब हम प्रकरांतर से अपनी सारी जिम्मेवारी से बचना चाह रहे हैं।

हम चाहते हैं कि हम स्वतंत्र न हों, हमसे ऊपर कोई हमारा मालिक हो। आज्ञा देने वाला दुनिया का संचालक, निर्माता, विधाता... ताकि हम बच जाएं। हमारा कोई दोष नहीं है। इसलिए आपने देखा कि जहां–जहां आस्तिकता कम होती गई वैसे–वैसे वहां पर विकास होता गया। शायद आपने इन दोनों चीजों के बारे में कुछ सोचा न हो। इन चीजों का ग्राफ अगर आप खींचें, जिन मुल्कों में विकास हुआ वहीं पर आप देखेंगे कि आस्तिकता का ग्राफ नीचे जा रहा है। जैसे–जैसे लोग नास्तिक होते चले गए उनकी गिनती बढ़ती गई, वैसे–वैसे वहां का समाज विकसित, संपन्न, स्वस्थ और लंबी आयु वाला होता गया और हर कार्य में सफलता मिलने लगी। वे ज्यादा वैज्ञानिक हो गए, ज्यादा शिक्षित हो गए, हर क्षेत्र में आगे जाने लगे।

और जहां–जहां आस्तिकता बहुत प्रभावी रही खासकर पूरब के देशों में वे पीछे रह गए। जब हमारी कोई जिम्मेवारी नहीं है तो हम क्यों कुछ करें, बस हाथ में हाथ धरे बैठे हैं। ज्यादा से ज्यादा हम प्रार्थना कर सकते हैं कि हे प्रभु ऐसा कर दो, हे प्रभु वैसा कर दो, इससे ज्यादा तो कुछ कर हीं नहीं सकते। कौन बांध बनाए और नहरें खोदे और सिंचाई करवाए। मंदिर में जाकर प्रार्थना कर दी कि हे प्रभु वर्षा करो, हे इन्द्र देवता खुश हो जाओ! ये लो एक नारियल फोड़ देते हैं। और सवा रुपए का प्रसाद भी चढ़ाएंगे अगर पानी गिर गया तो! बिल्कुल व्यावसायिक बात। अब अगर नहीं गिराया तो उनकी मर्जी क्या करोगे! अकाल पड़ गया तो, सूखा पड़ गया तो लोग मर गए भूखे कोई बात नहीं है!

जहां लोगों की आस्तिकता खत्म होने लगी वहां उन्होंने जिम्मेवारी अपने हाथ में ले ली कि हमको कुछ करना होगा। जहां ईश्वर की धारणा आ गई कि वह सबकुछ करने वाला है

वहां पर आदमी निठल्ले हो गए, आलसी हो गए। हमारे देश में इतना तमस, इतना आलस है कि कोई कुछ करना ही नहीं चाहता। बहुत मुश्किल है किसी से कुछ काम लेना, लोग करना ही नहीं चाहते। क्योंकि भीतर बड़ी गहरी धारणा बैठी है कि सब करने वाला तो वह है... ईश्वर, हम क्या करें! आदमी की क्या मजाल, ज्यादा से ज्यादा हम प्रार्थना कर सकते हैं कि हे प्रभु ऐसा कर दो, अपनी ऐप्लीकेशन दे दी कि हम ऐसा–ऐसा चाहते हैं। मर्जी तो उसी की है, फाइनल डिसीजन तो वही करेगा।

इन बातों को गौर से समझना, फिर इस प्रकार के निरर्थक प्रश्न आपके भीतर नहीं पैदा होंगे। अपनी जिम्मेवारी स्वयं अपने हाथ में लें। आप 'द सीक्रेट' किताब पढ़ना। कृपा करके इसमें से ईश्वर को अगर बीच में से हटा दें तो बड़ी कृपा हो। क्योंकि ईश्वर के रहते हुए फिर हमारे भीतर संकल्पशक्ति पैदा ही नहीं होती। इसलिए भारत में बुद्ध और महावीर की संस्कृति को हम श्रमण संस्कृति कहते हैं, जिन्होंने अपने श्रम पर जोर दिया कि तुम्हें खुद, स्वयं ही कुछ करना होगा। इसलिए इनकी संस्कृति श्रमण संस्कृति कहलाई। और इसलिए बुद्ध और महावीर ने ईश्वर को बीच में से हटा दिया।

इसलिए नहीं कि उन्होंने भगवान को नहीं जाना था, उन्होंने तो खूब अच्छे से भगवत्ता को पहचाना था। किन्तु फिर भी उन्होंने इसकी चर्चा नहीं की। लोगों ने भले ही उनको नास्तिक समझा, उन्होंने साफ इंकार कर दिया उस सर्वशक्तिमान ईश्वर की सत्ता से ताकि आदमी अपनी जिम्मेवारी अपने आप ले, अपना श्रम स्वयं करे। इसके पहले तक प्रार्थना की संस्कृति थी, बुद्ध और महावीर के बाद साधना की संस्कृति शुरू हुई, हमें कुछ करना होगा। कोई कहीं पर बैठा नहीं है जिसके सामने हम हाथ फैला दें और मांग लें। हमारी चाहत, हमारी अभीप्सा, कितनी गहरी हमारी तमन्ना है उसके अनुसार ही एक्जिस्टेंस कुछ करेगा। वह हमें देखकर के कि हम कितना करने को तैयार हैं, उतना ही हमें सपोर्ट मिलेगा।

निश्चित ही एक्जिस्टेंशियल सपोर्ट मिलता है, बहुत मिलता है। लेकिन वह तभी मिलेगा जब हम कुछ करने को तैयार हैं। अगर हम एक कदम उठाने को तैयार हैं तो दस कदम अस्तित्व हमारी तरफ उठाएगा। लेकिन पहले हमें एक कदम उठाना पड़ेगा। और वह हमारे कर्म से पता चलेगा कि हम क्या–क्या करने को तैयार हैं। जो हम चाहते हैं उसे पाने के लिए हम कितनी कुर्बानी करने को तैयार हैं, कितनी मेहनत करने को तैयार हैं। हमारी वह निष्ठा देखकर निश्चित ही परमात्मा की तरफ से भी बहुत आशीष बरसेंगे। लेकिन वह आशीष मांगने से नहीं बरसते, वह हमारे कर्म को देखकर ही, उसी अनुपात में मिलेंगे।

हम चार कदम उठाएंगे तो वहां से चालीस गुना मिलेगा, कई गुना ज्यादा मिलेगा। लेकिन वह मिलेगा हमारे कृत्य को देखकर, प्रार्थना करने से नहीं। इसलिए मैं देवी–देवताओं की पूजा करने की आपको सलाह नहीं दूंगा। हां, कर्म को ही आप पूजा समझें। आप जो कर्म करेंगे वही है पूजा, परमात्मा उसी को देखेगा। आप मंदिर में जाकर घुटने टेककर, हाथ जोड़कर जो निवेदन करेंगे उसे कोई नहीं देखेगा लेकिन आप कर्म करके जब दिखाएंगे उसे पूजा माना जाएगा और परमात्मा अगर कहीं है तो उसको देखेगा और उसी के फलस्वरूप

आपको फल देगा। उससे कई गुना ज्यादा देगा लेकिन कर्म को देखकर देगा।

मैं परमात्मा को इंकार नहीं कर रहा हूं, देवी–देवताओं को भी इंकार नहीं कर रहा हूं, केवल इतना कह रहा हूं कि हाथ जोड़कर प्रार्थना करने से बात नहीं बनेगी, वे लोग उसको नहीं देखते। वर्क इज योर वर्शिप, आप निष्ठापूर्वक कुछ करके दिखाओ परमात्मा को वहीं नजर आएगा और उसके अनुसार, निश्चित ही फल उससे कई गुना ज्यादा मिलेगा। आप एक आम की गुठली बोओ, आपने छोटा सा कर्म किया और अस्तित्व कितना कुछ देता है। एक विराट आम का वृक्ष दे देता है और हजारों–हजारों फल देता है जो कि कई–कई सालों तक मिलते रहेंगे, कई गुना करके देता है।

हमने तो छोटा सा काम ही किया था, एक आम की गुठली बोई थी, थोड़ा सा पानी सींचा, थोड़ी सी खाद डाली तो हमारा कर्म तो बहुत छोटा सा था, नगण्य था। और परिणाम कितना बड़ा आया। अगली दो–तीन पीढ़ी तक उसके आम खाने को मिलेंगे। हम नहीं भी रहेंगे तो भी आम मिलते रहेंगे। परमात्मा ने बहुत कुछ दिया है लेकिन अगर हम बैठकर प्रार्थना करें कि आम का पेड़ उगा दो मेरे आंगन में तो क्या यह प्रार्थना सुनी जाएगी, आप खुद बताइए? भगवान कहेगा अच्छा मूर्ख है, आम की गुठली लिए बैठा है और जमीन में गाड़ नहीं रहा है और प्रार्थना कर रहा है कि आम का पेड़ उगा दो।

मुल्ला नसरुद्दीन रोज मंदिर जाता था और एक ही प्रार्थना करता था कि हे प्रभु एक लॉटरी की टिकट लग जाए और एक बेटा पैदा हो जाए, दो इच्छाएं हैं बस! एक बेटे की तमन्ना है और एक लॉटरी लग जाए, बहुत बड़ी भी नहीं मांग रहा हूं, बस दस लाख की। दस लाख एक बार मिल जाएं तो मजा आ जाए। उसकी प्रार्थना सुनते–सुनते गांव के लोग भी थक गए थे, रोज बंधी–बंधायी वही फिक्सड प्रार्थना, पांच बार नमाज पढ़ने आता और पांचों बार वही प्रार्थना करता। लोग भी सुन–सुनकर ऊब गए थे, थक गए थे।

वैसे तो परमात्मा ऐसे नालायकों की प्रार्थना का कोई जवाब देता नहीं लेकिन कहते हैं कि भगवान भी थक गया उसकी प्रार्थना सुनते–सुनते। जब लगभग दस साल गुजर गए तब एक दिन अचानक जोर की आकाशवाणी हुई, भगवान जोर से गरजा और कहा कि उल्लू के पट्ठे, कम से कम शादी तो कर और लॉटरी की टिकट तो खरीद! अभी उन सज्जन ने टिकट भी नहीं खरीदी है और शादी भी नहीं हुई है। भगवान सर्वशक्तिमान नहीं है, जिसने लॉटरी की टिकट नहीं खरीदी उसकी लॉटरी नहीं लगवा सकता और जिसने शादी ही नहीं की है उसका बेटा भी नहीं हो सकता।

भगवान सर्वशक्तिमान नहीं है, इतना वह भी नहीं कर सकता। कुछ तो तुम्हें भी करना होगा, थोड़ा–बहुत तो करो। तुम एक रुपए का टिकट नहीं खरीद रहे और दस लाख इनाम पाना चाह रहे हो, ये काम भगवान भी नहीं कर सकता। अगर वह मदद भी करना चाहे तो कैसे करे। कम से कम एक कदम तो उठाओ तुम, कम से कम टिकट तो खरीदो। हद हो गई!

तो प्यारे मित्रों, मैं आपसे पुनः कहना चाहूंगा संक्षिप्त में कि निश्चित ही देवी–देवता हैं,

परमात्मा भी है... मैं इंकार नहीं करता हूं, यह सारा अस्तित्व ही दिव्य शक्ति से ओत–प्रोत है। लेकिन उस दिव्य शक्ति को हमारे कर्म दिखाई देते हैं, हमारी निष्ठा, हमारी लगन दिखाई देती है। हमारी प्रार्थनाएं नहीं सुनाई पड़ेंगी चाहे तुम संस्कृत में ही पढ़ो। भगवान को संस्कृत भी नहीं आती, हिन्दी भी नहीं आती, अरबी, फारसी कुछ भी नहीं आती। चाहे तुम कुरान पढ़ो, चाहे वेद पढ़ो कुछ नहीं आता। भगवान को भाषा आती ही नहीं है, उसको तो कर्म दिखाई देते हैं। तुम कर्म करके दिखाओ और देखोगे कि उस तरफ से रेस्पॉन्स आने लगा।

यही जीवन का रहस्य है। तुम्हारे कर्म की भाषा पहचानी जाती है। तुम क्या कहते हो वह कोई नहीं सुनता, तुम क्या करते हो वह देखा जाता है। तो मैं पुरानी ब्राह्मण संस्कृति और पुरानी श्रमण संस्कृति के बीच में एक बीच की बात कह रहा हूं। ब्राह्मण संस्कृति पूरी तरह से प्रार्थना पर आधारित थी, श्रमण संस्कृति ईश्वर को इंकार करके शुद्ध साधना पर आधारित है। मैं दोनों के बीच की बात कह रहा हूं। मैं बुद्ध और महावीर की तरह परमात्मा और देवी–देवताओं को इंकार नहीं कर रहा हूं, वे हैं। इंकार करने से कोई फायदा नहीं, जो सत्य है तो है।

हां, ये बात जरूर कहूंगा कि वे हमारी प्रार्थना नहीं सुनते। उनको हमारी भाषा नहीं आती, हमारी भाषा मनुष्यों के द्वारा बनाई गई है, कोई दिव्य देववाणी नहीं है। कोई भी भाषा ईश्वर नहीं समझता, वह एक ही भाषा समझता है। वह है तुम्हारी निष्ठा, तुम्हारी लगन, तुम्हारा कर्म। तुम कर के दिखा दो उस तरफ से बराबर रेस्पॉन्स आएगा। आज तक ऐसा नहीं हुआ है कि न आया हो।

प्रार्थना वह नहीं सुनता इसलिए मैं नहीं कहूंगा कि आप देवी–देवताओं की प्रार्थना करें और उनको खुश करें। वह क्या कोई दुखी बैठे हैं कि तुम्हारी प्रार्थना सुनकर खुश हो जाएंगे। तुम क्या सोचते हो कि परमात्मा दुखी बैठा है, उदास बैठा है और तुम पहुंच गए ओर तुमने कहा कि वाह! आप तो सर्वशक्तिमान हैं, आप तो सहस्रबाहु हैं और इस बंदे का थोड़ा तो ख्याल रखें। वह नहीं सुनने वाला तुम्हारी बकवास। उसको कोई भाषा नहीं आती सिवाय कर्म की भाषा के, संकल्प की भाषा के। अपना श्रम करके दिखाओ।

अगला प्रश्न है– हजारों संत सदियों से मुक्ति का मार्ग बताते आए हैं, किंतु लोगों के बंधन कटते क्यों नहीं? आनंद मिलता क्यों नहीं और संसार का दुख मिटता क्यों नहीं?

सद्‌गुरु ओशो द्वारा सुनाई इस अनूठी बोध कथा में आपको उत्तर मिल जाएगा–

एक सूफी फकीर हुआ, बायजीद। बैठा था अपने झोपड़े के द्वार पर। एक जिज्ञासु ने पूछा, 'धर्म क्या है? साधना क्या है? मार्ग क्या है?' तो बायजीद ने कहा, 'क्या करोगे जानकर?' उस युवक ने कहा, 'मुक्त होना है बंधन से।' बायजीद हंसा। जोर से हंसा, जैसे पागल हो। और उसने कहा, 'पहले ठीक से पता लगा कर आओ––बांधा किसने है, जो बंधन

से मुक्त होना चाहता है? जब तक इसका पक्का पता लगाकर न आओगे, तब तक मैं जवाब देनेवाला नहीं।'

कहते हैं, युवक गया, वर्षों के बाद वापस लौटा--वही पागलों जैसी हंसी अब उसके पास भी थी। बायजीद ने पूछा, 'लगा लिया पता?' उस युवक ने कहा, 'अब कुछ पूछना नहीं है, सिर्फ हंसी का जवाब देने आया हूं। खुद ही बांधा था, और बंधन से मुक्त होने की तलाश भी चालाकी की थी, वह भी उस मूल सत्य से बचने का ही ढंग था। पूछता था, कैसे मुक्त हो जाऊं? मार्ग की तलाश भी स्थगन, पोस्टपोन करने की विधि थी कि जब मिलेगा मार्ग तब पहुंचेंगे; मिलेगी विधि तब बंधन कटेगा; जब मार्ग ही पता नहीं, विधि का पता नहीं, तो कैसे बंधन के बाहर निकलेंगे? ठीक किया तुमने कि जवाब न दिया और पागल की हंसी हंसे। वह हंसी चोट कर गई। वह मन में गहरा घाव कर गई। बहुत खोजा--जैसे-जैसे खोजने लगा, वैसे-वैसे साफ होने लगा कि बंधा तो मैं ही हूं, बांधा किसी ने भी नहीं। और जब मैं ही बंधा हूं तो मुक्त होने की जरूरत क्या है? मत बंधो और मुक्त हो गए।'

यह पहली बात समझ लेनी जरूरी है।

मोक्ष की खोज भी तरकीब है। वह भी उपाय है बचने का। अन्यथा तुम अमुक्त हुए कब? बांधा किसने? बीमार ही नहीं हो और औषधि की तलाश करते हो! औषधि मिलती नहीं तो सोचते हो कि हम कर भी क्या सकते हैं! गुरु को खोजते हो, परमात्मा को खोजते हो--और उसे कभी खोया नहीं, वह तुम्हारे भीतर छिपा है। जब तुम खोज रहे हो, तब भी वह मौजूद है। और इसकी हल्की झलक तुम्हें भी है।

घर में आग लगी हो, तो तुम छलांग लगाकर बाहर निकल जाते हो। तब तुम पूछते नहीं हो कि गुरु कहां है जिससे मार्ग पूछूं? तब पूछते नहीं कि विधि क्या है बाहर निकलने की? तब तुम शास्त्रों का अध्ययन-मनन नहीं करते। तब आग लगी है इतना जानना हो गया, तो मार्ग तुम खुद खोज लेते हो। लेकिन संसार के बाहर निकलने के लिए, तुम पूछते हो मार्ग कहां है? तुम निकलना नहीं चाहते।

कारागृह को ही घर बनाने में तुम्हें रस आता है, तो फिर मार्ग क्यों पूछते हो?

मन बहुत चालाक है! मार्ग पूछकर तुम दोहरी बात अपने को समझा लेते हो कि मैं कोई साधारण, सांसारिक आदमी नहीं हूं, मैं आध्यात्मिक हूं। बंधन में पड़ा हूं, लेकिन निकलना चाहता हूं; क्रोध करता हूं, लेकिन आकांक्षा अक्रोध की है; कामवासना में पड़ा हूं, लेकिन ध्यान तो ब्रह्मचर्य का है।

दूसरे की बेईमानी देखना तो बहुत आनंदपूर्ण होता है, खुद की बेईमानी देखना बहुत कष्टपूर्ण होता है। क्योंकि उसमें तुम्हारी अपनी ही आंखों में तुम्हारी प्रतिमा गिर जाती है। और तुमने बड़ी भव्य प्रतिमाएं बना रखी हैं!

बुरे से बुरा आदमी भी यही मानता है कि आदमी तो मैं भला हूं, कभी-कभी बुराई कर लेता हूं, यह बात दूसरी है। बुरा कृत्य है, आदमी तो मैं भला हूं; संयोग से, परिस्थिति से,

मजबूरी से, भाग्यवशात बुराई कर लेता हूं, करना नहीं चाहता हूं। सुंदर प्रतिमा बुरा होने में सहयोगी है।

यह तो पहली बात समझ लेनी जरूरी है कि तुम बंधे हो, क्योंकि तुम बंधना चाहते हो। पत्नी सोचती है, पति ने बंधन डाला हुआ है। कैसा पागलपन है! दुनिया की कोई भी शक्ति तुम्हें बंधन में नहीं डाल सकती। तुम्हारी मुक्ति अपराजय है। वह तुम्हारी आंतरिक परम स्वतंत्रता है।

अगला प्रश्न है– सद्‌गुरु ओशो दर्शन शास्त्रों और सिद्धांतों के खिलाफ क्यों हैं?

मुल्ला नसरुद्दीन के इस किस्से में तुम्हें जवाब मिल जाएगा। सुनो–

एक बार मुल्ला नसरुद्दीन पर राजदरबार में मुकदमा चला कि वे राज्य की सुरक्षा के लिए खतरा बन गए हैं और राज्य भर में घूमकर दार्शनिकों, धर्मगुरुओं, राजनीतिज्ञों और प्रशासनिक अधिकारियों के बारे में लोगों से कह रहे हैं कि वे सभी अज्ञानी, अनिश्चयी और सत्य से अनभिज्ञ हैं। मुकदमे की कार्रवाई में भाग लेने के लिए राज्य के दार्शनिकों, धर्मगुरुओं, नेताओं और अधिकारियों को भी बुलाया गया।

दरबार में राजा ने मुल्ला से कहा– 'पहले तुम अपनी बात दरबार के सामने रखो'।

मुल्ला ने कहा– 'कुछ कागज और कलम मंगा लीजिये।' कागज और कलम मंगा लिए गए।

'सात बुद्धिमान व्यक्तियों को एक–एक कागज और कलम दे दीजिये'– मुल्ला ने कहा। ऐसा ही किया गया।

'अब सातों तथाकथित बुद्धिमान सज्जन अपने–अपने कागज पर इस प्रश्न का उत्तर लिख दें– 'रोटी क्या है?' '

बुद्धिमान सज्जनों ने अपने–अपने उत्तर कागज पर लिख दिए। सभी उत्तर राजा और दरबार में उपस्थित जनता को पढ़कर सुनाए गए।

पहले ने लिखा– 'रोटी भोजन है'।

दूसरे ने लिखा– 'यह आटे और पानी का मिश्रण है'।

तीसरे ने लिखा– 'यह ईश्वर का वरदान है'।

चौथे ने लिखा– 'यह पकाया हुआ आटे का लौंदा है'।

पाँचवे ने लिखा– 'इसका उत्तर इस पर निर्भर करता है कि 'रोटी' से आपका अभिप्राय क्या है?'

छठवें ने लिखा– 'यह पौष्टिक आहार है'।

और सातवें ने लिखा– 'कुछ कहा नहीं जा सकता'।

मुल्ला ने सभी उपस्थित लोगों से कहा– 'यदि इतने विद्वान और गुणी लोग इस पर

एकमत नहीं हैं कि रोटी क्या है तो वे और दूसरी बातों पर निर्णय कैसे दे सकते हैं? वे यह कैसे कह सकते हैं कि मैं लोगों को गलत बातें सिखाता हूँ? क्या आप महत्त्वपूर्ण मामलों में परामर्श और निर्णय देने का अधिकार ऐसे लोगों को दे सकते हैं? जिस चींज को वे रोज खाते हैं उसपर वे एकमत नहीं हैं फिर भी वे एक स्वर में कहते हैं कि मैं लोगों की मतिभ्रष्ट करता हूँ!'

अगला प्रश्न है– सद्‌गुरु ओशो के अनुसार प्रेम की पराकाष्ठा अहोभाव है। उन्होंने ऐसा क्यों कहा?

ऐसा है!... बस इसलिए ऐसा कहा। अगर मैं तार्किक उत्तर दूंगा तो फिर दार्शनिक, बौद्धिक, सैद्धांतिक चर्चा छिड़ जाएगी। बेहतर होगा कि हम अहोभाव में डूबें। स्वाद लें प्रेम का। वह स्वाद ही प्रमाण बनेगा। मा ओशो प्रिया ने बहुत सुंदर गीत गाया है; आओ, हम सब मिलकर नाचें, गाएं, उत्सव मनाएं। सद्‌गुरु के प्रति अपने अहोभाव व्यक्त करें– सच्ची पूजा! आपके सवाल का, यह शाब्दिक नहीं, हार्दिक जवाब है।

मुझको दुनिया से क्या, मुझको जन्नत से क्या, ओशो सारे जहानों के आधार हैं,
उनसे वाबस्ता है, अब मेरी ज़िंदगी, ओशो फ़िरदौस हैं, मेरा संसार हैं।

लाख आंधी चलें, लाख तूफ़ां उठें, चाहे कितने ही हमले हवाएं करें,
डूब सकती नहीं कश्ती–ए–ज़िंदगी, ओशो थामे हुए इसकी पतवार हैं।

लोग कहते है काफ़िर तो कहते रहें, लोग देते हैं फ़तवे तो देते रहें,
मैं तो सजदे पे सजदा करूंगा उन्हें, ओशो ही मेरे मौला हैं, सरकार हैं।

वो न अवतार हैं, वो न अरिहंत हैं, न पैगम्बर हैं वो, न ही वो संत हैं,
वो किसी कोटि में भी समाते नहीं, ओशो आकाश हैं, नूर–ए–मीनार हैं।

कब मेरे सामने उनका चेहरा नहीं, उम्र का कौन–सा लम्हा संवरा नहीं,
रात–दिन मेरी यादों में महका किये, ओशो फूलों की खुशबू हैं, महकार हैं।

मुझको दुनिया से क्या, मुझको जन्नत से क्या, ओशो सारे जहानों के आधार हैं,
उनसे वाबस्ता है, अब मेरी ज़िंदगी, ओशो फ़िरदौस हैं, मेरा संसार हैं।

अंतिम सवाल– प्रभु, आज कोई लतीफा नहीं सुनाएंगे क्या?

निराश मत हो वत्स। ले, कान खोलकर सुन–

◦ दुर्घटना में घायल पति होश में आने पर पूछने लगा–क्या मैं स्वर्ग पहुंच गया हूं?

पत्नी–नहीं जी, अभी तो मैं आपके संग हूं। यह अस्पताल है। तुम जिसे अप्सरा समझ रहे हो वह श्वेत वस्त्रधारी सुंदरी यहां की नर्स है।

° अफसर– क्या तुमने नोटिस नहीं पढ़ कि बिना अनुमति के प्रवेश निषेध है?

मुल्ला– पढ़ा है सर, इसीलिए तो अनुमति मांगने अंदर आया हूं। बताइए क्या मैं आ सकता हूं?

° चंदूलाल का बेटा– मेरे बाल झरने लगे, चांद निकलने लगी, मैं अपने पापा पर गया हूं। लेकिन यार, तू इतना बड़ा हो गया अभी तक तेरी दाढ़ी–मूछें नहीं आईं?

फजलू– यार, असल बात यह है कि मैं बिल्कुल अपनी मां पर गया हूं।

° एक पंडित अपने कंधे पर तोता बिठाकर बाजार से गुजर रहा था। किसी ने पूछा– यह कौन सा जानवर है? पंडित के पहले ही तोता बोल पड़ा– 'जी, यह उल्लू है।'

° पत्नी ने बताया– डॉक्टर साहब ने मुझे स्वास्थ्य सुधारने के लिए एक माह कहीं विदेश घूम आने की सलाह दी है। हम लोगों को कहां जाना चाहिए? सेठ चंदूलाल बोले– किसी दूसरे अच्छे डॉक्टर के पास, जो ऐसी बेहूदी और मंहगी सलाह न दे।

धन्यवाद। शुभ रात्रि।

6

सद्‌भावनाएं अधिक शक्तिशाली

पहला प्रश्न– 'सीक्रेट' नामक फिल्म में अलादीन नामक एक जीन आता है और वह बोलता है कि जो हुक्म मेरे आका! फिर उसने बताया कि जो एक्जिस्टेंस है वह भले और बुरे में फर्क नहीं करता। अगर आपने कोई बुरी चीज मांगी तो मिल जाती है, ऐसे ही किसी के बारे में बुरा चाहो तो बुरा हो जाता है। तो अगर हम कुछ मांग रहे हैं जैसे जो लोग हमारे लिए अच्छा करते हैं क्या उनके लिए हम भी अच्छा मांग सकते हैं? क्योंकि अगर किसी के लिए मैं बुरा सोच रही हूं तो वह तो कर्मबंध हो जाएगा और मेरे लिए तो और ज्यादा बुरा होगा। मैं यही जानना चाहती हूं कि क्या मेरी सोच सही है?

सीक्रेट फिल्म की हर बात को आप सही मानकर नहीं चलिए, उन लोगों ने जो खोजबीन की है वह चार साल पुरानी हो चुकी है। उस समय तक उनकी जैसी खोज थी वैसा उन्होंने उसमें दिखाया है। समझिए कि सौ परसेंट स्टेटमेंट उसमें जो दिए गए हैं वे सही नहीं हैं। काफी हद तक बातें ठीक हैं, कहीं–कहीं पर मिस्टेक है। उदाहरण के लिए अच्छे और बुरे के विचार, सद्‌भावनाएं बहुत पावरफुल होती हैं, खराब विचार और खराब भावनाओं की तुलना में।

इसका प्रमाण आप चारों तरफ देख लें काफी लोग ज्यादातर बुरा करना चाह रहे हैं, हानि पहुंचाना चाह रहे हैं उसके बावजूद भी जीवन क्रमशः मंगल की दिशा में विकसित होता जा रहा है। डार्विन का विकासवाद क्या यह सिद्ध नहीं कर रहा है कि अस्तित्व एक मंगलमय

दिशा में गतिमान है! हजारों बाधाएं आईं, मुश्किलें आईं लेकिन कुल मिलाकर हम देखते हैं कि बेहतर से बेहतर चीजें होतीं जा रहीं हैं।

अशुभ करने वाले लोग सदा से रहे हैं, उनकी गिनती भी ज्यादा रही है लेकिन फिर भी अस्तित्व की डिजाइन कुछ ऐसी है कि दुर्विचार और दुर्भावनाओं का उतना असर नहीं होता, वे उतनी प्रभावी नहीं हैं जितनी कि सद्भावनाएं और सद्विचार। चाहे वैसे लोग हमें कम ही नजर आते हैं दुनिया में जिनको हम सद्पुरुष कह सकें फिर भी उनके विचार, उनका संकल्प, उनका विलपावर ज्यादा मजबूत है।

मैं एक–दो उदाहरणों से समझाता हूं। ओशो ने जिक्र किया है महर्षि अरविंद का। ओशो का कहना है कि महात्मा गांधी और उनके संगी–साथियों ने जितनी मेहनत की भारत को आजादी दिलाने में उससे ज्यादा बड़ा योगदान अरविंद का है। यह बात हमें चौंकाने वाली लगेगी। अरविंद तो अपने आश्रम में, अपनी कुटिया में रह रहे थे। साल में एक बार अपने जन्मदिन पर वे बाहर निकलते थे और लोगों से मिलते थे, उनका योगदान भारत को आजाद कराने में कैसे हो सकता है?

ओशो कहते हैं वे अपने घर में बैठे हुए जो विलपावर की तरंगें चारों तरफ फैला रहे थे उनकी वजह से देश आजाद हो सका। हमें जो लोग बड़े कर्मठ नजर आ रहे थे... स्वतंत्रता संग्राम सेनानी... ओशो कह रहे हैं ये भी एक व्यक्ति के दम पर... वह जो संकल्प कर रहा था कि देश आजाद हो जाएगा, उसकी शक्ति से बहुत लोग ऐक्टिव हो गए। इतिहास में तो अरविंद का नाम कहीं भी नहीं आएगा स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों में लेकिन ओशो कह रहे हैं एक और छुपा हुआ इतिहास है जो हमें दिखाई नहीं देता।

हम एक कलेक्टिव कॉन्शसनेस के हिस्से हैं, ऊपर–ऊपर से हम इंडीविजुअल लगते हैं बस। जैसे सागर में बहुत सारी लहरें उठती हैं तो हर लहर अपने आपको अलग–अलग समझती होगी लेकिन हम जानते हैं कि एक सागर में सभी लहरें एक ही हैं, हर लहर के अंदर वही सागर है लेकिन लहरें इस बात को नहीं देख सकतीं।

समझो एक लहर अभी बचपन से ऊपर की तरफ उठ रही है उसी के बगल से एक बूढ़ी लहर है जो कि गिर रही है। अब ये जवान होती हुई लहर कैसे मानेगी कि वह गिरती हुई बूढ़ी लहर मेरा ही हिस्सा है कि मैं इसका ही एक्सटेंशन हूं, नहीं मान सकती। दोनों बिल्कुल अलग–अलग नजर आ रहीं हैं, कोई बड़ी है तो कोई छोटी है, कोई खत्म होने वाली है, कोई उठने वाली है, कोई मध्य में है, सबकी पोजीशन अलग–अलग है लेकिन फिर भी हम दूर से देखते हैं चीजों को और हम जानते हैं कि एक ही सागर है और वही सब लहरों में मौजूद है।

लगभग ऐसी ही स्थिति हमारे चेतन मन की है। चेतन मन हम सबका अलग–अलग है। भिन्न–भिन्न भांति के संस्कार, शिक्षा, उपदेश, लालन–पालन हुआ, माता–पिता ने भिन्न–भिन्न बातें हमारे मन में डालीं, अलग प्रकार के शिक्षक सबको मिले, अलग प्रकार की किताबें पढ़ीं–लिखीं, बातें सुनीं, तो सबका चेतन मन भिन्न–भिन्न है। लेकिन जब हम अवचेतन में जाते हैं वहां पर हम पाते हैं कि सब चीजें आपस में जुड़ी हुई हैं, इतनी अलग–अलग नहीं हैं।

एक इंडीविजुअल सबकॉन्शस, उसके और नीचे फिर कलेक्टिव सबकॉन्शस और उसके

नीचे भी एक कॉस्मिक सबकॉन्शस है। एक व्यक्तिगत, उसके नीचे सामूहिक जिसमें पूरी मनुष्य जाति जुड़ी हुई है और उसके भी नीचे ब्रह्म अचेतन... पूरा अस्तित्व ही वहां एक है। ठीक इसी प्रकार ओशो ने सुपरकॉन्शसनेस का भी विभाजन किया है। इंडीविजुअल, कलेक्टिव और एक कॉस्मिक सुपरकॉन्शस, जिसको हम कहें ध्यान, समाधि और संबोधि।

ध्यान में हम व्यक्तिगत ज्यादा हुए, जब हम कलेक्टिव कॉन्शसनेस में पहुंचे तो समाधि की स्थिति हो गई, ध्यान के शिखर पर पहुंच गए जहां हम पूरी मनुष्य जाति से जुड़ गए। उसके और ऊपर गए जिसको कहें निर्विचार समाधि पतंजलि की भाषा में, निर्बीज समाधि। अब हमारी कोई अलग से कामना न रही, वहां पूरे अस्तित्व के साथ एक हो गए। ऐसी वस्तुस्थिति है और चूंकि पूरा अस्तित्व एक मंगलमय दिशा में गतिमान है इसलिए हमारा चेतन मन कुछ बुरा भी करना चाहे, नुकसान पहुंचाना चाहे तो छोटे–मोटे रूप में ही उसके प्रभाव आते हैं, बहुत बड़े रूप में नहीं।

कई बार ऐसा भी होता है जो घटना हमें बहुत बुरी दिखाई दे रही है उसके आगे जो कॉन्सीक्वेंसेस (परिणाम) हैं, वे फिर हमें भले नजर आते हैं, गौर से आप देखिएगा। आप अपने ही जीवन की घटनाओं से देख सकते हैं। कभी आपको लगा होगा कि ये तो बहुत बुरा हुआ लेकिन आप थोड़ा सा गहराई से देखेंगे तो पाएंगे कि बहुत सी अच्छी चीजें उसी की वजह से हो पाईं जो उस समय हमें खराब लगी थीं।

समझो द्वितीय विश्वयुद्ध हुआ और परमाणु हथियारों का उपयोग किया गया। सारी दुनिया दुखी हुई और बहुत बुरा लगा। लगा कि अशुभ शक्तियां जीत गईं, परमाणु हथियार नहीं जीतने चाहिए थे। लेकिन लौटकर देखें तो अब परमाणु हथियार के डर से विश्वयुद्ध नहीं हो पाएगा। जब तक छोटे–मोटे हथियार थे तब तक युद्ध चलते ही रहते थे। अब रिस्क इतनी बड़ी है कि अब शत्रु ही नहीं मरेगा, जो जीतेगा वह भी खत्म हो जाएगा, अब कोई बचने वाला नहीं है, ऐसे हथियार बन गए हैं।

तो एक तरफ से खूब बड़ा खतरा है और दूसरी तरफ से इसमें से भी एक शुभ बात निकल आई, अब शायद विश्वयुद्ध जैसी स्थिति कभी न बने। अब अगर सारे देश लड़ेंगे तो सभी नष्ट हो जाएंगे, कोई नहीं बचेगा, कोई यह कहने को भी नहीं बचेगा कि हम जीत गए। हथियारों का विकराल रूप धारण कर लेना स्टारवॉर और बायलॉजिकल वेपन्स, अब राजनीतिज्ञ इतने पागल नहीं हो सकते। अब युद्ध का मतलब आत्महत्या भी उसमें जुड़ जाएगी, सब मरेंगे। इतना मूर्च्छित कोई नहीं हो सकता कि इसके लिए तैयार हो जाए।

तो एक तरफ से तो अशुभ हुआ लेकिन दूसरी तरफ उसके शुभ परिणाम भी आए। कुल मिलाकर हम देखते हैं कि चीजें बेहतर से बेहतर, और बेहतर होती चली जा रही हैं। पिछला पूरा इतिहास उठाकर देख लें। अपनी खुद की जिंदगी में देख लें। आपको अपनी दो–तीन पीढ़ियों के बारे में पता होगा, उनकी कहानी देख लें। आप पाएंगे कि शुभ और अशुभ में ही गतिमान हो रही हैं बातें। और इसलिए यह परिणाम है कि जो व्यक्ति शुभ में, सत्यम् शिवम् सुंदरम् की भावनाओं में डूबा है उसकी भावनाओं को अस्तित्व भी सपोर्ट करता है। और जो इस विकास के खिलाफ चल रहा है, विनाश की ओर, वह अस्तित्व से उल्टी दिशा में जा रहा है।

ये तो ऐसे ही हुआ कि एक छोटा सा घास का तिनका नदी से विपरीत दिशा में बहने की कोशिश करे। कोशिश वह कर सकता है, थोड़ी सी सफलता उसको मिलेगी, अगर वह भारी मेहनत करेगा तो थोड़ी सी सफलता उसको मिलेगी, लेकिन पूर्ण सफलता नहीं मिल सकती। क्योंकि नदी जिस दिशा में जा रही है वह मंगलमय है। पूरा अस्तित्व जहां बह रहा है, अगर हम भी शुभ और मंगल से भरे हैं, तो हमारी गति भी बहुत तीव्र हो जाएगी। यही फर्क है इवॉल्यूशन और रिवॉल्यूशन में।

इवॉल्यूशन अपने आप हो रहा है... प्रकृति के गिफ्ट की तरह... हम उसमें कुछ कर नहीं रहे। जिसको ओशो कहते हैं क्रांति, आध्यात्मिक क्रांति उसमें हमने समझदारी से उसी दिशा में तैरने की कोशिश की जिस दिशा में पानी जा ही रहा है। तब हमने श्रम बहुत ही कम किया और परिणाम बहुत अच्छे आएंगे।

ये ऐसे ही है जैसे पुराने जमाने में पाल वाली नाव चला करती थीं। जिस दिशा में हवा बह रही है उसी दिशा के लिए नाव के पाल खोल दिए। अब हमें कोई पतवार चलाने की जरूरत नहीं है, हवाएं ही हमें वहां ले जाएंगी। और जब हवा विपरीत दिशा में बह रही है तब हमने यात्रा करने की कोशिश की तो बहुत मुश्किल होगी, खूब पतवारें चलानी पड़ेंगी और तब भी जरूरी नहीं कि हम अपनी मंजिल को पा लें।

आप पूरे इतिहास को एक बार फिर से रिव्यू करिएगा, हमारी जिंदगी तो छोटी सी है शायद इसमें हम ठीक से नहीं देख पाएंगे, इतिहास को उठाकर देखिए। बुरे लोग हुए, बुराई करने की कोशिश की, कुछ समय के लिए ऐसा लगा कि वे सफल हो गए हैं लेकिन कालांतर में हम देखते हैं कि वे असफल हो गए। हमेशा शुभ शक्तियां ही जीत रही हैं और इससे स्पष्ट है कि अस्तित्व की नदी शुभ दिशा में जा रही है।

दूसरा प्रश्न– हम अवचेतन में न जाकर नींद में पहुंच जाते हैं, क्या करें?

ये समस्या हमेशा से ध्यानी साधकों के साथ रही है। इसका एक सरल सा उपाय है कृपया अपनी नींद की जरूरत को पूरा करें। विशेषकर आधुनिक जमाने में, विद्युत की खोज के बाद, टेलीवीजन, मोबाइल और इंटरनेट आने के बाद, लोगों की नींद बहुत कम हो गई है, सम्यक् निद्रा नहीं हो पा रही है और इसलिए जैसे ही आप रिलैक्स होंगे, चाहे ध्यान के लिए, चाहे सम्मोहन के लिए, आप पाएंगे कि नींद ने घेर लिया।

तो आधुनिक मनुष्य की यह समस्या एक नई समस्या है। पुराने जमाने में थोड़े–बहुत लोगों को ही ऐसा होता था, अनिद्रा के रोगियों को। आजकल काफी छोटी उम्र से ही पढ़ाई–लिखाई का बोझ, होमवर्क, रात को लोग बहुत देर तक जाग रहे हैं। जो नींद का समय था वह बीत गया, फिर सुबह बिस्तर पर पड़े भी हैं लेकिन नींद में वह गहराई नहीं हो सकती जो उचित समय में होनी चाहिए थी। तो नींद की जरूरत पूरी नहीं हो पाती, वह पेंडिंग रह जाती है। शरीर बस सोने–सोने को हो रहा है, जब देखो तब। और जैसे ही हम रिलैक्स हुए नींद आ गई।

जब तक तनाव में हैं, कोई कर्म कर रहे हैं, कोई चिंता है, कोई श्रम में लगे हैं तब तक हम मजबूरी में होशपूर्ण हैं, भीतर–भीतर बेहोशी छा रही है, नींद आ रही है, जैसे ही रिलैक्स हुए

कि बस, खर्राटे भरना शुरू। ऐसी स्थिति में ध्यान अथवा सम्मोहन नहीं हो सकेगा। नींद में हम कुछ नया सीख नहीं सकते, हिप्नोसिस में, तंद्रा की अवस्था में हम कुछ नया सीख सकते हैं, कुछ नया पैदा कर सकते हैं, मन को रूपांतरित कर सकते हैं। नींद में ऐसा नहीं हो सकता। तो कृपया इस बात का ध्यान रखें।

ओशो कहते हैं साधक के लिए तीन बातें बहुत महत्त्वपूर्ण हैं– सम्यक् निद्रा, सम्यक् आहार और सम्यक् श्रम। शारीरिक श्रम भी जरूरी है, आज के आधुनिक युग में वह भी बहुत कम हो गया, फिजिकल ऐक्टीविटीज बहुत कम हो गईं हैं। घर से निकले कार में बैठे, कार से उतरे ऑफिस में चले गए, फिर कार से लौट कर आए तो अपने सोफा में बैठ गए, कोई फिजिकल ऐक्टीविटी बची ही नहीं। मन पर बहुत ज्यादा बोझ पड़ गया और शरीर से सारा श्रम खो गया, असम्यकता हो गई।

मन बेचारा जरूरत से ज्यादा काम कर रहा है और शरीर जो काम करने के लिए बना था उसको काम करने का मौका ही नहीं मिल रहा। तो हमारा श्रम डगमगा गया, गड़बड़ हो गया, हमारी नींद असम्यक् हो गई, अधूरी हो गई और भोजन भी बहुत गड़बड़ हुआ। खासकर पिछले सौ सालों में संपन्नता आई, विज्ञान विकसित हुआ, औद्योगिक क्रांति हुई, हरित क्रांति हुई। काफी भोजन उपलब्ध है। चिकित्सा विज्ञान डेवलप हुआ, अब हमें पता है कि क्या खाना चाहिए और क्या नहीं खाना चाहिए। जरूरत से ज्यादा लोग खाए जा रहे हैं। यह भी निद्रा का एक कारण है।

अगर हम आवश्यकता से अधिक भोजन लेंगे तो उस भोजन को पचाने के लिए हमारी सारी ऊर्जा पाचनतंत्र में चली जाएगी और मस्तिष्क, जहां ऊर्जा चाहिए सजगता के लिए, उसको मौका ही नहीं मिलेगा। इसलिए आपने गौर किया होगा कि खाना खाने के बाद तुरंत ही नींद आने लगती है। यह बिल्कुल प्राकृतिक है, स्वाभाविक है, ऐसा ही होना चाहिए। तो साधक को यह सब समझते हुए प्रकृति की लीला देखते हुए, उसके अनुसार अपने आपको एडजस्ट करना होगा। हम और लोगों की भांति, जैसा सब लोग संसार में जी रहे हैं, वैसा नहीं जी सकते। हमें अपना रास्ता निकालना होगा। इन तीन बातों का तो विशेष ही ख्याल रखना होगा कि हमारा भोजन, हमारा श्रम और हमारी नींद का समय– इनमें एक संतुलन हो, सम्यकता हो। मैं चाहूंगा कि इस संबंध में विस्तार से समझने के लिए 'ध्यानसूत्र' नामक प्रवचनमाला में ओशो का एक प्रवचन है– पहला प्रवचन, वह सुनिए अथवा पढ़िए, तभी नींद की समस्या से मुक्ति होगी।

तीसरा प्रश्न– पढ़ाई करते समय बहुत विचार चलते हैं उसके लिए क्या करना चाहिए?

पहली बात यह समझ लीजिए कि अध्ययन–मनन, चिंतन–विचार, करीब पच्चीस प्रतिशत लोग इसके लिए बने हैं। पुराने जमाने में जिसके लिए हम कहते थे ब्राह्मण। मेरा तात्पर्य यहां जाति से नहीं है, मेरा तात्पर्य उन लोगों से है जो मननशील हैं, जिनको विचार में मजा आता है। जिनके लिए गणित, जिनके लिए विज्ञान, जिनके लिए अध्ययन बहुत ही रसपूर्ण है। उनके लिए स्कूल कॉलेज जाना बड़ा आनंददायी है, उनकी प्रकृति के अनुकूल है। लगभग पच्चीस परसेंट लोग ऐसे हैं, उनको कभी ऐसी समस्या उत्पन्न नहीं होती।

समस्या क्या है?... हमारे समाज ने हमको फोर्स किया है, सौ प्रतिशत बच्चों को, कि सबको पढ़ना है। वह पचहत्तर प्रतिशत इसमें बुरी तरह पिस जाते हैं, उनकी प्रकृति इसमें मैच नहीं कर रही। उन्हें कोई इंट्रेस्ट, रुचि नहीं आ रही है, वे बोर हो चुके हैं। कल मैं एक चुटकुला पढ़ रहा था कि नींद लाने का गैररासायनिक उपाय, टेक्स्टबुक उठाओ और सो जाओ! पचहत्तर प्रतिशत लोगों के लिए ये बात बिल्कुल सही है। भले ही वे दस–बीस साल पहले पढ़ाई–लिखाई पूरी कर चुके हों, उनको एक कोर्स की किताब लाकर पकड़ा दो कि इसको पढ़ो, एक पेज भी न पढ़ पाएंगे और खर्राटे भरने लगेंगे।

तो यह समस्या समाज के द्वारा बनाई गई है। पुराने जमाने में एक विभाजन था, चार प्रकार के वर्ण बांटे गए थे मैं उसके पक्ष में नहीं हूं कि जन्म से वर्ण तय हो किन्तु इस बात की वैज्ञानिकता को समझें कि चार प्रकार के लोग हैं। पच्चीस प्रतिशत लोग ऐसे हैं जो बड़े मननशील हैं, जिनका मन बहुत ऐक्टिव है। पच्चीस प्रतिशत लोग फिजिकली ऐक्टिव हैं, पच्चीस प्रतिशत लोगों के लिए धन बहुत आकर्षण का केन्द्र है, जिन्हें पुराने जमाने में हम वैश्य कहते थे और एक चौथाई लोग शक्ति में रुचि लेते हैं।

तो कुछ लोग संपत्ति में, कुछ लोग शक्ति में, कुछ लोग बुद्धि में और कुछ लोग शारीरिक श्रम में– ये चार प्रकार के साइकोलॉजिकल विभाजन हैं। अगर हमें अपनी प्रकृति के अनुकूल, अपने स्वधर्म से मिलता–जुलता जीवन जीने को मिल जाए तो हमारी प्रसन्नता में चार चांद लग जाते हैं। अगर ऐसा नहीं हो पाता तो हम मजबूरियों में, नासमझी में, परिवार ने, समाज ने जिस दिशा में हमें धकेल दिया, उसी दिशा में बढ़ते चले जा रहे हैं– चाहे वह हमारे लिए बिल्कुल भी अनुकूल नहीं है तो भी मजबूरी में फिर हम घिसट रहे हैं, चल नहीं रहे हैं।

तो समाज ने एक ऐवरेज चीज सब पर लादने की कोशिश की है। इसके कारण बड़ी मुसीबत होती है। अब जिसने ये सवाल पूछा है निश्चित ही ये उस प्रवृत्ति के नहीं हैं जिनको अध्ययन मनन में रस हो। जब पढ़ाई करने का वक्त आता है उसी समय दुनिया भर के विचार खोपड़ी में चलते हैं, इसका मतलब इनको इसमें रुचि ही नहीं है। जिस चीज में हमको रुचि होती है उस चीज में हमारा मन बिल्कुल स्तब्ध हो जाता है, हम पूरे प्राण से उस चीज को ऐब्जॉर्ब कर लेना चाहते हैं, वह हमारी रुचि की चीज है।

तो ऐसा मत कहिए कि मन नहीं लगता, कि मुझमें कॉन्संट्रेशन कैपेसिटी नहीं है, हर व्यक्ति में कॉन्संट्रेशन कैपेसिटी है, बशर्ते कि वह जो विषय है वह उसकी रुचि का हो। अगर हम उसके सामने ऐसी चीज रखेंगे जिसमें उसका रस ही नहीं है, बिल्कुल नीरस है, उबाऊ है तो उसका मन कैसे लगेगा! याद रखना, कोई चीज अपनेआप में उबाऊ नहीं होती, ये तो हमारा और उसके बीच में कैसा संबंध निर्मित होता है, उस पर निर्भर है। अगर हमारी प्रकृति से वह बात मैच नहीं करती तो हमको उसमें कोई मजा नहीं आएगा, फिर हमारा चित्त इधर–उधर भागेगा और हम कहेंगे चित्त बड़ा चंचल है।

इसमें बेचारे चित्त का कोई दोष नहीं है। चित्त चंचल नहीं है, आपने उसको ऐसी चीज दी है जो उसके अनुकूल ही नहीं है। अगर हम उसके अनुकूल स्थिति बनाते तो बिल्कुल एकाग्र हो जाता। तो पचहत्तर प्रतिशत लोगों के मन में जो बात भर गई है कि हममें एकाग्रता की शक्ति

नहीं है ये उनकी भ्रांति है, इस भ्रांति से मुक्त हो जाएं। एकाग्रता की शक्ति आपके भीतर भी है बशर्ते की आपके रुचि के मुताबिक किसी क्रिया में आपको संलग्न किया जाए। फिर आपको बड़ा मजा आएगा, आप सारी दुनिया को भूलकर उसी में लग जाओगे।

जिसको फिल्म देखने में मजा आता है उसके लिए बहुत रसपूर्ण है, सारी दुनिया को वह भूल जाता है, पूरी तरह एकाग्र तीन घंटे के लिए फिल्मी टॉकीज में बैठकर। उसको तो ये भी पता नहीं चल रहा कि पैर में मच्छर काट गए, कि भूख लगी है, कि खाली पेट जलन हो रही है, कि बैठे–बैठे कमर दुख रही है... कुछ नहीं पता चल रहा है। तीन घंटे बाद पता चलेगा कि कमर अकड़ गई और मच्छरों ने काट लिया और जोर की भूख लगी है... ये सब तीन घंटे बाद पता चलेगा।

हां, जिसको फिल्म में मजा नहीं आ रहा है उसे सारी चीजों का पता चलेगा। अभी मच्छर पास आकर भिनभिनाया तभी उसे पता चल गया और वह उसको उड़ाने में लग गया। वहां उसके लिए इस मच्छर को उड़ाना ज्यादा महत्त्वपूर्ण है और वह इंतजार कर रहा है कि कब इंटरवल हो और इंटरवल में जाकर कुछ खाएं–पिएं, भूख लग रही है। उसको सुगंध आ रही है बाहर की कैंटीन से कि लगता है कि समोसे तले जा रहे हैं। फिल्म में क्या हो रहा है वह उसको नहीं दिखाई दे रहा है, उसको सुगंध आ गई बड़ी दूर की कि बस अब जाकर समोसे खाएंगे, चाय पिएंगे, कहां फंस गए, ये दोस्त पकड़ लाया कि अच्छी फिल्म है, आज तो मेरे तीन घंटे बर्बाद हो गए। इसको कोई मजा नहीं आ रहा है।

अब हम कहेंगे कि इसका चित्त बड़ा चंचल है, इसका चित्त चंचल नहीं है, इसके चित्त के उपयुक्त स्थिति नहीं है। तो हमें अपनी रुचि के अनुकूल अपने जीवन की दिशा खोजनी चाहिए। आपने फिल्म देखी होगी 'थ्री ईडियट्स'... उसकी कहानी मेरे ख्याल से सभी को पता होगी, कहने की जरूरत नहीं है। ओशो की जो किताब है 'शिक्षा में क्रांति' उसमें ओशो ने जो कहा है कि शिक्षा कैसी होनी चाहिए, ओशो की उसी फिलॉसफी को, उसी आइडिया के ऊपर इस फिल्म की कहानी आधारित है। उसका एक छोटा सा ही अंश है।

ओशो ने तो विराट, कई–कई एंगल से एजुकेशन सिस्टम को बदलने की बात कही है, लेकिन उसी का एक छोटा सा अंश कहानी में बड़े सुंदर ढंग से प्रस्तुत किया गया है। एक लड़का है जो कि चपरासी का बेटा था वह तो स्कूल भी नहीं जाता था लेकिन मालिक के बेटे के साथ वह भी स्कूल पहुंच जाता था और जब सबकी छुट्टी हो जाती थी तब वह बोर्ड पर चॉक से गणित हल करता। उस क्लास के बच्चों को भी उतना अच्छा गणित नहीं आता था जितना उस चपरासी के बेटे को आता था।

शिक्षकों को ये खबर मिली, उन्होंने उसके पिता के मालिक को बताया कि ये जो छोटा लड़का आता है ये तो बहुत ही होशियार है गणित में। उस मालिक ने उसकी पढ़ाई का पूरा इंतजाम कर दिया कि ठीक, इसको अगर इतना मजा आता है तो मैं पढ़ाई का खर्चा दूंगा। और आगे जाकर वह इंजीनियर बनता है। वह इनवेंटिव माइण्ड है, वह पैदाइशी इंजीनियर है, उसका दिमाग टेकनीकल है, मैथमैटिकल है। वह बिना पढ़े ही पहली कोटि में पास होता है, प्रथम दर्जे में आता है पूरे कॉलेज में।

कॉलेज का सबसे उपद्रवी लड़का है प्रोफेसर की नजरों में लेकिन परीक्षा में वही अव्वल दर्जे में आता है हमेशा। उसके लिए इंजीनियरिंग बिल्कुल स्वाभाविक है। जैसे अस्तित्व ने उसको इंजीनियर बनने के लिए ही पैदा किया है। और उसके दूसरे दो दोस्त हैं वे बेचारे परेशान हैं। एक को फोटोग्राफर होने का शौक है लेकिन उसके पिताजी ने मना कर दिया, दूसरे को कुछ और शौक था, उसके बाप ने उसको वह नहीं बनने दिया, ये प्रोफेसर जो हैं कॉलेज के, इनके खुद के बेटे ने सुसाइड कर लिया इंजीनियर बनने के चक्कर में।

अंततः इसके ये दो दोस्त हैं उनके परिवार से भी किसी प्रकार अनुमति मिल ही जाती है कि ठीक है, तुमको जो अच्छा लगता है वही करो। और तब ये तीनों ही दोस्त अपने–अपने क्षेत्र में बड़ी सफलता हासिल करते हैं। अगर वे दो दोस्त इसी दिशा में लगे रहते, इंजीनियर बनने की कोशिश में, तो बामुश्किल बेचारे इनफीरियॉरिटी कॉम्पलेक्स में भर कर पांच साल का कोर्स दस साल में पास करके थर्ड डिवीजन पास होकर कहीं इंजीनियर की छोटी–मोटी नौकरी कर रहे होते या हो सकता है बेरोजगार ही रहना पड़ता, नौकरी भी नहीं मिलती, दुर्गति होती। क्योंकि उनके मन का ये काम ही नहीं है, उनको कभी भी मजा नहीं आता। अगर वे इंजीनियर भी बन जाते, नौकरी भी पा जाते, आजीविका भी कमा लेते फिर भी मजा नहीं आता। ऐसा लगता कि जिंदगी बेकार गई, किस काम में फंस गए हम। यह सवाल एक व्यक्ति का ही सवाल नहीं है, जो आपने पूछा है कि पढ़ाई में एकाग्रता नहीं हो पाती क्या करें? यह एक समाज का, राष्ट्र का, पूरे विश्व का सवाल है और शिक्षाविदों को, समाज शास्त्रियों को इस बारे में सोचना चाहिए कि हम अपने बच्चों के संग क्या कर रहे हैं।

ठीक है, जो एसेंशियल एजुकेशन है वह थोड़ी–बहुत दे दो, कामचलाऊ कि एस.एम.एस. पढ़ना आ जाए, मोबाइल यूज करना आ जाए, कम से कम कैलक्युलेटर चलाना आ जाए... ये छुटपुट चीजें जरूरी हैं, इतना बहुत है। सबको परेशान करने की जरूरत नहीं है। दस–बारह साल तक प्राइमरी एजुकेशन देकर फिर मनोवैज्ञानिक रूप से स्टडी होनी चाहिए कि कौन बच्चा क्या हो सकता है, फिर उसको उसी दिशा में आगे बढ़ाया जाए, जबरदस्ती दबाव नहीं दिया जाए। और तब हम पाएंगे कि दुनिया में सैटिसफैक्शन बहुत ऊंचा पहुँच जाएगा।

सौ परसेंट लोग अपनी जिंदगी संतुष्ट होकर जिएंगे। अभी हालत ये है कि पंद्रह–बीस परसेंट लोग ही संतोषजनक हो पाते हैं बाकी सब असंतुष्ट हैं। उनको मन–माफिक कुछ मिला ही नहीं। सब चीजें थोप दी गईं। यह सामाजिक व्यवस्था का दुष्परिणाम है। व्यक्तिगत रूप से आप क्या कर सकते हैं ये थ्री ईडियट्स वाली कहानी से आपको इशारा मिल जाएगा, थोड़े से विद्रोही होना होगा, थोड़े से क्रांतिकारी होना होगा, थोड़ा अपने भीतर के छुपे हुए टैलेंट को समझना होगा और कभी–कभी परिवार के खिलाफ, समाज के खिलाफ कदम उठाने का साहस भी करना होगा।

अपनी जिंदगी व्यर्थ में दांव पर न लगाओ, उन चीजों में जिनमें आपको मजा ही नहीं आता। जितनी जल्दी अपनी दिशा बदल सको उतना सुंदर, जितनी दूर निकल जाओगे उतनी ही मुसीबत हो जाएगी, उतना ही लौटना कठिन होता जाता है। अपने भीतर टटोलो, तुम्हारे

प्राण क्या चाहते हैं, उस दिशा में क्या किया जा सकता है, इतना मजबूर कोई नहीं है कि कुछ न किया जा सके। और ऐसा नहीं सोचना कि परिवार के लोग हमेशा विरोध में हीं रहेंगे, ऐसा नहीं करने देंगे। ऐसा नहीं है।

अगर आप अपने हृदय की बात प्रेमपूर्वक, विनम्रतापूर्वक अपने घर–परिवार के लोगों से शेयर करोगे, उनको बैठकर बताओगे तो हो सकता है कि एक बार में न समझें, हो सकता है दो बार में न समझें लेकिन आखिरकार वे सब आपको प्रेम करते हैं, कैसे नहीं समझेंगे! हां, अहंकार में मत आना, जिद में मत आना, बहुत प्यार से, विनम्रतापूर्वक अपने हृदय की बात बताना कि मैं यह चाहता हूं, इसमें मुझे संतोष मिलेगा। आज नहीं कल, कल नहीं परसों निश्चितरूप से परिस्थितियां बदलेंगी, परिवार का सहयोग मिलेगा।

जब स्पष्ट हो जाएगा कि आपकी दिशा यही है तब सपोर्ट मिलेगा। अभी किसी को नहीं पता है। ऐसा नहीं है कि जानबूझकर आपको कोई सताना चाह रहा है, उन बेचारों को भी नहीं पता। माता–पिता का भी दोष नहीं है, शिक्षकों का भी दोष नहीं है, किसी ने इस संबंध में कभी पुनर्विचार किया ही नहीं, बस एक ढर्रा चला आ रहा है समाज में और सब भेड़चाल चले जा रहे हैं। सबके बच्चे स्कूल जा रहे हैं तो आपके माता–पिता ने भी भेज दिया।

ऐसा नहीं है कि इस बारे में किसी ने कुछ चिंतन–मनन किया है और आपके दुश्मन हैं इसलिए सता रहे हैं, ऐसा नहीं है। एक भेड़चाल सब चल रहे हैं। अगर आप इस पर पुनर्विचार करेंगे, अपने परिवार के लोगों से बात करेंगे तब लोग सोचेंगे क्योंकि आखिरकार वे आपको प्यार करते हैं, आपके जीवन में संतोष चाहते हैं इसलिए आप बताइए कि आपके भीतर क्या है। जरूर रास्ता बनेगा।

अगला सवाल– मेरी जिंदगी आप जैसी कैसे हो? फिलहाल ऐसी है–

हर इक जज़्बे से आरी कर रहा हूं, मैं खुद को कारोबारी कर रहा हूं
भटकता हूं खुली सड़कों पे यूं ही, जुनूं की पहरेदारी कर रहा हूं
कोई सुनता नहीं, पर गुफ्तगू मैं, सभी से बारी–बारी कर रहा हूं
अलग रहने लगी है नींद मुझसे, सो मैं भी शबगुज़ारी कर रहा हूं
कमा रक्खे थे थोड़े नोट मैंने, अब उनको रेज़गारी कर रहा हूं
ज़मींदारी तो कब की जा चुकी है, कब्रों की चौकीदारी कर रहा हूं।

ओमप्रकाश, सिर्फ तुम ही नहीं, ज्यादातर लोग यूं ही जिंदगी जी रहे हैं। बस, शबगुज़ारी कर रहे हैं, मानो अंधेरी रात काट रहे हैं। नाम मात्र को जी रहे हैं। किसी तरह समय काट रहे हैं। जैसे मौत का इंतजार कर रहे हों। कोई धन हाथ आया नहीं, कचरा–कूड़ा जमा कर लिया है, उसी की पहरेदारी कर रहे हैं। करें भी तो और क्या करें? आसपास सब अपने ही जैसे लोग नजर आते हैं। अच्छा हुआ कि तुम्हें इस तथ्य का पता चलना शुरु हुआ। अधिकांश लोग तो इस सच्चाई से वाकिफ तक नहीं हैं। जमींदार बने अकड़े फिर रहे हैं। जल्दी ही जमीं में गड़ा दिए जाएंगे। मिट्टी, मिट्टी में मिल जाएगी। सत्य की यह भनक सौभाग्यशालियों को मिलती है। तुम किस्मत वाले हो। जिसने अपनी विपत्ति को पहचाना, वही असली सम्पत्ति की तलाश

आरंभ करता है। जीवन की व्यर्थता का बोध ही सार्थकता की खोज में संलग्न करता है। संसार का स्वप्नवत दिखना, सत्य की तरफ पहला कदम है।

तुम्हारे माता–पिता ने तुम्हारा नामकरण किया है– ओमप्रकाश। यह नाम प्यारा है। ओम् अर्थात् आत्मा का संगीत, मीरा जिसे प्राप्तकर गा उठती है– पायोजी मैंने रामरतन धन पायो। तुम उस संपदा के मालिक हो। भीतर ओंकार का प्रकाश भी फैला हुआ है। ओमप्रकाश, तुम्हें निमंत्रण है। आओ, अंतर्यात्रा की कला सीखो। ध्यान में डूबकर वास्तविक खजाने को पा लो। अपने पिता द्वारा दिए नाम को चरित्रार्थ करो। 'ध्यान समाधि' और 'सुरति समाधि' शिविर में भाग लो।

आखिरी सवाल– गंभीर बातें गंभीर लोगों को समझाइए प्रभु। मैं तो मुल्ला नसरुद्दीन के इंतजार में कब से बैठा हूं। क्या मुझसे आपको प्रेम नहीं है?

है भाई, है! तुमसे भी प्रेम है, और मुल्ला से भी है। मैं भी इंतजार में था कि कोई पूछे तो सही। लो, सुनो इंतजार के बारे में– एक दिन जब मुल्ला नसरुद्दीन बाजार में टहल रहा था तब अचानक ही एक अजनबी उसके रास्ते में आ गया और उसने मुल्ला को एक जोरदार थप्पड़ रसीद कर दिया। इससे पहले कि मुल्ला कुछ समझ पाता, अजनबी फौरन ही अपने हाथ जोड़कर माफी मांगने लगा– 'मुझे माफ कर दें! मुझे लगा आप कोई और हैं'।

मुल्ला को इस सफाई पर यकीन नहीं हुआ। वह अजनबी को अपने साथ शहर काजी के सामने ले गया और उससे वाकये की शिकायत की। मुल्ला जल्द ही यह भांप गया कि काज़ी और अजनबी एक दूसरे को भीतर–ही–भीतर जानते थे।

काज़ी के सामने अजनबी ने अपनी गलती कबूल कर ली और काजी ने तुरंत ही अपना फैसला सुना दिया– 'मुल्जिम ने अपनी गलती कबूल कर ली है इसलिए मैं उसे हर्जाने के बतौर मुल्ला को एक रुपया अदा करने का हुक्म देता हूँ। अगर मुल्जिम के पास एक रुपया इस वक्त नहीं हो तो वह फौरन ही उसे लाकर मुल्ला को सौंप दे'।

फैसला सुनकर अजनबी रुपया लाने के लिए चलता बना। मुल्ला ने अदालत में उसका इंतजार किया। देखते–देखते बहुत देर हो गई लेकिन अजनबी वापस नहीं आया। काफी देर हो जाने पर मुल्ला ने काज़ी से पूछा– 'हुजूर, क्या आपको लगता है कि किसी शख्स को राह चलते बिना वजह थप्पड़ मार देने का हर्जाना एक रुपया हो सकता है?'

हाँ– काजी ने जवाब दिया।

काजी का जवाब सुनकर मुल्ला ने उसके गाल पर करारा चांटा जड़कर कहा– 'वह आदमी जब एक रुपया लेकर वापस आ जाये तो आप वह रुपया अपने पास रख लेना'– और मुल्ला वहां से चल दिया!

चलो, अब हम भी यहां से चलें। शुभ रात्रि।

7

प्रेम : आत्मा का भोजन

पहला प्रश्न– ओशो कहते हैं कि प्रेम आत्मा का भोजन है, इसका तात्पर्य समझाएं।

'ए सडन क्लैश ऑफ थंडर' नामक पुस्तक में वे समझाते हैं कि मैंने जीवन को तीन भागों में विभाजित किया है– नाश्ता, दोपहर का भोजन, दिन का अंतिम भोजन। बचपन है नाश्ते का समय। और ऐसा होता है यदि तुम्हें आज तुम्हारा नाश्ता नहीं दिया गया है, तुम दोपहर के खाने पर बहुत ज्यादा, सभी अनुपात के बाहर भूख महसूस करोगे। और यदि दोपहर का भोजन भी छूट गया है, तब रात के भोजन के वक्त तुम लगभग पागल हो जाओगे। प्रेम भोजन है इसलिए मैंने जीवन को तीन भागों में विभाजित किया हैः नाश्ता, दोपहर का भोजन, दिन का अंतिम भोजन।

प्रेम भोजन है, आत्मा का भोजन। जब कोई बच्चा पहली बार अपनी मां के स्तन को चूसता है, वह दो चीजें पा रहा, केवल दूध नहीं। दूध उसके शरीर में जा रहा है और प्रेम उसकी आत्मा में जा रहा है। प्रेम अदृश्य है, जैसे कि आत्मा अदृश्य है; दूध दिखता है जैसे कि शरीर दिखता है। यदि तुम्हारे पास देखने के लिए आंखें हैं, तो तुम दोनों चीजों को एक साथ मां के स्तन से बच्चे के अंतरतम में जाता देख सकते हो। दूध सिर्फ प्रेम का दिखने वाला भाग है; प्रेम दूध का अदृश्य भाग है– ममता, प्रेम, करुणा, आशीर्वाद।

यदि बच्चे से उसका नाश्ता छूट गया है, तब जब वह जवान होगा उसे प्रेम की बहुत ज्यादा जरूरत होगी... और वह मुसीबत पैदा करती है। तब वह प्रेम के लिए बहुत अधीर होगा. .. वह मुसीबत पैदा करता है। तब वह प्रेम के लिए बहुत जल्दी में होगा... जो कि मुश्किल पैदा

करती है क्योंकि प्रेम बहुत धीरे–धीरे बढ़ता है, वह धैर्य चाहता है। और जितने ज्यादा आप जल्दी में हैं, ज्यादा ही संभावना है कि आप खो देंगे।

क्या तुमने यह खुद में और दूसरों में देखा है? जिन्हें प्रेम की बहुत ज्यादा जरुरत होती है वे हमेशा परेशान होते हैं, क्योंकि वे हमेशा महसूस करते हैं कि कोई उनकी जरूरतें पूरी नहीं कर रहा। वास्तव में, कोई दोबारा उनकी मां बनने नहीं जा रहा है। मां बच्चे के रिश्ते में, बच्चे से कोई उम्मीद नहीं की जाती थी। एक बच्चा क्या कर सकता है? वह असहाय है। वह कुछ भी वापस नहीं कर सकता। ज्यादा से ज्यादा वह मुस्कुरा सकता है, यही सब कुछ है, या अपनी आंखों से देखता है कि मां कहां जा रही है, यही सब कुछ है। छोटी, खूबसूरत भाव–भंगिमाएं लेकिन इससे ज्यादा वह क्या कर सकता है। मां को देना है, बच्चे को लेना है।

यदि नाश्ते के समय तुमने यह खो दिया है, तब तुम एक ऐसी स्त्री को ढूंढ़ रहे होगे जो कि तुम्हारी मां बन सके। अब, एक स्त्री प्रेमी ढूंढ़ रही है, ना कि पुत्र; वहां परेशानी होनी ही है। शायद किसी मौके से, या दुर्घटना से, तुम किसी ऐसी स्त्री को मिल सकते हो जो पुत्र ढूंढ़ रही है। तब बात बन जाएगी; तब दो बीमारियां एक दूसरे में मिल जाएंगी।

यह हमेशा होता है– एक निराशावादी हमेशा एक आशावादी को ढूंढ़ ही लेता है जिसके साथ उसका मेल हो सके; एक परपीड़क हमेशा एक परपीड़ित ढूंढ़ ही लेता है; जो दूसरे पर मालकियत करना चाहता हो वह हमेशा ऐसे किसी को ढूंढ़ ही लेता है जो अधिकार में रहना चाहता है, तब वे एक–दूसरे के अनुकूल हैं। तुम दो परपीड़ितों को साथ रहता नहीं देख सकते, कभी नहीं। मैंने हजारों दंपतियों को देखा है, मैं अब तक एक भी ऐसे दंपति से नहीं मिल सका हूं जिसमें दोनों साथी परपीड़ित हों या दोनों परपीड़क हों। इस तरह साथ रहना असंभव है; उनका तालमेल होना जरूरी है। केवल विपरीत लोगों का ही तालमेल होता है, और लोग हमेशा विपरीत के साथ प्रेम में पड़ते हैं।

यदि तुम किसी स्त्री से मिल सकते हो जो पुत्र की तलाश में है...वह भी बहुत बदसूरत है, वह भी बीमार है, क्योंकि एक स्त्री को प्राकृतिक रूप से एक प्रेमी ढूंढ़ना चाहिए, बच्चा नहीं। और यही परेशानी है, और परेशानी और ज्यादा जटिल हो जाती है तब जब वह एक पुत्र को ढूंढ़ भी रही है, और वह इससे अनभिज्ञ है; और तब यदि तुम मां को ढूंढ़ रहे हो, तुम इससे अनभिज्ञ हो। वास्तव में, यदि एक स्त्री तुम्हारी मां बनने की कोशिश करे तो तुम आहत महसूस करते हो। तुम कहोगे, 'तुम क्या कर रही हो? क्या मैं बच्चा हूं?' और तुम मां को ढूंढ़ रहे हो। हजारों, लाखों लोग मां को ढूंढ़ रहे हैं।

इसलिए आदमी स्त्रियों के स्तनों में इतनी ज्यादा दिलचस्पी रखता है; अन्यथा स्त्रियों के स्तनों में इतनी ज्यादा दिलचस्पी रखने की जरुरत नहीं है। दिलचस्पी इतना ही दिखाती है कि तुम्हारे बचपन में, तुम्हारे नाश्ते के समय, तुमसे कुछ छूट गया है। यह अभी भी चल रहा है, यह अभी भी तुम्हारे मन में मंडरा रहा है, यह तुम्हारे पीछे पड़ा है। स्तन नाश्ते के समय के लिए हैं। अब इस उम्र में तुम क्यों सोचते रहते हो और चित्र बनाते रहते हो।

गहराई में देखो, क्योंकि यह तुम्हारी जिम्मेदारी नहीं है, इसका तुमसे कोई लेना देना नहीं है। अब तुम अपनी मां को बदल नहीं सकते। यह हुआ था जैसा हुआ था, लेकिन तुम

सजग हो सकते हो। तुम इन सभी अंदर की बातों के प्रति सजग हो सकते हो। और सजग होने के बाद चमत्कार घटित होता है। यदि तुम इन सभी बातों के प्रति सजग हो जाओ, वे छूटने लगती हैं। वे तुम्हारे साथ गहरी अचेतन अवस्था में चिपकी रहती हैं। एक गहन सजग अवस्था बदलाव की ताकत बन जाती है।

इसलिए बस सजग हो! यदि प्रेम के प्रति तुम्हारा रवैया बचकाना है, तो सजग हो जाओ, पता लगाओ, गहराई में खोजो। और बस सजग होने पर वे छूट जाती हैं। इसलिए किसी और की जरूरत नहीं है। ऐसा नहीं है कि पहले तुम सजग हो और तभी तुम पूछ सकते हो 'अब क्या करना है?' जिस पल तुम सजग हो जाते हो वे गायब हो जाती हैं, क्योंकि सजग होने में तुम परिपक्व होते जा रहे हो।

बच्चा जागरुक नहीं है। बच्चा गहन अचेतनता में जीता है। सजग होने में तुम प्रौढ़ होते जा रहे हो, परिपक्व, इसलिए वह सब कुछ जो तुम्हारी अचेतनता में चिपका हुआ था, गायब हो जायेगा। बस उसी तरह से जैसे तुम किसी कमरे में रोशनी करते हो और अंधेरा गायब हो जाता है; अपने दिल की गहराई में सजगता लाओ।

ऐसे लोग भी हैं जो दोपहर के खाने से भी वंचित रह गए हैं। तब बुढ़ापे में वे जिन्हें तुम 'सनकी बुड्ढा' कहते हो, वैसे बन जाते हैं। तब वे बुढ़ापे में लगातार सेक्स के बारे में सोचते हैं और कुछ नहीं। वे सीधे सेक्स के बारे में बात न कर सकें तो वे सेक्स के खिलाफ बात करना शुरू करेंगे लेकिन वे सेक्स के बारे में ही बात करेंगे। उनके खिलाफ होने से कोई फर्क नहीं पड़ता।

तुम भारत के तथाकथित साधुओं को सुनो, और तुम पाओगे वे लगातार सेक्स के खिलाफ बोलेंगे और ब्रह्मचर्य की तारीफ करेंगे। इन लोगों से दोपहर का भोजन भी छूट गया था। अब दिन के आखिरी खाने का समय आया है... और वे पागल हो रहे हैं। अब वे जानते हैं कि मौत आ रही है। और जब मौत पास आ रही है, और उनके हाथों से समय गायब हो रहा है, अगर वे विक्षिप्त हो जाते हैं तो यह स्वाभाविक लगता है।

इन विक्षिप्त लोगों के पास पुराने शास्त्रों की कहानियां हैं कि जब वे ध्यान करेंगे, स्वर्ग से सुंदर स्त्रियां– अप्सराएं उतर आयेंगी। उनके चारों ओर वे नग्न होकर नृत्य करेंगी। वे ऐसा क्यों करेंगी? हिमालय पर ध्यान में बैठे बुड्ढे आदमी के बारे में कौन परवाह करेगा, कौन फिक्र करे? वह लगभग मर चुका है कौन फिक्र करे? स्वर्ग की वे अप्सराएं, वे बेहतर लोग ढूंढ़ सकती हैं। वास्तव में, बहुत से लोग अप्सराओं का पीछा कर रहे हैं, उन्हें ऋषियों का, इन तथाकथित साधुओं का पीछा करने का समय कैसे मिल सकता है? ना, इसका अप्सराओं या स्वर्ग या किसी और से कोई लेना देना नहीं है। यह बस इतना है कि इन लोगों से नाश्ता या दोपहर का खाना या दोनों छूट गये हैं। और अंतिम भोजन के वक्त उनकी कल्पना उनसे जबरदस्त खेल खेल रही है। यह उनकी कल्पना है, भूखी कल्पना।

तुम एक काम करो– तुम बस तीन सप्ताह का उपवास रखो, और तब हर जगह तुम्हें खाना दिखना शुरू हो जाएगा... हर जगह! यहां तक कि पूर्णिमा के चांद को आसमान में देख कर तुम कह सकते हो कि यह चपाती जैसा लगता है। यह ऐसे घटेगा। तुम प्रक्षेपित करना

शुरू करोगे, तुम्हारी कल्पना तुम्हारे साथ खेल खेलेगी।

यदि ऐसा होता है, तब करुणा कभी नहीं आएगी। धीरे–धीरे चलो, सचेत, सजग, प्रेमपूर्वक। यदि तुम कामुक हो, मैं नहीं कहता सेक्स को छोड़ दो। मैं कहता हूं इसे और सतर्क कर दो, इसे और प्रार्थनापूर्ण बना दो, इसे और गहन बना दो, जिससे कि यह प्रेम बन सके। यदि तुम प्रेम कर रहे हो, तब इसे और ज्यादा अनुग्रहपूर्ण बना दो; गहन कृतज्ञता, आनंद, उत्सव पैदा करो, इसकी प्रार्थना करो, इसका ध्यान करो, ताकि यह करुणा बन सके।

जब तक करुणा का भाव तुममें न आए, सोचना भी मत कि तुम सही तरीके से जिये या तुम जिये भी। करुणा ही खिलावट है। और जब करुणा किसी व्यक्ति पर उतरती है, लाखों के घाव भर जाते हैं। जो कोई भी उसके पास आता है भला–चंगा हो जाता है। करुणा चिकित्सकीय है।

अगला सवाल– गृहस्थ जीवन में क्या अपनी खुशियों को दमन करके या नष्ट करके दूसरों को खुश रखना ही हमारा कर्तव्य है? अगर इसके अलावा और कोई रास्ता न हो तो फिर क्या करें? मैंने तो प्रभु से सुखी दाम्पत्य जीवन हेतु प्रार्थनाएं की थीं। अब जीवन जीना ठीक है या नहीं?

पहले एक कथा– मुल्ला नसरुद्दीन का लड़का था फजलू जिसको उल्टी खोपड़ी कहते हैं, अब जैसा बाप वैसा ही बेटा भी होगा! उससे कहो कि घर से बाहर न जाना तो वह पक्का तुरंत निकल जाएगा। उससे कहो कि अच्छा बाहर जाओ थोड़ी देर घूम आओ तो टस से मस नहीं होगा, वहीं बैठ जाएगा। कहो बेटा खाना खा लो भूख लगी होगी तो नहीं लगी है भूख। जो कहो ठीक उसका उल्टा।

नसरुद्दीन छोटे से गांव में रहता था, दूसरे शहर जाता था तो बीच में एक नदी पड़ती थी इसलिए नाव से जाना पड़ता था। उस पार किराने की दुकान थी तो सामान खरीदने जाता था। फिर बेटा बड़ा हो गया तो उससे भी सहयोग लेना शुरू किया लेकिन नसरुद्दीन समझ गया था कि इसको कैसे डील करना है। जैसे नाव में बैठे हैं और नमक, गेहूं, शक्कर के बोरे ला रहे हैं। तो मान लो कि बायीं ओर नाव में डूबने का डर पैदा हो रहा है, वजन ज्यादा है तो एक तरफ नसरुद्दीन बैठा है, बीच में बोरा रखा है और एक तरफ उसका बेटा बैठा है तो अगर उससे कहना है कि राइट साइड में थोड़ा खिसक जाओ जिससे नाव बैलेंस हो जाए तो उल्टा कहना पड़ेगा कि बाएं तरफ खिसक जा तो पक्का है कि वह राइट साइड में खिसकेगा, तो नाव बैलेंस में आ जाती थी।

तो नसरुद्दीन इस प्रकार से काम चलाता था, जो चाहता था उसका उल्टा कह देता था। और फजलू ठीक उल्टी खोपड़ी का था। नसरुद्दीन मन ही मन प्रसन्न रहता था कि अच्छा बुद्धू बनाया, अपना काम तो निकलवा ही लिया। ऐसा सालों चलता रहा। फिर एक दिन पता नहीं क्या हुआ, नसरुद्दीन ने कहा कि बेटा लेफ्ट साइड खिसक जाओ व सचमुच में खिसक गया और नाव पलट गई अब नमक और शक्कर के बोर पानी में गए

और भारी नुकसान हो गया।

नसरुद्दीन ने कहा कि फजलू तेरे को क्या हुआ? फजलू ने कहा कि डैडी अब मैं वयस्क हो गया हूं। अब मेरे संग धोखाधड़ी नहीं चलेगी, अब मैं बड़ा हो गया हूं, बुद्धिमान हो गया हूं, अब मैं ये नहीं देखूंगा कि आप क्या कह रहे हो, मैं आपका इरादा देखूंगा कि आप चाहते क्या हो। आप इशारे से ऐक्शन तो कर रहे हो बायें साइड खिसकाने का और मैं जानता हूं कि आपका इंटेशन है कि मैं दायीं साइड खिसकूं, मैंने पकड़ लिया। अब धोखाधड़ी नहीं चलेगी, आपने पिछले बीस सालों से मुझे बहुत बुद्धू बनाया है। अब ये सब नहीं चलेगा।

तो जब तक तुम परमात्मा को बुद्धू बना सको बना लो, अब पता नहीं कौन बन रहा है बुद्धू? परमात्मा तुम्हें बना रहा है कि तुम उसको बना रहे हो। सभी चीजें आपस में जुड़ी हुई हैं जैसे एक सिक्के के दो पहलू होते हैं। लेकिन जिंदगी कई पहलुओं वाली है। जब आप प्रार्थना कर रहे हैं कि प्रभु मेरी शादी करवा दे तो मैं सुखी गृहस्थ जीवन जिऊंगा तब परमात्मा भी हंसता होगा कि सुखी दाम्पत्य जीवन सिर्फ डिक्शनरी में लिखा है, ऐसा कहीं होता नहीं पागल। लेकिन आपको तो डिक्शनरी पर भरोसा है, आप अभी तो कॉलेज से पढ़कर निकले हैं... उसमें लिखा है एक शब्द, सुखी दाम्पत्य जीवन। आपको क्या पता कि ये केवल शब्द ही है इसके पीछे कोई यथार्थ नहीं होता।

इसलिए आप प्रभु से प्रार्थना करते हो कि हे प्रभु, मेरा विवाह करवा दे तो मेरा दाम्पत्य जीवन सुखी हो जाए। प्रभु ने करवा दिया। अब बाकी के जो दूसरे आसपेक्ट्स थे वे भी आ गए। चिंता भी आ गई, लड़ाई–झगड़े भी आ गए, अपेक्षाएं भी आ गईं, रोज का क्रोध–कलह भी आ गया। फिर शादी के पीछे–पीछे बच्चों की बारात भी आ गई। पूरी जमात, भारी उपद्रव और एक बात पक्की है, जैसे बच्चे आप चाहते थे उसके ठीक उल्टे आते हैं।

प्रकृति में आपने देखा होगा, ऑपोजिट अट्रैक्शन, नॉर्थ पोल चुंबक का साउथ पोल को खींचता है। तो आप जिन बच्चों को अपने पास खींचोगे वे कुछ उल्टे ही होंगे। आपके विचार से उनके विचार कभी नहीं मिलने वाले, वह काम भी एक नियम से चल रहा है। इन सारी मुसीबतों में घिरने के बाद अब आप कहोगे कि अब क्या करें। आपको समझना होगा, जिंदगी के कई पहलू हैं और वे सब आपस में संयुक्त हैं और एक पैकेज डील है। आप इसमें से एक चीज मांगेंगे तो कई चीजें मिलेंगी जैसे बाजार में स्कीम चलती है न, बाइ वन ऐण्ड गेट वन फ्री।

तो यहां परमात्मा इतना करुणावान है कि बाइ वन ऐण्ड गेट मेनी–मेनी फ्री, बहुत सारी चीजें दे देता है वह। आपने पत्नी मांगी थी, उसने आधे दर्जन बच्चे भी दे दिए। फिर बहू भी आ गई, फिर पोता–पोती भी आ गए, फिर भारी उपद्रव खड़ा हो गया। एक के पीछे एक सिलसिलेवार चीजें चली आ रही हैं क्योंकि सब चीजें आपस में जुड़ी हुई हैं। आप उन चीजों को मांग लेते हैं जिनके आगे–पीछे का आपको नहीं पता। और फिर ये सब मुसीबतें खड़ी होती हैं और हम कहते हैं कि ये सब कैसे हो गया। ये सब आपकी ही इच्छा से हुआ है।

आप जो कह रहे हैं कि जो मांगता हूं उससे विपरीत हो जाता है, अच्छा चाहता हूं तो बुरा हो जाता है, बुरा चाहता हूं तो अच्छा हो जाता है क्योंकि अच्छे के अन्य आसपेक्ट बुरे हैं और जो सामने से एक बुरा पहलू नजर आ रहा था उसके पीछे अच्छे आसपेक्ट भी हैं। चीजें संयुक्त

रूप से जुड़ी हुई हैं। जिस पैकेट में हीरे–जवाहरात हैं, उसमें सांप–बिच्छू भी हैं। तो जब भी ये पैकेट मिलेगा, पूरा का पूरा मिलेगा। अब आप कहो कि मैं तो हीरे–जवाहरात लेने गया था, सांप ने क्यों डंक मारा, बिच्छू ने काट लिया– ये तो हमने नहीं मांगा था। आपके मांगने, नहीं मांगने से क्या होता है, वे तो इकट्ठे आते हैं।

कोई युवक सोच रहा है कि अत्यंत सुंदर लड़की से विवाह करूंगा, ढूंढ़ रहा है और लाखों खर्च के बाद उसने ढूंढ़ ही लिया, विश्वसुंदरी, कम से कम नगर सुंदरी तो होगी ही होगी। अब उसने तो एक आसपेक्ट देखा कि अत्यंत सुंदर लड़की और उसने खूब मेहनत की और ढूंढ़ ली और कर ली उससे शादी। अब ये पैकेज डील थी। हीरे–जवाहरात के साथ बिच्छू भी थे वह बाद में पता चलेंगे जब आप घर लाकर पैकेट खोलेंगे। अब पता चला कि ये सुंदरी बहुत घमण्डी है। जब इतनी सुंदर है तो अहंकारी तो होगी ही होगी।

अब घर में उसकी किसी से नहीं पटती, अहंकारी लड़की, उसकी कैसे किसी से पटेगी। अब वह कहेगी कि मां–बाप से अलग हो जाओ, बंटवारा करो, इन लोगों के साथ मेरी नहीं पटती। अब नैचुरली चूंकि वह सुंदर है इसलिए उसको अन्य लोग बदसूरत नजर आ रहे हैं। चीजें तुलनात्मक हैं, उसको अपनी सास अच्छी नहीं लगती, उसको अपनी ननद अच्छी नहीं लगती, उसको जेठानी–देवरानी भी अच्छी नहीं लगती। बताने में शर्म आती है कि ये मेरी जेठानी है, सड़क पर इनके साथ निकलूंगी तो लोग क्या कहेंगे कि जेठानी की शक्ल तो देखो, इनके साथ मैं नहीं जा सकती। मैं किसी को बता नहीं सकती कि ये मेरी ननद है। आपने पहले सोचा ही नहीं था कि सुंदर पत्नी लाने से ऐसा होगा। आप पढ़ी–लिखी स्त्री तो ले आए लेकिन उसके आते ही तुलनात्मक रूप से घर की अन्य महिलाएं सब अनपढ़ हो गईं।

अभी तक आपके घर में मां खाना पका रही थी और सब लोग बड़े प्रेम से खा रहे थे। अब ये देवी आ गईं जो कि होमसाइंस में एम.एस.सी. हैं, इनको कॉन्टीनेंटल और इंटरकॉन्टीनेंटल खाने पकाने आते हैं। इन्होंने आकर अपना एक नया सिलसिला शुरू कर दिया। अब सास सोच रही थी कि बहू मुझसे पूछकर खाना बनाए, बहू क्यों पूछेगी। ये अनपढ़ गांव की गंवार सास जो कि दो–चार आइटम बनाना जानती है बस, ये लड़की अभी–अभी आधुनिक शिक्षा लेकर आई है होमसाइंस की, सारी दुनिया के खाने पकाने इसको आते हैं अब ये सास की सलाह क्यों मानेगी।

अब तो हालत उल्टी है, सास को पूछना हो तो इससे पूछे। वह होने वाला नहीं है क्योंकि सास का अपना अहंकार है। वह कहेगी बहू भिण्डी की सब्जी ऐसी बननी थी, वह कहेगी कि माताजी रहने दो, भिण्डी ऐसे काटी जाती है, ये मसाले डाले जाते हैं, अब आप आराम करो किचन मुझे सम्हालने दो। तो बहू को तो पसंद भी नहीं आता कि सास वहां घुसे भी, अब इस घर में दरार पड़ गई। और उसका कारण, आप जिसको अच्छी चीज मान रहे थे उसका सौंदर्य, उसकी उच्च शिक्षा अब यही कारण बनेगी कि इस घर में प्रेम नहीं हो पाएगा।

छोटे–छोटे मामलों में झंझट होगी, सबके इगो को चोट पहुंचेगी। ये घर अब टूटेगा, भारी कलह होगी। अब कहोगे कि हमने तो अच्छा किया था लेकिन सब बुरा हो गया। नहीं, आपके देखने में चूक थी। मैंने पहले जो बातें कहीं वह मजाक में कही हैं, वह नसरुद्दीन का चुटकुला

समझना। अब असली बात कह रहा हूं गौर से देखिएगा। आपने एक अच्छा आसपेक्ट देखा था उसके साथ जुड़े हुए दूसरे बुरे आसपेक्ट थे। कभी सामने बुरा आसपेक्ट होता है तब उसके पीछे कुछ अच्छे आसपेक्ट भी होते हैं। चीजें संयुक्त हैं।

नसरुद्दीन की शादी का जब समय आया तो वह पता नहीं कहां–कहां लड़कियां ढूंढ़ता रहा और अंत में उसने ऐसी बदसूरत लड़की से शादी की जिसका कोई हिसाब नहीं। उसके मित्र भी चकित, घर के लोग भी चकित कि हद कर दी, इससे निकाह किया, उसकी शकल–सूरत डरावनी थी, देखने लायक भी नहीं थी। सुहागरात के दिन ही, जैसा कि मुसलमानों में रिवाज होता है, पत्नी ने पूछा कि मैं किस–किस के सामने घूंघट उठा सकती हूं? नसरुद्दीन ने कहा कि हे देवी, किसी के भी सामने, मुझे छोड़कर! मुझे बस मत डराना!

दूसरे दिन सुबह उसने शिकायत की कि अपने मकान में बाथरूम में जो खिड़की है उसके बगल में ही जो पड़ोसी रहते हैं उनकी भी वहीं खिड़की है। और चूंकि इसमें न तो कोई दरवाजा है, न परदा है तो कम से कम परदा लटकवा दो, पड़ोसी लोग ताक–झांक करते हैं। नसरुद्दीन ने कहा कि कर लेने दो, एक–दो दिन की बात है, वह खुद अपनी खिड़की पर परदा लगाएंगे, तुम देख लेना। मेरा नाहक खर्च न करवा, मैं परदा नहीं लगवाने वाला, इतने सालों से काम चल रहा था बिना परदे के।

नसरुद्दीन अपने साथियों को बताता था कि शादी करने के देखो कितने लाभ हुए, परदे का खर्चा बचा। फिर भी उसके दोस्तों ने पूछा कि नसरुद्दीन तुमने तो हद कर दी, इतनी भयावह, जैसे पुराने शास्त्रों में राक्षसनी का वर्णन पढ़ते होगे, कुछ वैसा ही और भी रहस्य है क्या इसके पीछे, क्योंकि तुम तो महान फिलॉसफर हो, तुम जो भी करते हो उसमें जरूर कोई राज होता है। इस लड़की को चुनने के पीछे क्या राज है?

नसरुद्दीन ने कहा कि साफ–साफ बताऊं, मेरा व्यापार का काम ऐसा है कि मुझे बार–बार दूसरे शहरों में जाना पड़ता है, अगर घर में सुंदर पत्नी बैठी रहेगी तो मुझे हमेशा शक ही बना रहेगा कि मैं बाहर जा रहा हूं पता नहीं घर में क्या गुलछर्रे चल रहे होंगे। अगर मेरी पत्नी सुंदर होती तो मुझे ये भी शक होता कि क्या पता, शादी के पहले कितने आशिक हुए होंगे। भाई जो मुझे सुंदर लगेगी वह अन्य लोगों को भी तो सुंदर लगेगी, अन्य लोग क्या सब सूरदास हैं!

मुझे उसके चरित्र पर सदा ही संदेह बना रहेगा, शादी के पहले भी और शादी के बाद भी और मेरा काम बार–बार बाहर जाने का है। तो मैं चिंताग्रस्त ही रहूंगा कि घर में क्या हो रहा होगा। और उसने अपने मित्रों से कहा कि देखो, अगर सुंदर बीवी होती तो मैं तुम लोगों का भी घर में आना बंद करवा देता क्योंकि फिर मुझे तुम पर भी शक होता, तुम भी कोई भले इंसान नहीं हो। नसरुद्दीन ने कहा कि मैं तुम्हें खूब अच्छे तरीके से जानता हूं, आखिर मेरे दोस्त ही हो तुम। अब ये कुरूप स्त्री है तो अपनी दोस्ती भी सदा बरकरार रहेगी, अब तुमसे कोई खतरा मुझे नहीं है। अब मैं निश्चिंत होकर व्यापार के सिलसिले में बाहर जा सकूंगा।

नसरुद्दीन ने कहा कि देख लो कितने फायदे हैं। तो प्यारे मित्रों, जिंदगी में मल्टीआसपेक्ट है, यहां सब चीजें जुड़ी हुई हैं। अच्छा पहलू, बुरा पहलू सब संयुक्त हैं। तो

आपका जो सवाल है, इसको गौर से समझिएगा। हम जो चाहते हैं वैसा ही होता है, परमात्मा हमारा दुश्मन नहीं है। वह मैं मजाक में कह रहा था लेकिन हमारी दृष्टि सम्यक् नहीं है, हम चीजों को तोड़कर देखते हैं। हम एक खण्ड को तो मांग लेते हैं, हमको पता ही नहीं होता कि इसके साथ दूसरा खण्ड भी है।

जब हमने चाहा कि सूर्योदय हो हमको पता ही नहीं कि इसके बाद दोपहर भी आएगी, शाम भी होगी और रात भी होगी और घनघोर अंधेरा भी छाएगा। ये सूर्योदय की कहानी का ही अगला हिस्सा है। अब आप कहो कि हमने तो सूर्योदय चाहा था, ये सब क्या हो रहा है। ये तो उल्टा हो रहा है, रात आ गई थोड़ी ही देर में, हमने तो नहीं मांगी थी। आपके नहीं मांगने से क्या होता है, अगर सूर्योदय होगा तो सूर्यास्त होगा यह नियम है।

किसी का जन्म होगा तो उसकी मृत्यु भी होगी ये नियम है। अब आप रोते फिरो कि मेरे बेटे का असमय देहान्त हो गया, ऐसा क्यों हुआ। मैंने तो चाहा था कि बेटा हो, भाई आपके चाहने से ही तो हुआ है बेटा लेकिन जन्म के साथ–साथ मृत्यु जुड़ी हुई है। अब और कुछ हो कि न हो लेकिन एक बात पक्की है कि मृत्यु होगी ही। और उसको अकाल मृत्यु मत कहना। अच्छा है संस्कृत में हमारे ऋषियों ने मृत्यु का जो नाम रखा है वह है काल।

काल को मृत्यु भी कहते हैं और काल को समय भी कहते हैं। इस समय में जो कुछ भी आया है सब मरणधर्मा है, सब समाप्त होगा। तो अकाल मृत्यु जैसी कोई चीज नहीं होती है, जो कुछ भी है काल में वह सभी समाप्त होता है। जीवन के इस जटिल संरचना को समझें तब आपके भीतर गहन तथाताभाव का अनुभव होगा और तब आप कामनाओं से भी मुक्त हो सकेंगे। खूब गहरी समझ पैदा हो जाए जीवन के प्रति फिर क्या मांगेंगे। मांग ही विदा हो जाएगी।

अंतिम सवाल है कि हम हिप्नोसिस के द्वारा एक साथ कितने संकल्प पूरे कर सकते हैं?

गालिब ने कहा है– हजारों ख्वाइशें ऐसी कि हर ख्वाइश पर दम निकले, बहुत निकले मेरे अरमान लेकिन फिर भी कम निकले। लगता है कि गालिब के अवतार आ गए। कितनी इच्छाएं इकट्ठी पूरी करें, ज्यादा किए तो पगला जाओगे। हजारों ख्वाइशें ऐसी कि हर ख्वाइश पर दम निकले। हर इच्छा के पीछे प्राण निकलने को तत्पर है इतनी गहरी इच्छा और कह रहे हैं गालिब कि बहुत निकले मेरे अरमान लेकिन फिर भी कम निकले।

अभी भी तसल्ली नहीं हुई, और भी इच्छाएं होती हैं, और भी महत्त्वाकांक्षाएं होती हैं। ये तो एकदम से पागलखाने ही पहुंच जाएंगे। अभी–अभी मैंने जो आपसे कहा थोड़ी देर पहले, अत्यंत प्रज्ञावान व्यक्ति तो निष्काम, निर्वासना की स्थिति में पहुंच जाएगा। चलो इतने प्रज्ञावान, इतने विवेकपूर्ण नहीं हो, कम से कम इतना तो करो, एक बार में एक संकल्प, एक बार में एक इच्छा– उस पर मेहनत करो। कोई दो–तीन महीने लगेंगे, हिप्नोसिस की विधि अपने घर जाकर करिएगा बीस मिनट रोज रात्रि सोने के पूर्व, दो–तीन महीने लगेंगे परिणाम आने में। जब आपका एक संकल्प पूरा हो जाए तब आप नंबर दो के संकल्प पर जाइए। एक

प्रेफेरेंस लिस्ट बनाइए, गालिब की तरह नहीं हो जाना। गालिब की कहानी तो आपको पता होगी। रहते थे दिल्ली में, उस समय अंग्रेजों के जमाने में कलकत्ता में न्याय के बड़े मुकदमे वहां चला करते थे। तो कोई झगड़ा था, उसका निपटारा कलकत्ता हाईकोर्ट में होना था। दिल्ली से कलकत्ता गालिब गए, तीन साल में पहुंचे। ऐसी विचित्र कहानी आपने कहीं न सुनी होगी। कछुआ भी शायद जल्दी पहुंच जाता।

मगर हजारों ख्वाइशें हैं, चल पाएं तब न इतनी सारी ख्वाइशें। रास्ते पर चल रहे हैं कोई सुंदर युवती दिखाई दे गई, एक–दो शायरी उसको सुना दी, वह भी प्रभावित हो गई, वहीं रुक गए। दस–पंद्रह दिन बाद जब झगड़े की नौबत आई तो आगे खिसके उस गांव से, और सुंदरियों की कोई कमी थोड़ी है। कलकत्ता पहुंचने में तीन साल लगे। गनीमत है, कैसे पहुंच गए मुझे आश्चर्य होता है। मुझे लगता है कुछ ख्वाइशें कम थीं इसलिए वह पहुंच गए। ये तो थोड़ा बढ़ा–चढ़ाकर कह रहे हैं क्योंकि कवियों की आदत होती है अतिशयोक्ति कहने की, हजारों ख्वाइशें। हजारों रही नहीं, नहीं तो कलकत्ता पहुंच ही नहीं सकते थे, काल के गाल में पहुंच जाते लेकिन कलकत्ता नहीं पहुंचते।

ऐसा समझो कि अगर बैलगाड़ी के चारों दिशाओं में सौ बैल जोत दिए जाएं, कोई इधर खींच रहा है, कोई उधर खींच रहा है, तो बताओ क्या ये गाड़ी कहीं पहुंचेगी? नहीं, बैल खींच–खींचकर थक जाएंगे और ये गाड़ी जहां थी वहीं टूटकर भ्रष्ट हो जाएगी, ये कहीं पहुंचने वाली नहीं। और सारे बैलों की शक्ति व्यर्थ जाएगी क्योंकि आपस में वे कंट्राडिक्ट्री काम कर रहे हैं, एक–दूसरे से विपरीत अपनी ताकत को आजमा रहे हैं, कुछ भी नहीं हो पाएगा इसमें।

कार में एक तरफ इंजन होता है इसलिए जब गाड़ी चलती है तो पहुंचती है। अगर डिक्की में भी इंजन लगा हो और उस तरफ भी इंजन चले और साइड में दरवाजों में भी एक–एक इंजन लगे हों और हमने चारों इंजन स्टार्ट कर दिए एक साथ, अब ये कार क्या कहीं पहुंचेगी? मात्र दुर्घटना ही इसकी होगी बस!... और ड्राइवर मारा जाएगा। जिस व्यक्ति को अपनी जिंदगी की कार मंजिल तक पहुंचानी है उसको चुनना होगा, कई चीजों की आप लिस्ट बनाइए और उसमें से चुनिए कि सर्वोपरि क्या है, कृपया उस एक पर फोकस करिए, एक दिशा में श्रम करिए, एक दिशा में अपने विलपावर को बहाइए तो ही कुछ हो सकेगा।

जिंदगी में जो लोग असफल हो जाते हैं, कुछ भी नहीं कर पाते हैं उसका कारण यही है कि बहुत सारी इच्छाएं हैं। और निश्चितरूप से वे आपस में एक–दूसरे से विपरीत हैं। कभी आप बायीं तरफ की सड़क पर चल रहे हैं तो लगेगा कि दायीं तरफ की सड़क चूक गई, थोड़ा उस तरफ भी हो आएं, फिर पश्चिम की तरफ गए, फिर पूरब की तरफ गए, फिर उत्तर की तरफ गए, फिर दक्षिण की तरफ गए– आपके पैर थक रहे हैं बस लेकिन आप पहुंच कहीं नहीं पाओगे। क्योंकि आपका मन हमेशा ललचाता रहेगा उन चीजों के प्रति जो छूट गईं।

आप चल तो एक ही दिशा में रहे हैं लेकिन दूसरी दिशाएं जो चूक रहे हैं आप वह अपनी तरफ खींचेंगी कि पता नहीं क्या था उस तरफ, आप फिर दौड़कर आ जाएंगे चौराहे पर कि वह वाली राह पकड़ लें। लेकिन उस राह पर जाने से भी वैसा ही होगा, दस–पांच कदम आप आगे जाओगे फिर सोचोगे कि वह वाली छूट गई। विक्षिप्तता की हालत लोगों की तभी आती

है जब वह बहुत सारी मनोकामनाओं से भरे होते हैं और अंततः वे पागल हो जाते हैं।

तो मैंने आपको दोनों बातें बताई, जो बहुत इच्छाओं से भरे हैं वे पागल हो जाएंगे और प्रज्ञावान वह है जो इच्छाशून्य हो जाए, निष्काम, अनासक्त हो जाए। ये दो अतियां हैं। चलो हम कम से कम मध्य में तो टिकें, हम बहुत विवेकवान, प्रज्ञावान नहीं हो पा रहे हैं, कोई बात नहीं, कम से कम बीच में तो रहें। कम से कम इच्छाएं चुनें कि मेरे लिए सबसे महत्त्वपूर्ण क्या है। एक ही दिशा में काम करें।

एकै साधे सब सधै, सब साधे सब जाए।

8

मन में छिपे डर

आज का पहला प्रश्न– मुझे अंधेरे में जाने से डर लगता है और इसलिए मैं सबकॉन्शास में पहुंचने से चूक रहा हूं। कैसे उससे मुक्ति हो?

हिप्नोसिस के द्वारा हमारे मन में जो छुपे हुए भय हैं उनसे भी मुक्ति पाई जा सकती है। किन्हीं घटनाओं की वजह से ये डर बने। कई बार डर सिखाए हुए हैं। हमारे खुद के एक्सपीरिएंस से नहीं हैं लेकिन हमें कहा गया है, विशेषरूप से बचपन में। माता–पिता जिन चीजों से अपने बच्चों को बचाना चाहते हैं, जहां उनको लगता है कि कुछ खतरा न हो जाए वह बच्चों के भीतर भय पैदा कर देते हैं।

उदाहरण के लिए अंधेरे में जाने से किसी बच्चे को स्वाभाविक रूप से डर नहीं लगता। ये प्राकृतिक डर नहीं है, ये सिखाया हुआ डर है। मां ने डराया, मां को लगता है कि बच्चा अंधेरे में जाकर किसी चीज से टकरा न जाए, गिर न जाए इसलिए मां नहीं चाहती कि उसका बच्चा अंधेरे में जाए उसने किसी भांति डराने की कोशिश की। उसने कहा कि अरे, अंधेरे में नहीं जाना, उसने डरावनी आवाज निकाली, उसने अपने चेहरे से भय जाहिर किया, अंधेरे में नहीं जाना वहां पर बाबा बैठा हुआ है वह पकड़ कर ले जाएगा। अब छोटे बच्चे को कुछ पता नहीं है कि बाबा यानी क्या, हउआ मतलब क्या, भूत यानी क्या।

ये बच्चे के लिए केवल कोरे शब्द हैं किसी भी अर्थ के नहीं हैं। लेकिन उसने मां के चेहरे के भाव देखे तो वो भयभीत करने वाले थे, अर्थात् कोई डरावनी चीज है। उसने मन ही मन न जाने क्या धारणा बना ली बाबा के बारे में, कि भूत के बारे में और अंधेरे से उन चीजों को

जोड़ लिया। मां ने कहा था कि अंधेरे में नहीं जाना वहां भूत रहता है, अब बच्चा सहम गया। मां की फीलिंग उसने कैच कर ली, मां के साथ उसका लगाव है, सिंपैथी है, मां जो बताना चाह रहीं थीं अपने चेहरे के भाव से, अपनी शरीर के चाल-चलन से उसने यह धारणा अपने बच्चे के मन में डाल दी।

ठीक है, बच्चा सुरक्षित तो हो गया, जो खतरे हो सकते थे अंधेरे में वो नहीं होंगे लेकिन अब इसके मन में अंधेरे के प्रति डर बैठ गया। फिर एक दिन यह बड़ा भी हो गया, अब ये समझदार भी हो गया, अब इसको सारे तथ्य पता भी हैं लेकिन अभी भी ये डर रहा है। दस साल का हो गया उसको रात को अकेले बाथरूम जाना है तो वह अकेला नहीं जाएगा। अब वह मां को जगा रहा है कि चलो, मैं अकेला नहीं जाऊंगा। अब मां उसको समझा रही है कि नालायक, बेवकूफ क्या है वहां, क्यों नहीं जा सकता। अब वह नहीं जा सकता।

आपने पहले ही उसके मन में धारणा बैठा दी है कि अकेले में अंधेरे में मत जाना, अंधेरे में बाबा है, पकड़ ले जाएगा। अब वो बच्चा नहीं जा सकता। अब हम उसे विपरीत बातें सिखाते हैं, लेकिन पहली बात जो उसके मन में घर कर गई अब उसको निकालना इतना आसान नहीं है। जिंदगी भर के लिए अब उसको इस भय ने पकड़ लिया।

तो कुछ भय हैं प्राकृतिक, विषेश रूप से दो भय, एक है अचानक जोर से होने वाली आवाज का डर और एक है गिरने का डर। ये दो डर हमको प्रकृति से मिले हुए हैं, ये बिना सीखे ही हमको बाई नेचर मिले हुए हैं। जोर की आवाज होगी तो बच्चा चौंक जाएगा, डर जाएगा। ये किसी ने नहीं सिखाया उसको, ये भीतर से ही उसका इंट्यूशन है। और गिरने का डर उसके भीतर है। और दो-चार बार वो गिरेगा, कभी सीढ़ी से गिरेगा, कभी पलंग से गिरेगा, कभी कुर्सी से गिरेगा चोट लगेगी और उसका अनुभव भी जुड़ जाएगा। उसका नेचरल इंट्यूशन तो है ही गिरने के खिलाफ, प्रकृति ने डर दिया है और दो-चार अनुभव उसको और हो गए दर्द वाले, गिरने के संग दर्द जुड़ गया। अब वो बहुत डरने लगा गिरने से।

ऊंचाई से कई लोगों के मन में डर पैदा हो जाता है, गहराई देखने में कंप जाते हैं। चार मंजिल मकान के ऊपर ले जाकर कहो कि नीचे देखो सड़क पर करीब-करीब दस परसेंट लोग ऐसे हैं जो यह नहीं कर पाएंगे, चक्कर आने लगेगा, उल्टी का मन होने लगेगा, पल्स रेट उनकी बढ़ जाएगी, ब्लडप्रेशर बढ़ जाएगा। वो जो नीचे गहराई दिख रही है उससे वो घबराते हैं। ये डर स्वाभाविक है प्रकृति ने दिया है ताकि हम गिरने के इस खतरे से बच सकें। हम उस जगह जाएं ही नहीं जहां पर ऐसी स्थिति बन रही हो।

तो कुछ सुरक्षा के लिए प्रकृति ने भय दिए हैं। कुछ भय माता-पिता ने, समाज ने, शिक्षकों ने हमें सिखाए हैं। उनका टेम्प्ररी उपयोग था, उनसे मुक्त हो जाना था। सारे लोग मुक्त नहीं हो पाते। वो बचपना उनके भीतर हावी रहता है। जो सीख लिया है उसको भुलाना इतना आसान नहीं है। खासकर अगर इमोशनल कोई बात है, उसको भुलाना आसान नहीं है। आप विचार भूल सकते हैं, सिद्धांत भूल सकते हैं, आपने फिजिक्स के नियम पढ़े होंगे हाई स्कूल में तो हो सकता है कि उसको भूल गए हों लेकिन जो भावना आपने पकड़ ली है छोटेपन में उसकी गिरफ्त से बाहर निकलना इतना आसान मामला नहीं है। वह सबकॉन्शस

में समाई हुई है। वह मस्तिष्क का विचार नहीं है, वह हृदय में जड़ें जमाए है।

तो अंधेरे का भय भी उन्हीं चीजों में से एक है। कैसे इससे मुक्त हों, इसके लिए मैं एक छोटा सा प्रयोग आपसे कहता हूं। जिन लोगों को ये वाली प्रॉब्लम हो वे इसको कर के देखेंगे।

आप पांच मिनट आराम से बैठकर सांस पर ध्यान देकर शरीर को रिलैक्स छोड़कर भीतर ही भीतर एक कल्पना करिए, बहुत ज्यादा अंधेरे की नहीं लेकिन थोड़ा सा अंधेरा समझो शाम का समय या प्रातः भोर का समय अभी पूरा प्रकाश नहीं आया है, कुछ–कुछ अंधेरा है या शाम का समय सूरज ढल चुका, धुंधलका है, आप मन ही मन कल्पना कर रहे हैं कि हल्का अंधेरा है और आप चल रहे हैं, थोड़ा–थोड़ा दिख रहा है कामचलाऊ और वह पर्याप्त है और चूंकि आपको पता है कि आपकी ही यह कल्पना है इसलिए इसमें भय नहीं लगेगा, क्योंकि ये कोई रियल घटना नहीं है, यू आर जस्ट इमैजिनिंग।

थोड़ा–बहुत भय लगेगा और आप पाएंगे कि पांच–सात दिन में भय विदा हो गया। क्योंकि आप सौ परसेंट पक्का जान रहे हैं कि यह कोई सचमुच की घटना नहीं है, यह तो केवल हम अपनी तरफ से एक सपने की तरह देख रहे हैं जानबूझकर और अगर डर लगेगा तो हम देखना बंद कर देंगे, कोई जरूरी नहीं है कि उसके पूरा ही करें। अगर भयभीत हो गए, पसीना आने लगा तो बंद कर देंगे, कल्पना नहीं करेंगे। चूंकि आपके हाथ में है, आपके वश में है इसलिए आप इसको कर पाएंगे, पांच–सात दिन बाद आप पाएंगे कि अब धुंधलके में आपको डर नहीं लगता।

तब आप दूसरी कल्पना शुरू करिए, थोड़ा और गहरा अंधेरा, वाकई में रात पूरी आ चुकी है लेकिन दूर–दूर कहीं बिजली जल रही है, उनकी लाइट आ रही है या चांद निकल आया है और चांदनी है, पूरा अंधेरा नहीं है अभी भी और आप कहीं टहल रहे हैं अपनी परिचित जगह पर, आपको सब पता है कि कहां कैसे जमीन है, आप अपनी परिचित जगह पर टहल रहे हैं, पांच–दस मिनट इसकी कल्पना करिए। शुरुआत में आप फिर डर जाएंगे, सप्ताह भर के अंदर आप पाएंगे कि इस कल्पना से भी डर मिट गया।

तब आप और अंधकार की भी कल्पना करिए कि आज चांदनी रात भी नहीं है, तारे भी नहीं निकले हैं, बादल छाए हैं, घनी रात है, आधी रात है, फिर धीरे–धीरे आप कल्पना करिए कि अपरिचित जगह है फिर भी आप अंदाजवश चल रहे हैं, आपके अंदर से बड़ा साहस पैदा होगा। चूंकि आपको पता है यह कल्पना ही है और कहीं भी आप इसको छोड़ सकते हैं, एक महीने भर ऐसे करते–करते आप कल्पना में सफल हो जाएंगे।

तब आप अगला कदम उठाइए, सही–सही अंधेरा। अब संध्या के समय परिचित स्थान पर हाथ में टार्च लेकर चलिए कि जरूरत पड़ने पर टार्च जला लेंगे, अब आप चलना शुरू करिए। सप्ताह भर बाद थोड़ी और रात हो जाने दो। फिर एक महीने गुजरने के बाद आप पाएंगे कि बात बन गई, अब आप गहन अंधेरे में भी चल सकते हैं, जा सकते हैं।

क्या आपने इस बात पर कभी गौर किया कि चोर आपके घर में आधी रात को घुसता है और बिल्कुल अंधेरे में, आपको खुद को अपने घर में चलना मुश्किल है आप चीजों से टकरा जाएंगे और चोर कभी भी नहीं टकराता और आपको प्रकाश तक में चीजें ढूंढ़ने से नहीं मिलती

और चोर अंधेरे में भी सब ढूंढ़ लेता है। जो चीजें आप खूब छुपाकर रखते हैं वह भी खोज लेता है अंधेरे में। वह भी हमारे जैसा ही मनुष्य है। क्या फर्क हो गया हमारी और उसकी आंख में। हम खुद नहीं ढूंढ़ सकते अपने घर में वह सामान अंधेरे में। हम खुद टकरा जाएंगे और चोर के लिए तो बिल्कुल अपरिचित जगह है।

पहली बार ही शायद आया है और शायद आखिरी बार और वो मजे से घूम रहा है। और जो उसको ढूंढ़ना था उसको ढूंढ़ भी लिया और लेकर चला भी गया। अब वो भी हमारे जैसा ही इंसान है, उसकी आंख भी हमारी आंख की तरह ही है लेकिन उसको कैसे दिखता है। उसने सिर्फ अभ्यास किया है, अगर हम अभ्यास करेंगे तो हम भी कर पाएंगे। सिर्फ प्रेक्टिस की बात है।

इसलिए मैं आपसे कह रहा हूं कि दो महीने, एक महीना कल्पना में और दूसरे महीने से रियल अंधेरे में और फिर आप इसको आनंद से करने लगेंगे, बड़ा मजेदार खेल बन जाएगा, डर का कोई सवाल ही नहीं है, वह डर मन से उखड़ जाएगा। तो चूंकि जो बहुत बचपन से भावनाएं हमारे भीतर बैठ गईं उनको उखाड़ने में भी वक्त लगता है इसलिए धीरज भी साधना का एक अनिवार्य अंग है। आप ऐसा नहीं कर सकते कि आज ही पांच मिनट में अचानक उसको विदा कर देंगे, जिसको आप पचास साल से ढो रहे हैं वह पांच मिनट में विदा नहीं होगा। जड़ें गहरी हैं जरा उनको उखाड़ने में समय लगेगा लेकिन एक दिन उखड़ जाएंगी। इस प्रकार से आप भय से मुक्त हो सकते हैं।

और हेमंत जी ने जो पूछा है कि अगर सबकॉन्शस फुल ऑफ लाइट हो ऐसी धारणा करें वह भी बिल्कुल ठीक, ऐसा भी कर सकते हैं। तो अन्य लोगों से जब हम कह रहे हैं कि अंधेरी सुरंग में या टनल में प्रवेश कर रहे हैं कि पहाड़ से नीचे घाटी की तरफ उतर रहे हैं, जिन लोगों को अंधेरे से खूब भय लगता है वो दूसरा सजेशन अपने आपको दें कि आप जहां जा रहे हैं वहां प्रकाश होता जा रहा है। आप ऐसी भी कल्पना कर सकते हैं कि आप हाथ में टॉर्च लेकर जा रहे हैं, कोई परेशानी नहीं है क्योंकि कल्पना तो आपकी है, नहीं है अंधेरा।

मैंने सुना है मुल्ला नसरुद्दीन जहाज पर नौकरी करने के लिए इंटरव्यू के लिए गया था। कैप्टन ने पूछा कि अगर मान लो कि जोर का तूफान आ गया तो क्या करोगे? नसरुद्दीन ने कहा, साहब लंगर डाल देंगे तो जहाज हिलेगा–डुलेगा नहीं। कैप्टन ने पूछा कि मान लो और जोर की आंधी आ गई और जहाज तुम्हारा डगमग होने लगा तब? नसरुद्दीन ने कहा कि दूसरा लंगर डाल देंगे। इस तरह से प्रश्न चलता रहा, कैप्टन कहता और बड़ा तूफान, और बड़ा तूफान और सुनामी लहरें आनी लगीं और नसरुद्दीन का जवाब था कि और लंगर डाल देंगे, और लंगर डाल देंगे। जब ऐसा ही छः–सात बार हो गया तो कैप्टन ने पूछा कि इतने लंगर तुम लाओगे कहां से? नसरुद्दीन ने कहा कि आप इतने आंधी–तूफान कहां से ला रहे हैं? आप भी कल्पना में से निकाल रहे हैं और हम भी कल्पना में से निकाल रहे हैं।

तो कल्पना का एक मजा है, आप कल्पना में कुछ भी कर सकते हैं, कल्पना आपकी ही है। तो करीब 90 परसेंट लोगों के लिए मैं समझता हूं कि अंधेरे वाली कल्पना काम करेगी, दो–चार मित्र ऐसे हो सकते हैं जिनके अंधेरे के नाम से ही रोंगटे खड़े हो जाएं तो आपको

रोंगटे खड़े करने की जरूरत नहीं है। आप मजे से टॉर्च लीजिए और जाइए। कल्पना करिए कि जब आप सुरंग में जा रहे थे तो वहां एक स्विचबोर्ड आपने देखा और बटन दबाते ही प्रकाश हो गया और आप मजे से वहां जा रहे हैं। अपने मन के अनुकूल कल्पना करिए, प्रतिकूल नहीं। तब आप पाएंगे बड़ी आसानी से गति होने लगी।

एक मित्र ने पूछा है कि हमेशा के लिए अपने गुरु को प्रसन्न कैसे रखें?

गुरु प्रसन्न ही रहते हैं, आप चिंता न करें। उनकी प्रसन्नता आपके हाथ में नहीं है। आपको इसकी चिंता करने की जरूरत नहीं है। किसी की प्रसन्नता, किसी का दुख किसी अन्य के हाथ में नहीं होता। ये हमारी गलतफहमी है कि हम किसी को दुखी कर सकते हैं या हम किसी को सुखी कर सकते हैं। काश! ऐसा हो सकता। दुनिया में इतने माता–पिता अपने बच्चों को खुश रखना चाह रहे हैं, कोई भी ऐसा माता–पिता नहीं होगा जो अपने बच्चों को दुखी करना चाह रहा हो। बच्चों से पूछो कोई भी सुखी नहीं हैं, सब त्रस्त हैं माता–पिता से, जल्दी से जल्दी बड़ा हो जाना चाह रहे हैं, माता–पिता से छुटकारा पाना चाह रहे हैं।

सारे पति अपने पत्नियों को प्रसन्न रखना चाह रहे हैं और एक भी आज तक सफल नहीं हुआ। पत्नियों ने पूरा ठेका ले रखा है इस बात का कि पति को इस बात का एहसास लगातार बना रहे कि हमको खुश नहीं कर पाया। उसको असफलता का पता चलते ही रहना चाहिए कि हार गए। वह जो कहावत है कि हर सफल पुरुष के पीछे एक स्त्री का हाथ होता है तो निश्चित ही होता है क्योंकि वो लगातार एहसास कराती रहती है कि अरे निठल्लू, मुझ अबला को तुम खुश न कर सके। बेचारा पति और काम करता है, और भाग–दौड़ करता है, और महत्त्वाकांक्षी हो जाता है।

वह सोचता है कि और ज्यादा धन कमा लूं, और ज्यादा बड़ा मकान बना लूं, अंबानी जैसे छब्बीस मंजिला मकान खरीदकर अपनी पत्नी को दूं लेकिन वो महिला तब भी खुश नहीं होने वाली, कभी नहीं होगी। कोई किसी को खुश नहीं कर सकता। इसका उल्टा भी सच है, कोई किसी को दुखी भी नहीं कर सकता। लोग अपने ही कारणों से दुखी हैं। ईसामसीह को सूली पर चढ़ा दिया गया तब भी उनको दुखी नहीं कर पाए।

राम को कैकेयी ने बनवास भेज दिया लेकिन राम तो बिल्कुल भी दुखी न हुए। वो तो चरण स्पर्श करके माता–पिता के, वन को निकल गए, वापस लौटे तो सबसे पहले कैकेयी के चरण स्पर्श किए। उनके मन में कोई शिकायत नहीं है, वो तो दुखी नहीं हुए। कैकेयी सोच रही है कि बहुत दुखी कर देगी राम को। मीरा को जहर पिला दिया राणा ने, सांप भेजा कटवाने को लेकिन मीरा का गीत और मीरा का नृत्य बंद नहीं हुआ, उसकी प्रसन्नता में कोई दखल नहीं पड़ा। मर भी जाती तो वह यूं ही गुनगुनाते हुए ही वह मरती। कोई फर्क नहीं पड़ा। राणा सोच रहा है कि वह कष्ट देगा, लेकिन मीरा कष्ट लेगी ही नहीं, वह तो परम आनंद में जी रही है, वो तो परमात्मा में जी रही है।

सुकरात नाम का महान दार्शनिक हुआ। सत्य बोलने की खातिर उसको मृत्यु की सजा

सुनाई गई और जहर पिलाया गया। वो बड़ा खुश है कि अहा! आज जहर पिएंगे, एक नया प्रयोग होगा। उसके मित्र बैठकर रो रहे हैं कि तुम कैसे आदमी हो? उसने कहा कि जीवन को तो मैंने बहुत जाना, बहुत परखा, जीवन के सारे अनुभव मैंने कर लिए लेकिन आज तो बहुत अद्भुत दिन है, मेरी जिंदगी का आखिरी दिन। आज मैं मृत्यु का अनुभव करूंगा कि मृत्यु क्या होती है, कैसे मरते हैं। बड़ी उमंग है, उत्साह है भीतर। मित्रों की आंखों में आंसू झर रहे हैं कि आज शाम को इसको जहर पिलाया जाएगा और ये खुश हो रहा है।

वो जो जहर पीसकर देने वाला व्यक्ति है कसाई उसको भी दया आ रही है, उसको भी लग रहा है कि बड़ा अन्याय हो रहा है। ये सुकरात जैसा प्रतिभाशाली आदमी, इतना प्यारा आदमी, इसको मैं जहर बना कर दूंगा, वह देर लगा रहा है। उसका काम था जहर पीसकर पिलाना। सुकरात खुद उठकर भीतर आया, उसने कहा कि हद हो गई, तुम अपनी ड्यूटी ठीक से नहीं कर रहे हो। उस कसाई ने अपना माथा ठोंक लिया कि तुम इंसान कैसे हो? सुकरात ने कहा कि अपनी ड्यूटी ठीक से करो, तुम्हें न्यायाधीश ने मुझे जहर पिलाने का काम दिया है, तुम अपना काम जरा तेजी से करो, मैं इंतजार कर रहा हूं।

सुकरात ने जहर पी लिया और अपने मित्रों से कह दिया कि तुम अभी आंसू मत बहाओ, बाद में बहा लेना। अभी मैं जो बता रहा हूं वह सुनो, महत्वपूर्ण सूचनाएं मैं तुम्हें दे रहा हूं। मेरे पांव बिल्कुल ठंडे पड़ चुके हैं, अब तुम अगर कोई कांटा भी चुभाओगे मेरे पैरों में तो मुझे पता नहीं चलेगा, मेरे पैर लगभग मर चुके। लेकिन मैं तुमसे कहता हूं कि मैं अभी ज्यों का त्यों हूं। मेरे भीतर मेरे होने का जो एहसास है, मेरी आत्मा का, मेरी चेतना का उसमें कोई दखल नहीं पड़ा।

फिर वह कह रहा है कि अब कमर और पेट तक सब सुन्न हो गया है किन्तु भीतर जैसे पहले मैं अखण्ड था जहर पीने के वैसे ही अभी भी अखण्ड हूं। ठीक है मैं पांव उठा नहीं सकता, तुम छुओगे तो मुझे पता भी नहीं चलेगा, अब मेरे सीने पर भी असर होने लगा, अब मेरे हाथों में और कंधों में भी जान नहीं रही, मैं बोल पा रहा हूं, मेरी आवाज भी शायद लड़खड़ाने लगी। वह कह रहा है कि अब शायद मैं आकर तुमको बता नहीं पाऊंगा लेकिन अभी तक की जानकारी मैं तुम्हें दे रहा हूं कि भीतर मेरी जीवंतता ज्यों की त्यों है। अब मैं हाथ उठा नहीं सकता कोई ताकत नहीं बची लेकिन मेरे भीतर जो जीवन है वह ज्यों का त्यों है। और वो कहने लगा कि अब मेरे सिर बस में थोड़े से प्राण शेष हैं और अब शायद मेरा आखिरी वचन है लेकिन मुझे जैसा दिख रहा है कि अब शायद ये सिर भी काम करना बंद कर देगा, अब मैं कुछ बोल भी नहीं पाऊंगा, मेरी जबान लड़खड़ाने लगी है, अब मैं शायद ठीक से बोल भी नहीं पाऊंगा लेकिन मैं जाते–जाते तुम्हें बता रहा हूं कि मैं बिल्कुल ज्यों का त्यों हूं, मेरा जो भीतर होना है उसमें कुछ भी नहीं हुआ और शायद आगे भी कुछ नहीं होगा। शरीर तो मर जाएगा लेकिन मैं अविनाशी हूं। ऐसा कहते–कहते उसके प्राण निकले। जो लोग सोच रहे हैं कि उसको दुख दे देंगे वो दुख तो नहीं दे पाए। उसको तो ग्रेट एक्सपीरिएंस मिला।

हम किसी को कुछ दे नहीं सकते। लोग अपनी–अपनी दुनिया में जी रहे हैं, न हम किसी को सुख दे सकते, न हम किसी को दुख दे सकते। दुनिया में इतनी स्त्रियां हैं, सब अपने

पतियों को सुखी रखना चाह रही हैं लेकिन किसी को भी सफलता हासिल नहीं होती। असंभव सा काम लगता है, हो ही नहीं सकता। बच्चे चाहते हैं कि माता-पिता को प्रसन्न रखें लेकिन नहीं कर पाते। ऐसा नहीं है कि बेटा-बहू दुश्मन हैं, जानबूझकर सता रहे हैं, चाहते हैं आदर करना, रेस्पेक्ट करना लेकिन होता हमेशा अनादर ही है। वे दूसरे पर निर्भर है, आपके आदर करने से क्या होता है। वह दूसरा क्या लेगा उसकी अपनी साइकोलॉजी है। वस्तुतः हम किसी को कुछ दे नहीं सकते। आंतरिक चीजें जो हैं वो अपनी-अपनी ही हैं।

तो आप इस चिंता में बिल्कुल न पड़ें कि गुरु को प्रसन्न कैसे रखें। गुरु अपने भीतरी कारणों से प्रसन्न है। गुरु का बाहर की घटनाओं से कोई लेना-देना नहीं है। और न यह बात केवल गुरु पर लागू होती है, यह सभी पर लागू होती है। आप गौर से देखना। आपने जिन लोगों को खुश करने की कोशिश की है क्या कोई खुश हुआ आपसे? टेम्प्ररी शायद थोड़ी देर के लिए लगा हो लेकिन कालान्तर में आप देखेंगे कुछ भी नहीं हुआ। क्या कोई आपको खुश कर पाया। कोशिशें बहुत की गई हैं लेकिन सफलता किसी को हासिल नहीं हुई। आपका मन आपके भीतर है, वही आपके सुख-दुख का निर्माता है। बाहर से कोई कुछ भी नहीं कर सकता, सब बिल्कुल असहाय हैं। इस प्रकार की व्यर्थ की चिंता न करें।

अगला प्रश्न- जो गहराई हमें देखनी है वो अंदर या बाहर है और एक सवाल है कि पिछले सत्र में सुझाव दिया गया कि अपने क्राउन सेंटर से नीचे की ओर देखना है लेकिन मैं ऐसा नहीं कर पा रही हूं। डायरेक्शन व डायमेंशन कौन सी होनी चाहिए? कृपया समझाएं।

यह प्रतीकात्मक रूप से हम कहते हैं कोई चीज ऊपर-नीचे, वस्तुतः तो ये रिलेटिव टर्म्स हैं। वास्तव में जगत में ऊपर और नीचे, दाएं-बाएं चीजें नहीं होतीं लेकिन हम कामचलाऊ रूप में इस प्रकार के शब्दों का उपयोग करते हैं। आपने सापेक्षिकतावाद के सिद्धांत के बारे में सुना होगा। आज से करीब सौ साल पहले खोजा गया रिलेटीविटी का सिद्धांत। सभी चीजें एक-दूसरे के रिलेशन में हैं। जब हम कहते हैं कोई चीज ऊपर है या कोई चीज नीचे है तो हमने अपने आपको कहीं पर मान रखा है और उसकी तुलना में हम कह रहे हैं ऊपर या नीचे।

समझो रात को हम चांद देखेंगे और हम कहेंगे कि हमारे ऊपर, हमने अपने आपको एक स्थिति पर मान लिया है, हमारे सिर के ऊपर है। क्या पूरे ब्रह्माण्ड की कल्पना करके आप कह सकते हैं कि चांद पृथ्वी की तुलना में कहां होगा, ऊपर का क्या मतलब। पृथ्वी स्वयं ही गोल है, चंद्रमा उसके चारों तरफ वृत्ताकार रूप से घूम रहा है। उसकी किस पोजीशन को ऊपर कहेंगे, ऐबसल्यूट टर्म में, रिलेटिव टर्म में नहीं। हम कहां खड़े हैं उसको छोड़ दीजिए। जस्ट पृथ्वी का ग्लोब और उसके चारों तरफ भ्रमण करता हुआ चंद्रमा। विराट शून्य में यह सब हो रहा, इसमें क्या चीज ऊपर और क्या चीज नीचे होगी। कुछ भी नहीं। तो कामचलाऊ रूप से हम इन शब्दों का इस्तेमाल करते हैं लेकिन ऐक्चुअली इस बात को अगर खोजें तो हम पाते हैं कि इन शब्दों का कोई अर्थ नहीं है।

ठीक इसी प्रकार जब हम अपने भीतर कुछ अनुभव करते हैं तो सिर को चूंकि हम ऊपर मानते हैं ये हमारी धारणा है, पैर को हम नीचे मानते हैं। अगर छिपकली से हम पूछें जो छत पर उल्टी लटकी घूमती रहती है कि तुम्हारा ऊपर क्या है तो वह कहेगी कि आप लोग हमारे ऊपर हो। हम उसके सिर के ऊपर हैं, उसकी आंखों के ऊपर हैं। उससे पूछेंगे कि नीचे क्या है तो वह कहेगी कि छत मेरे नीचे है। आकाश मेरे नीचे है छिपकली कहेगी, उसको वैसा ही अनुभव होगा। उसके ऊपर–नीचे हमसे बिल्कुल भिन्न होंगे। हम भारत में खड़े हैं, हमसे ठीक उलटे अमेरिका के लोग खड़े हैं पृथ्वी की दूसरी तरफ।

कल्पना करें एक गेंद है और उसमें गुड़ लिपटा हुआ है और उसके चारों तरफ चींटियां चल रही हैं। यहां जो चींटी है और उसके विपरीत जो चींटी है इनका ऊपर और नीचे बिल्कुल विपरीत होगा। एक दूसरा सरल सा उदाहरण से समझें, ऊपर–नीचे में शायद आपको दिक्कत होती होगी। क्योंकि हमारा एक फिक्स्ड ऐटीट्यूड हो गया है कि क्या ऊपर और क्या नीचे, दाएं–बाएं लें या पूरब–पश्चिम को लें। हम ऐसे यूज़ करते हैं पूरब और पश्चिम शब्द जैसे कि इनमें कोई रियलिटी है।

हम कहते हैं भारत पूर्वी देश है, यूरोप पश्चिमी है। भारत के पश्चिम में यूरोप है, ये रिलेटिव है। यूरोप अपने आप में पश्चिम में नहीं है, हमारे पश्चिम में है। यूरोप के पश्चिम में अमेरिका है, अमेरिका के पश्चिम में जापान है, जापान के पश्चिम में हम हैं। जापान वाले कहेंगे वेस्टर्न कंट्रीज उसमें भारत आ जाएगा। कहां से हम रेखा खींचेंगे कि इस तरफ पश्चिम होता है और इस तरफ पूरब है, क्या ये संभव है? इस गोल सर्किल में ऐसा तो कोई प्वाइंट निर्धारित नहीं कर सकते कि यहां से पूरब शुरू होता है और यहां से पश्चिम शुरू होता है। वह तो एक सर्किल है पूरा।

समझें जैसे एक गोल थाली है किनारे वाली उसमें चींटियों की एक लाइन गोल–गोल घूम रही है, पूरी लाइन लगातार घूम रही है। हर चींटी को अपने आपमें एक लीनियर दिख रही होगी, मेरे सामने ये चींटी है, उसके सामने ये है, उसके सामने ये है, मेरे पीछे एक चींटी है, उसके पीछे एक और चींटी है, उसके पीछे एक और चींटी। चींटी का जितना विजन होगा, चार–पांच आगे और चार–पांच पीछे तक का दिखाई देगा किसी भी चींटी को। समझो बड़ी थाली है जो कि पूरे थाली को चींटियां नहीं देख सकतीं, समझो एक छोटा सा अंश ही दिख रहा है। चार–पांच चींटी पीछे और चार–पांच चींटी आगे, वो आगे और पीछे शब्द इस्तेमाल करेगी।

लेकिन कोई अगर दूर से ऑब्जर्व कर रहा है इस पूरी बड़ी थाली को और वो देख रहा है कि गिनती चल रही है सर्कुलर चींटियों की। इसमें कौन सी चींटी को आगे और कौन सी चींटी को पीछे कहा जाएगा। ये शब्द कोई मायने ही नहीं रखता एक सर्किल में। जहां हमारा नैरो विजन है वहां हम आगे–पीछे कह सकते हैं लेकिन अगर हम पूरे को एक साथ देख रहे हैं तो आगे और पीछे शब्द तो गायब हो जाएंगे, उनकी तो कोई वैल्यू ही नहीं बची फिर कि कौन आगे है और कौन पीछे है। जो आगे के आगे के आगे है वो भी हमारे पीछे है और जो पीछे के पीछे के पीछे है वो हमारे आगे है। ये शब्द तो मीनिंगलेस हो गया, पूरब–पश्चिम मीनिंगलेस है

ठीक वैसे ही ऊपर–नीचे मीनिंगलेस है।

जब हम आंतरिक अनुभव में जाते हैं तो वहां हम कैसे इस बात को प्रगट करें इसलिए हम अपने सामान्य अनुभव वाले शब्द ही उपयोग करते हैं। चूंकि हम सिर को ऊपर मानते हैं और हृदय को नीचे मानते हैं, नाभि को उससे भी नीचे मानते हैं, जमीन को अपने बिल्कुल ही नीचे मानते हैं तो हम इन्हीं शब्दों का प्रयोग करके सहस्रार से मूलाधार की ओर हृदय चक्र (सबकॉन्शस) की दिशा में अपनी ऊर्जा को शिफ्ट करने को कह रहे हैं। इसमें भी कोई रियलिटी नहीं है, लेकिन कामचलाऊ। इसका अर्थ पकड़ लीजिए।

कह रहे हैं कि सहस्रार से नीचे की तरफ देखें गहराई में तो वहां तात्पर्य समझ गए। एक्चुली तो ऐसा ऊंचा और नीचा नहीं है किन्तु सिर हृदय, पेट हम सामान्य रूप से इनको ऊपर और नीचे में बांटे हुए हैं, उस धारणा से कह रहे हैं नीचे की तरफ देखें। अपने शरीर को भीतर से आप कल्पना कर सकते हैं मानो आप भीतर देख रहे होते, भीतर शरीर बिल्कुल खोखला होता तो कैसा लगता। सिर की तरफ से देखते झांक कर तो एक गहरा कुआं जैसा, टनल जैसा जिसमें गहराई होती। उस फीलिंग को पकड़ें, शब्द को मत पकड़ें। शब्द यथार्थ नहीं है, वह कामचलाऊ है। इस फीलिंग को समझिए।

अगला सवाल– क्या कोई चुटकुले गंभीर भी होते हैं?

जी हां, होते हैं। जरूर होते हैं। उन्हें सुनकर रोना आता है। उदाहरण देखो–

◦ गोल्डन रूल– वन हू हैज गोल्ड, ही विल मेक दि रूल्स। स्वर्ण नियम– जिसके पास स्वर्ण है वही नियम बनाता है।

◦ जो सड़क सफलता की मंजिल तक जाती है, वह सदा से निर्माणाधीन है– रोड टू सक्सेस इज ऑल्वेज अंडर कंस्ट्रक्शन।

◦ और यह भी स्मरण रखिए–जो सड़क सफलता की दिशा में जाती है, वह पागलखाने पर जाकर समाप्त होती है।

◦ चूंकि प्रकाश की गति ध्वनि से बहुत त्यादा तेज है, इसी कारण पहली नजर में प्यार हो जाने के काफी वक्त बाद उस व्यक्ति की बातें सुनकर पता चलता है कि भूल हो गई।

◦ देखिए, मुझसे विवाद मत करिए। मूर्ख इंसान से बहस करना मूर्खता का ही लक्षण माना जाता है।

◦ विशेषज्ञ का मतलब है ऐसा व्यक्ति, जो अपना विषय समझाने की कोशिश में किसी को भी कंफ्यूज़ कर सकता है।

◦ स्प्रिट केन प्रिजर्व मेनी थिंग्स एक्स्सेप्ट स्पिरिट। एल्कोहल में अनेक चीजें सुरक्षित रखी जा सकती हैं, सिर्फ चेतना को छोड़कर।

◦ याद रखिए कि आप एक अनूठे, अद्भुत, बेजोड़, अतुलनीय और असाधारण व्यक्ति हैं;

शेष साढ़े छः अरब आम लोगों की तरह।

◦ जहां सुमति है, वहां सम्पत्ति है। और हर सम्पत्ति के पीछे छिपी खड़ी विपत्ति है।

◦ धनवान होने पर ही पता चलता है कि आपके कितने चाहने वाले, हितैषी और रिश्तेदार इस संसार में अब तक छिपे पड़े थे।

आज का आखिरी प्रश्न– क्या महाजीवन, सम्मोहन करने के दौरान ध्यान भी करना है?

दोनों चीजें एक साथ नहीं। अंत में जब हम दस मिनट रिलैक्सेशन का देते हैं वह ध्यान का है, बाकी के समय आप साक्षी होने की कोशिश नहीं करिए। क्योंकि जब आप साक्षी होंगे तो निर्विचार हो जाएंगे और जो आपसे कल्पना करने को कहा जा रहा है वह भी समाप्त हो जाएगी। साक्षी चैतन्य में ध्यानस्थ होने पर कल्पनाएं भी विदा हो जाएंगी तब आप मन की गहराई में क्या छुपा है यह नहीं जान पाएंगे। ध्यान का मतलब हुआ सुपरकॉन्शसनेस, सामान्य मन के ऊपर और सबकॉन्शस है सामान्य मन के नीचे। दोनों चीजें इकट्ठी नहीं होंगी, एक बार में एक ही चीज होगी।

जब हम गहराई में जा रहे हैं तो वहां मन के तत्व कल्पना, स्वप्न, विजन, विचार, भावना, पास्ट के छुपे हुए अनुभव वे सारी चीजें मौजूद होंगी, कल्पनाशक्ति वहां मौजूद होगी। जब हम सुपर कॉन्शसनेस में जाएंगे तो वहां हम मन को ट्रांसेंड कर गए और मन का जो फंक्शन है वहां नहीं होगा। जो विजुआलाइज करना है, जो चित्र देखना है वह ध्यान में नहीं होगा। ध्यान में तो एकदम से खाली हो जाएंगे, कुछ भी नहीं होगा वहां, वहां पर किसी भी चीज का अनुभव नहीं होगा, इस फर्क को याद रखिएगा। दोनों इकट्ठे साथ–साथ नहीं होंगे लेकिन आगे–पीछे दस मिनट का अवसर हम देते हैं जब हम सब मन के भी पार चलें और ध्यानस्थ हो जाएं। ताकि एक पूरा सर्किल हो जाए, कंप्लीटनेस।

अब हम अंत में डॉ. ओशो प्रमोद के सुंदर गीत के संग उत्सव मनाकर विदा होंगे। सब खड़े हो जाएं, नाचें, गाएं, मस्ती में डोलें।

मंजिलें मिलीं जब से ओशो मिले हैं, बहारें खिलीं जब से ओशो मिले हैं।
मेरी जिंदगी थी, दुखों की कहानी, खुशी हर कहीं जब से ओशो मिले हैं।
कभी लोक की, कभी परलोक की थी, चिंताएं मिटीं जब से ओशो मिले हैं।
कठिन थीं बहुत आसमानों की राहें, है अंबर यहीं, जब से ओशो मिले हैं।
नदिया की तरह, मैं भी भटका बहुत हूं, मैं सागर बना जब से ओशो मिले हैं।
मंजिलें मिलीं जब से ओशो मिले हैं, बहारें खिलीं जब से ओशो मिले हैं।
मेरी जिंदगी थी, दुखों की कहानी, खुशी हर कहीं जब से ओशो मिले हैं।

9

प्रेम की कला सीखो

आज का प्रथम प्रश्न– ओशो ने कहा है कि प्रेम, विवाह से नष्ट हो जाता है। क्या ऐसा होना अनवार्य है?

क्षमा कीजिए, आपको गलतफहमी हो गई है। 'दि डिसिप्लिन ऑफ ट्रासेन्डेन्स' में ओशो के अमृत वचन इस प्रकार हैं– 'मैंने कभी नहीं कहा है कि प्रेम, विवाह से नष्ट होता है। विवाह, प्रेम को कैसे नष्ट कर सकता है? हां, यह विवाह में नष्ट अवश्य हो जाता है, लेकिन इसे तुम नष्ट करते हो, विवाह नहीं। यह दोनों साथियों द्वारा नष्ट हो जाता है। विवाह प्रेम को कैसे नष्ट कर सकता है? इसे तुम नष्ट करते हो क्योंकि तुम नहीं जानते कि प्रेम क्या होता है। तुम सिर्फ दिखावा करते हो कि तुम जानते हो, तुम सिर्फ आशा करते हो कि तुम्हें पता है, तुम्हारा सपना होता है कि तुम जानते हो, लेकिन तुम नहीं जानते कि प्रेम क्या है। प्रेम को सीखना होता है, यह सबसे बड़ी कला है जो सीखी जा सकती है।

यदि लोग नाच रहे होते हैं और कोई तुम्हें पूछता है, 'आओ और नृत्य करो,' तुम कहते हो, 'मैं नहीं जानता कि कैसे करना।' तुम सिर्फ कूदना और नाचना शुरू नहीं करते ताकि सबको लगे कि तुम एक महान नर्तक हो। तुम बस अपने आपको एक विदूषक साबित करोगे। तुम अपने को एक नर्तक साबित नहीं करोगे। इसे सीखना होगा, इसकी सुघड़ता, इसके पदन्यास, तुम्हें इसके लिए शरीर को प्रशिक्षित करना होगा।

प्रेम का पहला सबक हैः प्रेम को मांगो मत, सिर्फ दो। एक दाता बनो। लोग ठीक विपरीत कर रहे हैं। यहां तक कि जब वे देते हैं, तो इस ख्याल से देते हैं कि प्रेम को वापस आना चाहिए। यह एक सौदा है। वे बांटते नहीं हैं, वे खुलकर बांटते नहीं। वे एक शर्त के साथ

बांटते हैं। वे अपनी आंखों के कोने से देखते रहते हैं, वापस आ रहा है या नहीं। बहुत गरीब लोग हैं! वे प्रेम के प्राकृतिक तरीके को नहीं जानते। तुम बस उंडेलो, वह आ जाएगा।

और अगर यह नहीं आ रहा है, तो चिंता की बात नहीं है क्योंकि एक प्रेमी जानता है कि प्रेम करने का अर्थ है खुश होना। यदि वह आता है, बहुत अच्छा, तो फिर खुशी बढ़ती है। लेकिन फिर भी अगर यह कभी नहीं आता है तो प्रेम करने से ही तुम इतने खुश हो जाते हो, मस्ती से भर जाते हो, कि किसे फिक्र वह आता है या नहीं।

प्रेम का अपना आंतरिक आनंद है। यह तब होता है जब तुम प्रेम करते हो। परिणाम के लिए प्रतीक्षा करने की कोई आवश्यकता नहीं है। बस प्रेम करना शुरू करो। धीरे-धीरे तुम देखोगे कि बहुत ज्यादा प्रेम वापस तुम्हारे पास आ रहा है। व्यक्ति प्रेम करता है और प्रेम करके ही जानता है कि प्रेम क्या है। जैसा कि तैराकी तैरने से ही आती है, प्रेम प्रेम के द्वारा ही सीखा जाता है। लोग बहुत कंजूस होते हैं। वे किसी महान प्रेमिका के लिए इंतजार कर रहे हैं, तो ही वे प्रेम करेंगे। वे बंद रहते हैं, वे सिकुड़ जाते हैं। वे सिर्फ इंतज़ार करते हैं। कहीं से कोई क्लियोपेट्रा आएगी और फिर वे अपना दिल खोल देंगे, लेकिन उस समय तक वे पूरी तरह भूल जाएंगे कि इसे कैसे खोला जाए। तुम बस जाकर चित्र बनाना शुरू नहीं करते सिर्फ इसलिए कि कैनवास उपलब्ध है और ब्रश है और रंग है। तुम पेंटिंग शुरू नहीं करते। तुम नहीं कहते 'सभी आवश्यक चीजें यहां हैं, तो मैं पेंट कर सकता हूं।' तुम पेंट कर सकते हो लेकिन इस तरह तुम एक चित्रकार नहीं बनोगे।

तुम एक स्त्री से मिलते हो– कैनवास वहां है। तुम तुरंत एक प्रेमी हो जाते हो, तुम पेंटिंग शुरू कर देते हो। और वह तुम पर पेंटिंग करना शुरू करती है। बेशक तुम दोनों मूर्ख साबित होते हो– चित्रित मूर्ख– और देर-सबेर तुम समझते हो कि क्या हो रहा है। लेकिन तुमने कभी नहीं सोचा था कि प्रेम एक कला है। कला तुम्हारे जन्म के साथ पैदा नहीं होती, तुम्हारे जन्म के साथ इसका कोई लेना-देना नहीं है। तुम्हें इसे सीखना होता है। यह सबसे सूक्ष्म कला है।

तुम एक क्षमता के साथ ही पैदा होते होगे। बेशक, तुम एक शरीर के साथ पैदा होते हो, तुम एक नर्तक हो सकते हो क्योंकि तुम्हारे पास शरीर है। तुम अपने शरीर को हिला सकते हो और तुम एक नर्तक हो सकते हो लेकिन नृत्य को सीखना पड़ेगा। नृत्य सीखने के लिए बहुत प्रयास करना जरूरी है। और नाच बहुत मुश्किल नहीं है क्योंकि तुम अकेले इसमें शामिल हो।

प्रेम अधिक कठिन है। यह किसी और के साथ नाच है। दूसरे के लिए भी जानने की जरूरत है कि नृत्य क्या है। किसी के साथ तालमेल बिठाना एक महान कला है। दो लोगों के बीच एक सामंजस्य बनाना : दो लोगों का मतलब दो अलग दुनियाएं। जब दो दुनियाएं करीब आती हैं, संघर्ष अनिवार्य है। तुम नहीं जानते कि कैसे सामंजस्य बनाना। प्रेम समस्वरता है। और खुशी, स्वास्थ्य, समस्वरता, सब कुछ प्रेम से उपजता है।

प्रेम करना सीखो। किंतु तुम्हें एक बहुत ही गलत तरीके से प्रशिक्षित किया गया है। सबसे पहले, लोग एक गलत धारणा में जीते हैं कि सब लोग पहले से ही प्रेमी हैं। सिर्फ पैदा

होने से तुम सोचते हो कि तुम एक प्रेमी हो। यह इतना आसान नहीं है। हां, एक संभावना है, लेकिन संभावना को प्रशिक्षित करना जरूरी है, अनुशासित करना जरूरी है। एक बीज मौजूद है, लेकिन उसका फूल बनना जरूरी है।

तुम अपना बीज सम्हाले रहो, कोई मधुमक्खी नहीं आएगी। क्या तुमने कभी मधुमक्खियों को बीज के लिए आते देखा है? क्या वे नहीं जानतीं कि बीज फूल बन सकता है? लेकिन वे तभी आती हैं, जब बीज फूल बन जाते हैं। एक फूल बनो, बीज मत रहो।

दो लोग, जो अलग–अलग दुखी हैं, एक–दूसरे के लिए अधिक दुख पैदा करते हैं जब वे एक साथ होते हैं। यही गणितीय है। तुम दुखी थे, तुम्हारी पत्नी दुखी थी, और तुम दोनों को उम्मीद है कि एक साथ होने पर तुम दोनों खुश हो जाओगे? यह इतना सरल गणित है जैसे दो और दो चार। इतना सरल है। यह किसी उच्चतर गणित का हिस्सा नहीं है, यह बहुत आम है, तुम इसे अपनी उंगलियों पर गिन सकते हो। तुम दोनों दुखी हो जाओगे।

विवाह अपने आपमें कभी कुछ नष्ट नहीं करता। विवाह सिर्फ उसको बाहर लाता है जो तुममें छिपा है, वह उसे उघाड़ता है। यदि प्रेम पीछे छुपा हुआ है, भीतर छिपा हुआ है, तो विवाह उसे बाहर लाता है। अगर प्रेम सिर्फ एक बहाना था, बस एक प्रलोभन, तो देर–अबेर वह गायब हो जाएगा। और फिर तुम्हारी सच्चाई, तुम्हारा कुरूप व्यक्तित्व प्रगट होता है। विवाह केवल एक अवसर है, इसलिए जो भी बाहर आ सकता है वह बाहर आ जाएगा।

मैं यह नहीं कह रहा हूं कि प्रेम ने विवाह को नष्ट कर दिया है। जो लोग प्रेम करना नहीं जानते उनके द्वारा प्रेम नष्ट हो जाता है। प्रेम इसलिए नष्ट होता है क्योंकि पहले तो, प्रेम होता ही नहीं। तुम एक सपने में जी रहे थे। हकीकत वह सपना नष्ट कर देती है। वरना प्रेम अनंत है, अनंतता का हिस्सा है। यदि तुम विकसित होते हो, अगर तुम इस कला को जानते हो, और जीवन की वास्तविकताओं को स्वीकार करते हो, तो यह हर दिन बढ़ता चला जाता है। विवाह प्रेम में विकसित होने का एक जबरदस्त अवसर बन जाता है। अगर प्रेम सच में प्रेम है...

मेरा क्या मतलब है जब मैं कहता हूं 'सच में प्रेम?' मेरा मतलब है कि सिर्फ किसी दूसरे की मौजूदगी में अचानक तुम्हें खुशी होती है, सिर्फ किसी के साथ होने से तुम पर मस्ती छा जाती है। किसी के साथ होने भर से तुम्हारे हृदय में गहरे कुछ परितुष्ट हो जाता है... तुम्हारे हृदय में कुछ संगीत शुरू होता है, तब तुम्हारा सामंजस्य बनता है। दूसरे की उपस्थिति मात्र तुम्हें अधिक अखंड, अधिक केंद्रित बनाती है। तुम्हारी जड़ें जमीन में गहरी जाती हैं, तो यह प्रेम है।

प्रेम एक जुनून नहीं है, प्रेम एक भावना नहीं है। प्रेम एक बहुत गहरी समझ है कि कोई और किसी तरह तुम्हें पूरा करता है। कोई तुमको एक पूरा वर्तुल बनाता है। किसी अन्य की उपस्थिति तुम्हारी उपस्थिति को बढ़ाती है। प्रेम तुम्हें स्वयं होने की स्वतंत्रता देता है, यह स्वामित्व नहीं है। सेक्स को कभी प्रेम मत समझना, अन्यथा तुम धोखा खाओगे।

सतर्क रहो, और जब तुम किसी की सिर्फ उपस्थिति, शुद्ध उपस्थिति के साथ महसूस करने लगते हो– और कुछ नहीं, और किसी बात की जरूरत नहीं है, तुम कुछ भी नहीं पूछते–

बस उपस्थिति, वह दूसरा तुम्हें प्रसन्न करने के लिए पर्याप्त है। कुछ तुम्हारे भीतर खिलना शुरू होता है, हजारों कमल खिले हैं, तो तुम प्रेम में हो।'

दूसरा सवाल– मैं आती–जाती श्वास में ध्यान देता हूं तो इनहेलेशन के दौरान ऐसा लगता है कि हल्की सी लहर या कभी–कभी बहुत सी लहरें ऊपर की ओर जा रही हैं माथे एवं दोनों आंखों तक उसमें मुझे बहुत अच्छा लगता है। और जब मैं खाली होता हूं फुरसत में तो आती सांसों के साथ इसका बहुत मजा लेता हूं। कहीं ऐसा तो नहीं कि मैं किसी गलत आदत का शिकार हो रहा हूं?

बड़ी अद्भुत बात, जिस चीज में मजा आता है, आनंद आता है उसमें हमें एकदम से शक पैदा हो जाता है कि कहीं गलती तो नहीं हो रही। आज तक किसी आदमी ने नहीं पूछा कि मैं दुखी हूं, चिंतित हूं, ऐसा तो नहीं कि मैं कोई कल्पना कर रहा हूं, किसी ने नहीं पूछा। हां, अगर किसी चीज में मजा आने लगे, शांति आने लगे, आनंद महसूस हो तो एकदम से लगता है कि अरे कुछ गलत हो रहा है, मैं किसी भ्रम में तो नहीं पड़ गया, कोई कल्पना तो नहीं। कितने लोगों के सवाल आते हैं कि एक दिन ध्यान में बहुत रस आया, मगन हो गया, कहीं मैंने कोई कल्पना तो नहीं कर ली?

यह तो विचित्र सवाल है, हमें आनंद पर बिल्कुल भरोसा नहीं। अब यह खुद ही कह रहे हैं कि फुरसत मिलते ही खाली बैठ कर सांसों का खूब मजा लेता हूं, कुछ गलत तो नहीं हो रहा। आज तक किसी ने नहीं पूछा कि जब खाली रहता हूं तो चिंताग्रस्त रहता हूं, यह कुछ गलत तो नहीं। हमें एक दम से भरोसा है कि दुख तो सत्य है, यह तो रहेगा ही, यही है जिंदगी थोड़े गम हैं, बाकी थोड़ी खुशियां तो ऐसे ही कहने के लिए हैं, हैं नहीं। गम ही गम हैं। गम पर तो हमें श्रद्धा है, भरोसा है। कई लोग आकर के कहते हैं कि पता नहीं, यह आध्यात्मिक यात्रा कर पाएंगे कि नहीं, हमको तो श्रद्धा ही नहीं है।

तुम बड़े श्रद्धालु हो, तुम्हें गम पर भरोसा है, दुख पर भरोसा है। जहां–जहां कुछ गलत हो रहा है तुम्हें बिल्कुल उस पर श्रद्धा है, आज तक तुम्हें कभी शक पैदा नहीं हुआ कि मेरी जिंदगी में इतनी तकलीफें क्यों हैं, कहीं कल्पना में तो नहीं फंस गया। आज तक किसी ने यह सवाल नहीं पूछा। जैसे ही आनंद की लहर उठती है शक शुरू। यह कह रहे हैं कि कभी–कभी खूब लहर उठती है आनंद की तो एकदम से शक पैदा हो जाता है कि अरे, कुछ गड़बड़ हो रही है। मैं और आनंदित, ऐसा तो हो ही नहीं सकता। ऐसा भला कैसे होगा?

मैंने सुना है नसीरुद्दीन के बारे में कि वह एक डॉक्टर के पास जाकर रोज उसका दिमाग खाता, पता नहीं कौन–कौन सी तकलीफें बताता। ऐसी बीमारियों के नाम बताता मेडिकल साइंस की किताब में जिनका वर्णन ही नहीं है, डॉक्टर भी थक चुका था इस आदमी से। एक दिन उसने किसी प्रकार टालने के लिए कहा क्योंकि नसीरुद्दीन रोज आकर पूछता

कि इसका कारण क्या है? डॉक्टर ने कहा कि तुम ऐसा करो कि करीब पंद्रह दिनों के लिए किसी हिल स्टेशन चले जाओ वहां की आबोहवा लगेगी तो ठीक हो जाओगे। डॉक्टर तो अपनी रक्षा के लिए कह रहा था कि कम से कम पंद्रह दिन ही छुटकारा मिलेगा उससे।

नसरुद्दीन ने मान ली उसकी बात, चले गए हिल स्टेशन पर। दूसरे दिन वहां से फोन आया डॉक्टर के पास, फोन का काम ही यह है कि दूर से भी हम दुख दे सकते हैं। जब फोन नहीं था तो बड़ी तकलीफ होती थी, लंबी यात्रा करके जाओ तब किसी को दुखी कर पाते थे, अब तो दूर से ही फोन करके परेशान किया जा सकता है। नसीरुद्दीन ने फोन किया कि डॉक्टर साहब मैं आ गया हूं हिल स्टेशन पर, दो घंटे हो गए हैं यहां पर पहुंचे और यहां की ताजी हवाओं में बड़ा अच्छा लग रहा है, अब बताइए आपकी क्या डायग्नोसिस है? अच्छा लग रहा है बताइए क्यों, यह कौन सी बीमारी है?

हमारी आदत पड़ गई है हर चीज पर कि क्यों। इस आदत से बाज आना, क्योंकि अगर तुमने यह सवाल पैदा किया कि अच्छा लग रहा है, आनंद की लहर उठ रही है, शांति मिल रही है बताइए क्यों, तब आप अपने पैर पर कुल्हाड़ी मार रहे हो। अब तुम उस आनंद को बचने न दोगे। जिस चीज में तुम्हें शक है तुम्हें लगता है कि कहीं कुछ गलत तो नहीं हो रहा है, कोई कल्पना तो नहीं हो गई, तुम इस चीज को टिकने न दोगे। ऐसा कह के तुम उसकी जड़ें उखाड़ रहे हो। तुम अपनी अश्रद्धा प्रगट कर रहे हो कि मैं नहीं मानता और जिस चीज को तुम मानते ही नहीं हो उसको तुम होने ही नहीं दोगे।

दुख को तुम मानते हो, चिंता को तुम मानते हो, लड़ाई–झगड़े को तुम मानते हो उसके लिए तुम पच्चीस सही तर्क देते हो कि क्यों गुस्सा आता है तुम्हें। कोई पागल थोड़ी हो, क्या करोगे स्थितियां ही ऐसी हैं, डांटना ही पड़ेगा। क्रोधित नहीं होंगे तो जिंदगी चलेगी नहीं। तुम्हारे पास इतने लॉजिक हैं दुखी होने के, क्रोधित होने के लेकिन कभी उस पर शक पैदा नहीं होता कि कुछ अनावश्यक हो रहा है, वह एकदम से ठीक हो रहा है। जो–जो चीजें गलत हैं वह–वह तुम्हारे लिए बिल्कुल ठीक कोटि में आती हैं और जैसे ही कुछ ठीक होने लगता है, थोड़ी सी ध्यान की झलक, कुछ आनंद की लहर एकदम से शक पैदा होता है कि क्या हो रहा है।

कितने लोग आते हैं और कहते हैं कि ध्यान करने से खूब अच्छा लगता है गुरूजी, आपने कुछ हिप्नोटाइज तो नहीं कर दिया? तुरंत शक पैदा हो गया कि यहां सब ऐसा माहौल था, सौ–डेढ़ सौ मित्र मौजूद हैं, सब ध्यान कर रहे हैं इनके बीच में आकर कहीं सम्मोहित तो नहीं हो गया मैं। मुझे अच्छा लग रहा था, अच्छा लगने पर हमें इतना शक है, कैसे अच्छा लग सकता है, यह तो असंभव है। जरूर कुछ आचार्यों ने कर दिया होगा। प्रदीप जी बैठे हैं रेकी वाले, दूर से ही डिस्टेंस हीलिंग कर देते हैं, सावधान रहना, कहीं आपको न कर दें।

आपकी जिंदगी भर की प्रेक्टिस, सारे ग्रह–नक्षत्र, विधाता, ईश्वर, माता–पिता, पालन–पोषण, समाज व्यवस्था, राजनीति व्यवस्था सब मिलकर आपको दुखी कर रहे थे, जेनेटिक्स दुखी कर रहे थे और यहां आकर अचानक पांच मिनट अच्छा लगा, जरूर इन्होंने कुछ रेकी–वेकी कर दी होगी, यह हो ही नहीं सकता सही। कुछ कल्पना है, कुछ गलत हो रहा

है। सावधान हो जाता है हमारा चित्त कि कुछ गड़बड़ है। कई लोग इसीलिए फिर दुबारा नहीं आते, पहले कैंप में आते हैं और अगर उनको अच्छा लग गया तो अब वह नहीं आएंगे। उनको लगता है कि अरे वहां तो कुछ हिप्नोसिस चल रही है। ओशो का प्रवचन सुन रहे थे चुपचाप और अचानक कुछ अच्छा लगने लगा कि आवाज में ही कुछ हिप्नोटिक असर है, सावधान, अब कभी न जाएंगे वहां।

कैसा हमारा विचित्र मन है जरा सोचो। अपनी श्रद्धा को पलटाओ, जो सत्यम शिवम सुंदरम है, जो श्रेष्ठ है, शांतिदायी है, आनंददायी है, प्रेमपूर्ण है कृपया उस पर भरोसा करो। ऐसा नहीं कि उन चीजों की झलकें तुम्हारी जिंदगी में नहीं आतीं, प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में वे लहरें आती हैं कभी न कभी लेकिन हम उस पर भरोसा ही नहीं करते इसलिए समाप्त हो जाती हैं। कोई आदमी आपसे प्रेमपूर्वक व्यवहार करता है, मित्रता करता है आप तुरंत चौकन्ने हो जाते हो कि अच्छा, कुछ गड़बड़ है, आदमी बदमाश लग रहा है, कितना मीठा बोल रहा है, जरूर कोई षडयंत्र है। दोस्ती पर हमें भरोसा नहीं है, प्रेम पर हमें भरोसा नहीं है।

एक आदमी आकर गाली देने लगे, अपमान करने लगे उस पर हमें कभी शक पैदा नहीं होता कि यह आदमी कोई नाटक तो नहीं कर रहा। हुआ आज तक आपको कोई शक? कोई आपका अपमान करे, भड़काए, आप पर गुस्सा हो तो कभी आपको शक नहीं होता कि कहीं यह आदमी नाटक तो नहीं कर रहा। लेकिन कोई आपसे आकर अच्छी बात करे, प्रेमपूर्ण व्यवहार करे, दोस्ती की बात करे तो एकदम से शक पैदा हो जाता है कि मामला क्या है। इसका मतलब क्रोध पर आपको श्रद्धा है, प्रेम पर आपको श्रद्धा नहीं है। मित्रता पर संदेह है, शत्रुता पर पूर्ण भरोसा है और आपकी जिंदगी में केवल वही हो सकता है जिस पर आपको भरोसा है।

अन्य चीजें होती हैं आपके कोशिश के बावजूद, कुछ अलौकिक घटता है लेकिन आप उसकी जड़ें उखाड़कर फेंक देते हो, आप उसको टिकने नहीं देते। और जड़ें उखाड़ने की जो टेकनीक है वह है शक। आप मानते ही नहीं कि ऐसा हो सकता है और जब मानते ही नहीं तो आगे से नहीं होगा क्योंकि हम होने ही नहीं देंगे।

मैं एक बार आगरा गया था, वहां एक छोटा सा सत्संग था। कुछ पुराने साधक आए हुए थे। वह कहने लगे कि ओशोधारा में लोग एनलाइटेंड हो रहे हैं, हमको भरोसा नहीं आता। वह कहने लगे कि सन 1975 से ओशो के संन्यासी हैं, ध्यान कर रहे हैं कुछ नहीं हुआ, यह हो ही नहीं सकता कि अभी नए-नए साधक ओशोधारा में आए और एनलाइटेंड हो गए, असंभव।

मैंने कहा कि सुनो, एक नसीरुद्दीन की कहानी सुनाता हूं। मुल्ला नसीरुद्दीन को मछली मारने का बड़ा शौक था, रोज शाम को वह दो-चार घंटे नदी में बिताता था। छोटी जगह थी, छोटी ही नदी भी थी इसलिए मछलियां भी छोटी-छोटी थीं। जो सबसे बड़ी मछली कभी पकड़ में आई थी वह चार इंच लंबी थी। और नसीरुद्दीन धीरे-धीरे बुजुर्ग हो गया, सत्तर साल उम्र हो चुकी थी उसकी। तो उसके गांव में चर्चित है कि जो सबसे बड़ी मछली वहां

पकड़ी गई है वह चार इंच लंबी थी और वह भी नसीरुद्दीन ने ही पकड़ी थी। एक दिन बाहर से कोई मछुआरा आया था, कम उम्र का था, ज्यादा अनुभवी नहीं था उसने कुछ टेकनीक बताई कि तुम्हारा यह जो कांटा है ऐसा नहीं होना चाहिए, ऐसा-ऐसा बनाओ। ऐसा नहीं है कि नदी में बड़ी मछलियां नहीं हैं, तुम्हारे पकड़ने का ढंग गलत है इसलिए वह पकड़ में नहीं आतीं।

तो उस आदमी ने कुछ फेर-बदल करवाई तो एक बड़ी भारी मछली पकड़ में आ गई, इतनी बड़ी कि उसको बाहर निकालने के लिए नदी से दो-तीन आदमियों को बुलाना पड़ा, चार फुट की मछली। उसको नदी के किनारे रेत पर रखा जो कि तड़फ रही थी। नसीरुद्दीन और उसके दो-तीन दोस्त खड़े होकर देख रहे थे। नसीरुद्दीन उस मछली के चारों तरफ जाए और झुक-झुक के उसको यहां-वहां से देखे, उसको हिलाए-डुलाए, फाइनली उसने अपने दोस्तों से कहा कि भाइयों, मदद करो, इसको वापिस पानी में धकेलो, यह मछली है ही नहीं। क्योंकि मेरा सत्तर साल का सिद्धांत गलत हुआ जा रहा है, इतनी बड़ी मछली हो ही नहीं सकती, मैं मानता ही नहीं।

मेरी पूरी जिंदगी का अनुभव कहता है कि मछलियां ज्यादा से ज्यादा चार इंच लंबी ही होती हैं, हम लोग किसी भ्रांति में फंस गए हैं, यह मछली हो ही नहीं सकती। वापिस धक्का मारो इसको, यह आदमी कुछ जालसाज है, जो हमको आधुनिक ढंग का कांटा बताया है मछली पकड़ने के लिए, यह कोई बदमाश है, यह मछली हो ही नहीं सकती। अगर हमें भरोसा ही नहीं है कि इतनी बड़ी मछली हो सकती है तो पकड़ में भी आ जाएगी तो हम छोड़ देंगे उसको क्योंकि हम मानेंगे ही नहीं। हमारा पुराना सारा सिद्धांत गलत हो जाएगा उसकी वजह से। तो सत्तर साल हम बेवकूफ ही थे कि दो-दो, तीन-तीन इंच की मछली पकड़ते रहे।

1975 से सन्यासी हैं, साधना कर रहे हैं और मछली पकड़ में आई ही नहीं। और यह नालायक नौसिखिए अभी-अभी आए और यह कह रहे हैं कि हमने बड़ी भारी मछली पकड़ ली, हो ही नहीं सकती। प्यारे मित्रो, आप सबसे निवेदन करता हूं यह धारणा लगभग सबके अंदर भरी हुई है। जो भी सत्यम शिवम सुंदरम है, शांतिदायी, आनंददायी है, प्रेमपूर्ण है उस पर श्रद्धा करो। और जो-जो गलत है उस पर संदेह करो क्योंकि जड़ें उसकी उखाड़नी है गलत की। जो-जो असत्य, अशिव, असुंदर, अप्रेमपूर्ण उस पर संदेह करो। यह दोनों चीजें हमारे अंदर मौजूद हैं, संदेह की वृत्ति और श्रद्धा की वृत्ति, अभी हमने उनको जहां एप्लाई किया है वह बिल्कुल गलत पैटर्न है।

गलत के ऊपर हमने भरोसा किया है और सही के ऊपर हम शक करते हैं। बस जरा सा उलट-फेर करना है। जिसको मैं आत्मरूपांतरण कह रहा हूं वह कोई बड़ी बात नहीं है। जरा सा उलट-फेर, दोनों चीजें हमारे भीतर हैं, संदेह की वृत्ति भी और श्रद्धा की वृत्ति भी बस जरा सा पलट दो। जो भी आनंददायी है उस पर करो श्रद्धा ताकि उसका विकास हो। तुम जिस चीज पर भरोसा करते हो वह विकसित होती है। भरोसा पानी की तरह है, जिस पौधे पर तुम पानी सींचोगे वह बढ़ेगा। और शक जहरीला तत्व है, तुम जिस पौधे पर डालोगे वह पौधा सूख जाएगा, मर जाएगा। श्रद्धा खाद-पानी है।

अब तुम पर निर्भर है, क्योंकि दोनों चीजें तुम्हारे पास हैं और दोनों प्रकार के पौधे भी तुम्हारे पास हैं। एक तुमने बड़ी मुश्किल से पूरा जंगल खड़ा किया है दुखद और कंटीले पेड़ों का वह तुम्हारी मेहनत का परिणाम है लेकिन इसके बावजूद भी अस्तित्व की कृपा से बींच–बींच में कभी अचानक फूल वाले पौधे आ जाते हैं। माना कि तुम इसमें भरोसा नहीं करते लेकिन फिर भी तुम्हारे बावजूद भी कहीं फूल खिल जाता है और तुम तुरंत अपना जहर वाला स्प्रे लेकर दौड़ते हो और कहते हो कि हमको इस पर भरोसा ही नहीं। हमारी जिंदगी में और फूल महकें, ऐसा हो ही नहीं सकता। आंसू भरी हैं जीवन की राहें, बदलो इस भरोसे को। आंसू पर भरोसा नहीं, आनंद पर भरोसा लाओ।

आज का आखिरी प्रश्न– हिप्नोटिज्म में आत्मसुझाव किस प्रकार प्रभावी होता है?

हमारा मन सुझावों के लिए बड़ा रिसेप्टिव है। आज हम जो भी हैं यह बाहर से प्राप्त सुझावों का ही परिणाम है। अच्छा–बुरा जो भी हमारा मिश्रण बन गया है वह भांति–भांति के सजेशंस ही हैं जो लोगों ने हमको दिए हैं और खासकर बचपन में हम बहुत ही रिसेप्टिव होते हैं। हमारे भीतर कोई तर्कशक्ति नहीं होती, जो हमसे कहा जाता है हम वही मान लेते हैं।

पिताजी बच्चे का हाथ पकड़कर ले गए मंदिर और कहा कि ये भगवान की मूर्ति है झुको और पिताजी को झुकते हुए देखकर वह बच्चा भी बड़े भाव से झुक गया और फिर ऐसा ही बार–बार हुआ और कई–कई लोगों को उसने देखा बड़े–बुजुर्ग लोगों को जिनको वह बहुत समझदार मानता है वे सब पत्थर की पूजा कर रहे थे इसलिए ये बच्चा भी पत्थर की पूजा करने लगा, एक सुझाव उसके भीतर पहुंच गया कि ये जो स्पेशल डिजाइन का पत्थर काटकर रखा गया है ये भगवान है।

ये बात उसके अनकांशियस में बैठ गई। बिल्कुल झूठ है, उतना ही झूठ जितना कि फेयर एण्ड लवली से गोरे होते हैं। जब आपने पहली बार विज्ञापन देखा होगा तीन दिन में गोरे होने की गारंटी अथवा मनी बैक, आप भी हंसे होंगे कि क्या बेवकूफी की बात है। जब आपने पढ़ा या सुना तो देखा कि सुप्रसिद्ध अभिनेत्री मुस्कराती हुई कह रही है कि मेरे सौंदर्य का राज, जब पहली बार आपने पढ़ा होगा तो हंसे होंगे कि क्या बेवकूफी की बात है, साबुन से कोई सुंदर कैसे होगा लेकिन जब आप देखते हो कि रोज–रोज अखबारों में, पत्रिकाओं में, बैनरों में वही छपा है, दुकान में वही बोर्ड लगा है, जहां जाओं वहीं देवी मुस्कराती हुई कह रही हैं कि मेरे सौंदर्य का राज लक्स। और आपको कोई लक्स की फोटो देखने की शौक भी नहीं है, न ही विज्ञापन पढ़ने का शौक है मगर वह जो अर्धनग्न मुस्कराती हुई सुंदरी है वह ध्यान खींच लेती है और जब वही चित्र आंखों से भीतर जाता है, उसी के साथ नीचे लिखा है लक्स वह भी घुस जाता है। आपको लगातार सुझाव दिया जा रहा है विज्ञापनदाताओं के द्वारा लेकिन अब आप चाहो या न चाहो, आप तो सुंदर स्त्री को देखना चाह रहे थे लेकिन उसके नीचे लिखा है मेरे सौंदर्य का राज लक्स!

लक्स शब्द भीतर घुसता जा रहा है और वह सुंदरियां बदलती चली गईं, दो–चार साल बाद कोई दूसरी हिरोइन प्रसिद्ध हो गई और उसका विज्ञापन आने लगा। जो प्रसिद्ध है उसी को पैसा दे दिया लक्स वालों ने कि सिर्फ एक वाक्य आप बोल दीजिए। आप भलीभांति जानते हो कि कोई भी फिल्म अभिनेत्री लक्स से नहीं नहाती होगी, सौ परसेंट गारंटी है इस बात की। वे सब विदेशी साबुनों का इस्तेमाल करती होंगी, भारत में बनी किसी भी साबुनों का इस्तेमाल करती ही नहीं होंगी लक्स की तो छोड़ो। लेकिन आपको अच्छे से पता है कि कई करोड़ रुपए उनको दिए गए होंगे सिर्फ इतना बुलवाने के लिए।

एक सौदा है, व्यवसाय है विज्ञापन का, मॉडल्स का, उनका काम ही ये है। मैंने सुना है एक फिल्म अभिनेत्री से कोई पत्रकार पूछ रहा था कि आप इतनी सुंदर कैसे हैं? उसने कहा कि अभी नहीं बता पाऊंगी, तीन दिन के बाद सोमवार को आना। पत्रकार ने पूछा क्यों, अभी बता दीजिए? उसने कहा नहीं, अभी दो–तीन कंपनियों से बात चल रही है। अब देखो कौन ज्यादा पैसा देता है, वही मेरे सौंदर्य का राज हो जाएगा।

हम सबको पता है यह बात लेकिन वह सुझाव खोपड़ी में घुस रहा है लक्स–लक्स। शुरूआत में तो हमारे कांशस माइण्ड ने इसका विरोध किया लेकिन कांशस माइण्ड की एक सीमा है, वह कब तक विरोध करे, एक लिमिट होती है। तो जब किसी चीज का रिपीटीशन होता है तो उसके लिए सबकांशस के दरवाजे खुल जाते हैं और वही चीज हमारे अनकांसशस में घुस जाती है। फिर आप दुकान में जाते हैं और दुकानदार पूछता है कि कौन की साबुन, आप कहते हैं लक्स।

आप सोच रहे हैं कि आप काफी चिंतन–मनन वाले व्यक्ति हैं और काफी रिसर्च करके पता लगाया है कि कौन सी साबुन श्रेष्ठ है और आप लक्स खरीद लाए। वह विज्ञापनदाताओं ने आपसे खरीदवा दिया, वह सजेशन घुसता गया, घुसता गया। रिपीटीशन से सजेशन भीतर घुसता है। यहां आप देख रहे हैं न सम्मोहन के सत्र में मैं एक ही बात को बार–बार रिपीट करते हैं।

शुरुआत में आपका मन कहेगा कि ये कैसे हो सकता है, ये नहीं होने वाला लेकिन हम फिर भी कहे जा रहे हैं, दूसरे ढंग से फिर–फिर वही बात कहे जा रहे हैं। बीच में आपको कुछ सुंदर कल्पनाएं दी, आपको हमारी बात पर इतना भरोसा नहीं था लेकिन उस सुंदर कल्पना में आप उलझ गए कि पगडंडी में जा रहे हैं, नदी में धारा बह रही है और पंछी बोल रहे हैं, सामने जलप्रपात है और बीच में हमने अपनी बात घुसा दी।

विज्ञापनदाता जो कर रहे हैं उनका टारगेट अलग है, हम यहां जो कर रहे हैं वह आपके हित में है, आपके पक्ष में है, वैसा आप खुद चाहते हैं, आपके ही मन की बात आपके सबकॉन्शस तक पहुंचानी है, उसकी विधि आपको सिखा रहे हैं। थोड़े दिन कॉन्शस माइण्ड मना करेगा कि नहीं, ये नहीं होने वाला, अरे ये कैसे होगा लेकिन तुम उसकी चिंता ही नहीं करना, तुम अपनी बात कहते ही जाना।

रोज रात को सोते समय जब नींद लगने लगे, क्योंकि नींद में हमारा कॉन्शस माइण्ड

रिलैक्स होना चाह रहा है, दिन भर का थका-मांदा है, जब ये तार्किक मन थक गया तब आप एक नई बात कहना शुरू करो और पिक्चोरियल होनी चाहिए। समझो एक मोटा व्यक्ति है जो कि अपने सुंदर और सुडोल शरीर की कल्पना कर रहा है। वजन की मशीन पर खड़ा होकर देख रहा है कि अरे, वजन का कांटा जितना वह चाह रहा था उतना ही बता रहा है, इसको वह चित्रात्मक रूप से देख रहा है और देखते-देखते सो गया।

अगर यही चित्र रोज-रोज भीतर घुसाया जाएगा तो शुरूआत में तो आपका मन काफी विरोध करेगा लेकिन आप भी जमे रहना, लगे रहो मुन्ना भाई। कॉन्शस माइण्ड बहुत जल्दी थक जाता है और याद रखना, जब रात की नींद आ रही है तो ऑलरेडी थक चुका है, अब वह विश्राम में जाना चाह रहा है और आपका सबकांशस माइण्ड जो सपने देखने वाला मन है अब वह हावी रहेगा, और ये मन पिक्चोरियल, सपने देखने वाला मन है। जो भी कहना चाहते हो इसको चित्रात्मक भाषा में समझा दो और इसके भीतर वह बात प्रविष्ट हो जाएगी।

धन्यवाद। शुभरात्रि।

10

शिष्यत्व कैसे सीखें?

प्रथम प्रश्न– शिष्यत्व कैसे सीखा जाता है, गुरु से तो मन बचना चाहता है, क्या करें?

शिष्यत्व प्रेम जैसा है। प्रेम का भी बड़ा रूप। जब साधारण प्रेम भी सीखा नहीं जा सकता, होता है तो होता है, नहीं होता है तो नहीं होता है, जोर–जबरदस्ती से कोशिश नहीं की जा सकती। कोई तुम्हें ऑर्डर दे दे कि जाओ फलांने व्यक्ति को प्रेम करो वरना मैं तुम्हें गोली मार दूंगा, आप क्या करोगे? जरूर जाओगे जान बचाने के लिए लेकिन आप जो करोगे और जो कहोगे वह प्रेम होगा या मात्र अभिनय? प्रेम कैसे पैदा हो सकता है। ऐसी कोई विधि आज तक नहीं खोजी गई और बहुत अच्छा है, नहीं तो प्रेम भी टेक्नोलॉजी का हिस्सा हो जाता अगर उसकी भी कोई विधि होती तो।

उसके भी इंजेक्शन आ गए होते कि एक इंजेक्शन लगा दो और प्रेमपूर्ण हो जाओ। अच्छा है ऐसा नहीं हुआ और न हीं हो सकेगा भविष्य में। अगर ऐसा हो गया तो वह दुर्भाग्य का दिन होगा। प्रेम हवा की भांति है, खिड़की से झोंका आया ताजी हवा का तो आया, नहीं आया तो नहीं आया। ये पंखे की बटन जैसा नहीं है हमारे हाथ में कि जब मर्जी आई चला लो और जब मर्जी हो तो बंद कर दो। ये तो हवा का झोंका है। यही उसकी महिमा है।

तो जब साधारण प्रेम पर भी हमारा वश नहीं है और मैं क्यों कह रहा हूं सौभाग्य कि हमारा वश नहीं है, अगर हमारा वश होता तो वह बात भी अहंकार के आधिपत्य में आ जाती। वह जो हमारा घमण्ड है जो कहता है कि मैंने ये किया, मैंने वह किया, मैं ऐसा कर सकता हूं, मैं वैसा कर सकता हूं वह बिल्कुल ही पागल हो जाता, वह कहता कि मैं प्रेम भी कर सकता हूं।

अभी वह ऐसा नहीं कह सकता है, अभी उसके वश में प्रेम नहीं है। होगा तो होगा, नहीं होगा तो नहीं होगा, कुछ नहीं किया जा सकता।

शिष्यत्व का भाव, श्रद्धा का भाव, प्रेम का और विराट रूप है। भक्तिभाव उससे भी और ऊपर, अत्यंत सूक्ष्म, प्रेम का शुद्धतम रूप है। ये तो हमारे बिल्कुल वश के बाहर हैं। तो क्या फिर हम कुछ भी नहीं कर सकते? थोड़ी सी चीजें आप कर सकते हैं, वह करना नकारात्मक ढंग का करना होगा। इस अहंकार की चट्टान को हटा दें, उस खिड़की को खोलकर कम से कम बैठ जाएं जहां से हवा का झोंका आ सकता है। हवा का झोंका हम नहीं ला सकते लेकिन अगर हमने खिड़की बंद करके रखी है तब हवा चलेगी, तब भी भीतर ताजी हवा नहीं आ सकती।

तो हम प्रेम को सीधा–सीधा नहीं ला सकते किन्तु हमने प्रेम को रोकने के बहुत उपाय कर रखे हैं। अगर हम अपने उपाय जारी रखे तो प्रेम कभी नहीं घट पाएगा। अधिकांश लोगों के जीवन में यही दुर्भाग्य हुआ है। उनकी खिड़कियां ही बंद हैं। सूरज उग भी आएगा तो भी हमारे घर में रोशनी नहीं होगी क्योंकि हमने खिड़की, दरवाजे सब बंद कर रखे हैं और मोटे–मोटे परदे भी लटका रखे हैं और कह रहे हैं कि हद हो गई, सूरज को कैसे उगाएं? सूरज को तो हम नहीं उगा सकते, सूरज तो अपने आप उगता है लेकिन इस बात को सुनकर निराश मत हो जाना।

खिड़की, दरवाजे हम खोल सकते हैं, परदा हम हटा सकते हैं और हम उठकर हाथ–मुंह धोकर, चाय पीकर इंतजार कर सकते हैं, इतना तो हम कर सकते हैं, सुबह तो अपने आप होगी। सूरज उगाने पर हमारा वश नहीं है। लेकिन कहीं ऐसा न हो कि सूरज उग भी जाए और आप खर्राटे भरते रहें। कुछ हम कर सकते हैं, हम प्रतीक्षा कर सकते हैं बैठकर। प्रेम की प्रतीक्षा की जा सकती है अपने हृदय के द्वार–दरवाजे खोलकर ताकि वह जब घटने लगे तो घट ही जाए।

ठीक यही बात मैं कहूंगा श्रद्धा के बारे में, भक्ति के बारे में, शिष्यत्व के बारे में। आपको जहां भी खबर मिलती है कि कहीं से कुछ सीखने को मिल सकता है वहां जाएं, हृदय खोलकर उसे ग्रहण करें। कहीं न कहीं बात जरूर बन जाएगी। कोई गारंटी नहीं दे सकता कि ऐसा कहां होगा, कब होगा कि किसके संगत में होगा ये तो पहले से कोई नहीं जानता लेकिन अगर आप खोजबीन कर रहे हैं, आप तलाश में हैं तो कहीं न कहीं अचानक कुछ हृदय में क्लिक हो जाएगा।

किसी के संग आप पाएंगे कि बड़ी ट्यूनिंग में हैं, बस, फिर वहीं ठहर जाना, वहीं रुक जाना। जहां आपके भीतर से अपने आप शिष्यत्व का भाव आने लगे, किसी को आप गुरु की भांति देखने लगो वहीं आप रुक जाना, फिर यहां–वहां भटकने की जरूरत नहीं। जब तक ऐसा न हो तब तक कई द्वार खटखटाने होंगे। देयर इज नो शॉर्टकट। कई लोग पूछते हैं कि गरु की क्या पहचान है बता दें ताकि हम सीधे सद्गरु को पहचान लें? ऐसा संभव नहीं है।

अब कोई युवक कहने लगे कि असली प्रेमिका कौन होती है, बस उसके गुण बता

दीजिए ताकि यहां–वहां फालतू समय न जाए? मुल्ला नसीरुद्दीन की इक्कीसवीं वर्षगांठ थी, वह पहुंच गया पुलिस थाने। और थानेदार से उसने कहा कि बताइए मेरी प्रेमिका कहां है? थानेदार ने कहा कि अगर वह खो गई है तो उसका हुलिया बताइए और रिपोर्ट लिखवाइए तब खोजें हम उसको कि कहां है आपकी प्रेमिका। नसीरुद्दीन ने कहा कि मुझे खुद ही नहीं पता, मैं नहीं जानता कि कौन है प्रेमिका तो हुलिया कहां से बताऊंगा। उसका रंग–रूप, पता–ठिकाना कुछ नहीं पता, आप थानेदार हैं इसलिए आपको तो सब पता होगा, आप बताइए कौन है मेरी प्रेमिका मुझे जाकर उसको प्रेम करना है, अब मैं प्रेम करने के योग्य हो गया हूं, अब मेरी विवाह की उम्र आ गई है।

कोई प्रेमिका रेडीमेड थोड़ी होती है कि गूगल सर्च में डाल दिया कि कौन है एक–दूजे के लिए बने, अब गूगल बताएगा तो पगला जाओगे। नहीं, ऐसे प्रेमिका नहीं मिलती, न थानेदार से पूछने पर मिलती न ही गूगल सर्च से मिलती। हां, हम इतना ही कर सकते हैं कि हम एक खुला हृदय लेकर एक्सपोज होते हैं, बहुत लोगों के संपर्क में आते हैं, कहीं अचानक कुछ क्लिक हो जाता है   द्वितरफा। ये कब होगा, कहां होगा, कैसे होगा ये कोई नहीं जानता। अज्ञात, और यही मजा है जिंदगी में।

चीजें अज्ञात हैं, अनप्रेडिक्टेबल हैं अगर ये सारी चीजें प्रेडिक्टेबल हो जाएं तो जिंदगी का सारा मजा ही किरकिरा हो जाएगा। ज्योतिषी पहले ही बता दे कि आपकी प्रेमिका फलांने गांव में, फलां घर में है, इस अक्षर से उसका नाम शुरू होता है, इतनी उसकी ऊंचाई है और चार गुंडों को लेकर गए और उठा लाए। फिर ये प्रेम नहीं होगा, ये तो दुष्टता होगी, हिंसा होगी। नहीं, आप बस खुले हृदय से तत्पर हैं, आप प्रेम के लिए तत्पर हैं बस, कहीं न कहीं बात बन जाएगी।

लेकिन अगर आपने अपना हृदय नहीं खोला, आप तत्पर नहीं हैं, आप एक्सपोज होने को तैयार नहीं हैं तो कभी भी बात नहीं बनेगी। आप अहंकारी हैं, घमंडी हैं, अकड़े हुए हैं तो आपके द्वार–दरवाजे बंद हो गए। हो सकता है आपकी सोलमेट आपके बिल्कुल नजदीक से गुजर जाए और आपको पता भी न चले। आप बिल्कुल अंधे हैं, आपको पता ही नहीं चलेगा।

ठीक ऐसे ही गुरु की खोज है, शिष्यत्व की तलाश है। अपने आपको एक्सपोज करते रहना, जहां भी थोड़ी–बहुत संभावना नजर आती है वहां जाना और बिना किसी विरोध के खुले हृदय से, सहानुभूतिपूर्वक वहां जो चल रहा है उसमें तल्लीन होना, लवलीन होना यह एक प्रयोग है। इस प्रयोग के पश्चात ही दस–पंद्रह दिन गुजार कर फिर समझ में आएगा कि इस सानिध्य में मेरी कुछ बात बनी कि नहीं बनी। अगर बनी बात है तो वहां ठहरना, आगे और–और जुड़ना। अगर नहीं बनी धन्यवाद देकर विदा हो जाना, किसी प्रकार के विरोध की जरूरत नहीं है।

किसी लड़की से किसी युवक का प्रेम नहीं हुआ तो ऐसा थोड़ी है कि वह लड़की गलत है? नहीं, वह किसी और के लिए सही होगी। ये लड़का उस लड़की के लिए नहीं जमा तो इसका ये निष्कर्श थोड़ी है कि यह लड़का ठीक नहीं है। दूसरे पर लेबल मत लगाना, बस

इतना ही कहना कि मुझे नहीं जमा। हो सकता है किसी के लिए वह बहुत जमें। हम इसी संदर्भ में भूल करते हैं, जब हम किसी गुरु की तलाश में जाते हैं तो अगर हमें नहीं जमा तो हम उस गुरू पर नाराजगी प्रगट करते हैं और कहते हैं कि ये गुरु ठीक गुरु नहीं है।

यहां हमारा निष्कर्ष गलत है। बस इतना ही कहो कि हमारी ट्यूनिंग ठीक नहीं बैठी बस। तथ्य इतना ही है कि हमारी ट्यूनिंग नहीं बैठी, धन्यवाद दो, नमस्कार करो और विदा हो जाओ। यहां लौटकर आने की दुबारा जरूरत नहीं है। लेकिन प्रयोग करके ही पता चलेगा। अगर कोई व्यक्ति पहले से ही अकड़ा हुआ हो, अहंकार से भरा हुआ हो, अपने ठोस सिद्धांतों से भरा हुआ पहुंचा है, विरोध भाव लेकर परीक्षक के रूप में एक्जामिनर बनकर तो फिर बात कभी भी नहीं बन पाएगी। इसके हृदय की खिड़की बिल्कुल बंद है। ये किसी तरंग को अपने भीतर प्रवेश करने ही नहीं देगा।

ऐसे प्रश्न हैं मेरे पास दो–चार उनको नहीं ले रहा हूं। जिनके द्वार–दरवाजे बिल्कुल बंद हैं उनकी मौज, रखें बंद। जबरदस्ती द्वार–दरवाजे नहीं खोले जा सकते। वह काम आपको ही करना होगा, सूरज आपका दरवाजा नहीं खोलेगा, सूरज आकर आपको झकझोरकर नहीं उठाएगा और उसकी बड़ी कृपा है कि ऐसा नहीं करता वरना हम जलकर खाक हो जाते। सूरज रोज निकलता रहेगा, आप देखो या न देखो, अंधेरे में रहो कि सोए रहो, सूरज अपना काम करता रहेगा। वह प्रतीक्षा कर रहा है कि कब आप सुबह उठोगे, द्वार–दरवाजे खोलोगे और भोर का आनंद लोगे लेकिन कोई जबरदस्ती नहीं है उसकी तरफ से।

आपको जब विवेक पैदा हो जाए तभी ठीक, नहीं हो तो कोई बात नहीं। अस्तित्व कभी जोर–जबरदस्ती नहीं करता। खूबसूरत चांदनी रात है, तारे झिलमिला रहे हैं, आपकी मर्जी है कि नजर उठाकर देख सकते हो, प्रसन्न हो सकते हो, आपके भीतर से कोई गीत फूट आएगा आपकी मर्जी। लेकिन अगर आप ऐसा नहीं करोगे और 99 परसेंट लोग ऐसा नहीं कर रहे हैं, चांद, तारे, रात का सुंदर आकाश जबरदस्ती आकर उनकी गर्दन ऊपर नहीं मोड़ेगा कि नालायक कहां जा रहे हो, ऊपर देखो, ऐसा कभी नहीं होगा। चांद निकलता रहेगा, डूबता रहेगा, तारे झिलमिलाते रहेंगे, विदा होते रहेंगे, कोई भी कभी जबरदस्ती नहीं करेगा और 99 परसेंट लोगों को कभी भी कुछ भी पता नहीं चलेगा उनके बारे में कि कितनी खूबसूरती बरस रही थी लेकिन कोई जबरदस्ती नहीं है।

तुम अगर एक्सपोज होओगे, तुम अगर रिसेप्टिव बनोगे तो बहुत कुछ आ सकता है, तुम पर निर्भर है। तो यही बात प्रेम के संबंध में लागू होती है। प्रेम का उदाहरण इसलिए दे रहा हूं कि इसका आपको कुछ न कुछ अनुभव जरूर है। बहुत न सही तो कम सही लेकिन कुछ तो अनुभव प्रेम का जरूर है सबको। अब आप तुलना कर सकते हैं कि शिष्यत्व का जन्म भी ऐसे ही होता है, भक्त का जन्म भी ऐसे ही होता है। इसी का थोड़ा और बड़ा रूप।

द्वितीय प्रश्न– ध्यान के समय नींद क्यों आती है? क्या यह हकीकत में ही नींद है या ध्यान का रूप है?

ये सवाल थोड़ा कठिन है क्योंकि नींद–नींद में बड़ा भेद है। कई प्रकार की नींदें संभव हैं। जब हम एक शब्द का उपयोग करते हैं नींद तो हम उसकी भिन्न–भिन्न कोटियों का ख्याल नहीं रखते, सबको हम एक ही कैटेगरी में रखकर सोच लेते हैं। जबकि सच्चाई ऐसी नहीं है। ये जो हिप्नोटिक ट्रांस अवस्था है ये भी एक नींद जैसी अवस्था है। लेकिन इसमें हम पूरे बेहोश नहीं हैं, भीतर हमारा पूरा होश है। संगीत सुनाई दे रहा है, सुझाव सुनाई दे रहे हैं, सबकुछ पता चल रहा है जो आसपास हो रहा है बस फर्क इतना है कि कोई चीज बाधा जैसी नहीं लग रही।

ये जो ट्रांस स्टेट है हिप्नोसिस की ध्वनियां सुनाई दे रही हैं, सड़क पर कुत्ता भौंका कि कार का हार्न बजा वह पता चला क्योंकि हम बेहोश नहीं हैं लेकिन फर्क ये हो गया कि कुत्ते के भौंकने से या हार्न के बजने से हमको डिस्टर्बेंस नहीं हो रहा हम इतने रिलैक्स हैं। इसको ठीक–ठीक नींद नहीं कह सकते क्योंकि नींद में कुत्ते का भौंकना तो पता नहीं चलता, सुझाव नहीं सुनाई देते तो आप भीतर जागे हुए हैं इसलिए इसको नींद तो नहीं कह सकते फिर भी नींद जैसी अवस्था कह सकते हैं। आमंत्रित निद्रा, तंद्रा वर्ड का भी उपयोग कर सकते हैं।

दिन में कम से कम बीस पच्चीस अवसर हर व्यक्ति की जिंदगी में ऐसे आते हैं कि कुछ मिनट के लिए वह दिवास्वप्न में होता है, खुली आंखों से भी। अवचेतन मन लगातार फंक्शन करता है विदाउट एनी रेस्ट। ऐसा नहीं है कि वह सिर्फ रात को ही सपने देखता है, वह दिन में भी चलता रहता है और ऊपर–ऊपर चेतन मन आच्छादित है इसलिए हमें भीतर की उस एक्टीविटी का पता नहीं चलता लेकिन वह लगातार सक्रिय है। हां, चेतन मन दिन भर में थक जाता है इसलिए रात को सो जाता है और विश्राम करता है।

अवचेतन मन लगातार काम करता रहता है। अब तो मेडिकल साइंस ने उपकरण बना लिए हैं जांचने परखने के, नींद में भी ई.ई.जी. मशीन के द्वारा जांच–पड़ताल की जा सकती है कि मस्तिष्क में क्या चल रहा। एक सेकेण्ड भी ऐसा नहीं होता जब मस्तिष्क काम नहीं कर रहा हो। अवचेतन मन लगातार काम कर रहा है, दिन में भी काम कर रहा है। दिन में दो परत हो गईं, ऊपर–ऊपर चेतन मन काम कर रहा है और नीचे अवचेतन वह जो सपना देखने की प्रक्रिया है वह लगातार चल ही रही है, बंद नहीं हुई है।

अभी आप मुझे सुन रहे हैं, आपका चेतन मन मुझे सुनने में तल्लीन है, अगर आप अब भी गौर से देखें तो एक और प्रोसेस चल रही होगी, कुछ और भी चल रहा है इसके अलावा। मैं दस सेकेण्ड को रुक जाता हूं आप गौर करिए, आंख बंद कर लीजिए, जब आप बहुत सजग होकर देखने की कोशिश करेंगे तब आप सुपरकॉन्शसनेस में चले जाते हैं, अन्यथा हमेशा आप पाएंगे कि अवचेतन मन काम कर रहा है। जैसे अभी मैंने कहा और आप बड़े गौर से निरीक्षण करने लगे तो आपकी स्थिति चेंज हो गई, सबकॉन्शस से सुपरकॉन्शसनेस में, कम से कम आधे लोगों की हो गई होगी।

कभी भी आप देखेंगे तो पाएंगे कि सबकॉन्शस माइण्ड काम कर ही रहा है, एक स्वप्निल प्रक्रिया लगातार मौजूद है। और दिन में बीस–पच्चीस बार ऐसा होता है कि चेतन

मन हमारा थक जाता है काम करते–करते और तब दिवास्वप्न ज्यादा प्रगाढ़ हो जाता है कुछ सेकेण्ड के लिए, कुछ मिनट के लिए। कई बार सड़कों पर एक्सीडेंट दिवास्वप्न के द्वारा ही होते हैं। दिख रहा है कि ड्राइवर आंख खोले हुए गाड़ी चला रहा है लेकिन हमको पता नहीं है कि खुली आंखों से वह अभी कुछ और देखने लगा है।

ड्राइविंग करते–करते उसका चेतन मन थक गया, बोर हो गया, वह थोड़ी देर के लिए विश्राम कर रहा है और उस आराम की अवस्था में भीतर का स्वप्न बहुत प्रखर हो गया। अब वह खुली आंख से भी इस समय स्वप्न की अवस्था में पहुंच गया है, अब दुर्घटना होनी मुमकिन है। सामने की चीजें उसको नहीं दिखाई दे रही हैं, उसे अपना कल्पना लोक दिखाई दे रहा है। कोई स्मृति, कोई योजना, आगे की बात, कुछ और ही चित्र चलने लगा। अब वह चित्र लगातार चल रहे हैं।

आपने पूछा है कि नींद क्यों आती है? कई प्रकार की नींदें संभव हैं। ध्यान की एक अवस्था ऐसी भी है कि जब आप सुपरकॉन्शस में होते हैं और कई बार भ्रम पैदा होता है कि क्या मैं नींद में हूं। लेकिन उसमें एक फर्क है, उसमें कोई स्वप्न नहीं होता, उस समय आप खूब सजग होते हैं। कई बार वह सजगता इतनी घनी हो जाती है कि आप बिल्कुल विचारशून्य अवस्था में पहुंच जाते हैं और शून्यता को ही हम नींद समझ लेते हैं।

अगर हमारी चेतना पूरी तरह से अंतर्मुखी हो जाए, इंद्रियों से जो बाहर प्रवाह हो रहा था वह थोड़ी देर के लिए बंद हो जाए तब हम ध्यानस्थ हुए, आत्मरमण की अवस्था में पहुंचे किन्तु इन क्षणों में हमें बाहर के जगत का एहसास नहीं होगा क्योंकि बाहर के जगत के ज्ञान के लिए जरूरी है कि हमारी चेतना इंद्रियों की खिड़कियों से बाहर झांके। अगर हमारी चेतना अंतर्यात्रा करके भीतर अपने आप में सिमट गई तो हमारी इंद्रियों की खिड़कियां खुले होते हुए भी काम नहीं कर रही हैं और इसलिए हमें बाहर की कोई सूचना प्राप्त नहीं होगी और इस अवस्था से बाहर लौटकर हमें शक पैदा होगा कि मैं कहीं सो तो नहीं गया था।

क्योंकि इस बीच में क्या हुआ मुझे कुछ पता ही नहीं, यह वास्तव में नींद नहीं थी, यह ध्यान था। लेकिन ध्यान हमारे लिए नई चीज है अपरिचित, नींद हमारे लिए परिचित चीज है। जब हमें किसी चीज का पता नहीं चलता तो उसको हम कहते हैं नींद। नींद में आपको मच्छर काट गया लेकिन पता नहीं चला, इस आत्मरमण की अवस्था में यही हो सकता है। आप उस समय अपने शरीर में नहीं हैं, चेतना में स्थिर हैं, आपको पता ही नहीं चला कि मच्छर ने काटा, बाद में आपने देखा कि अरे यहां पर निशान पड़ा है। तब आपको शक पैदा होगा कि क्या मैं सो गया था? किन्तु यह वास्तव में नींद नहीं थी, यह गहन जागरण था।

महर्षि पतंजलि ने अपने योगशास्त्र में वर्णन किया है कि समाधि और सुषुप्ति कई मामले में समान हैं। सुषुप्ति यानि ड्रीमलेस स्लीप और समाधि यानि सुपरकांशसनेस, दोनों में बड़ा भेद है लेकिन काफी कुछ समानता भी है और भ्रांति पैदा होती है। ओशो का प्रवचन सुनते–सुनते एक हिप्नोटिक ट्रांस की अवस्था पैदा हो जाती है, उनकी मधुर वाणी, उनके सम्मोहक शब्द और हम इतने प्रेमभाव से सुनने को आतुर, हृदय खोलकर ग्रहण करने को

तैयार, एक अद्भुत सम्मोहक अवस्था बनती है।

बीच में एक समय ऐसा आता है कि यह भी पता नहीं चलता कि ओशो क्या कह रहे हैं। शब्दों के अर्थ खो जाते हैं, सुनाई पड़ रही है आवाज लेकिन हमारे भीतर वह जो इंटेलेक्चुअल हिस्सा था वह शांत हो गया, फीलिंग वाला हिस्सा जाग गया, हम श्रद्धाभाव से सुन रहे हैं, हम कोई वाद–विवाद करने के लिए, तर्क करने के लिए नहीं सुन रहे हैं। वह विपरीत विचार भीतर नहीं चल रहे हैं।

एक विरोधी आदमी सुनेगा तो वह दूसरे ढंग से सुनेगा, सच पूछो तो वह सुनता ही नहीं, उसके भीतर विपरीत विचार चलते रहते हैं। जो भी बात कही जा रही होती है उसको वह मन ही मन में काटता रहता है कि ये गलत, ये गलत, ऐसा नहीं हो सकता, ये तो गलत कह रहे हैं। उसका इंटेलेक्चुअल हिस्सा सक्रिय रहता है, रिलैक्स नहीं होता। जब कोई श्रद्धाभाव से अपने सद्गुरू के वचन सुनेगा उसके भीतर अद्भुत शांति छा जाएगी।

कुछ समय ऐसा आएगा कि केवल आवाज ही सुनाई पड़ रही है और अर्थ खो गए। और गहरी डुबकी लग जाएगी, आवाज भी सुनाई पड़नी बंद हो जाएगी। अब आप अपने आप में ही डूब गए, जो ओशो का उद्देष्य था वह पूरा हो गया, अचानक जब प्रवचन समाप्त होगा और ओशो कहेंगे कि आज इतना ही तब अचानक होश वापस लौटेगा। इसका मतलब कहीं हमारा तार जुड़ा हुआ था, अन्यथा उनके कहते ही आज इतना ही हम कैसे नींद के बाहर आ गए।

अगर ये वास्तव में ही नींद थी तब तो यह टूट नहीं सकती थी। ये कुछ और था। लौटकर हमको खुद ही शक होगा कि इस बीच में आधा घंटा क्या कहा ओशो ने हमको खुद ही नहीं पता। शुरूआत का हमको पता है जब हमने सुनना शुरू किया था उस समय का याद है कि ओशो ने क्या–क्या कहा था। फिर बीच में आधा घंटे का गायब ही हो गया, कुछ भी नहीं पता कि क्या कहा और फिर आखिरी वचन फिर पता है अंतिम का इसलिए इसको साधारण नींद नहीं कहा जा सकता। यह बहुत खूबसूरत ध्यान की अवस्था है।

अगर यह सचमुच में नींद होती तो फिर ओशो का प्रवचन समाप्त होते ही अचानक टूट नहीं जाती, अगर आप नींद में गए होते तो फिर नींद चलती ही जाती, उसका प्रवचन से कोई संबंध नहीं रह जाता। लेकिन प्रवचन से संबंध आपका जुड़ा हुआ था, लगातार जुड़ा हुआ था, बहुत गहराई में कहीं वाणी प्रवेश कर रही थी जहां शब्दों के अर्थ भी नहीं होते वहां से धागा जुड़ा हुआ था। इसको साधारण नींद नहीं कहा जा सकता। तो नींद–नींद में बड़े भेद हैं।

अब तो वैज्ञानिक शब्दावली में भी ई.ई.जी. में जो बेव्स बनते हैं उनको चार हिस्सों में बांटते हैं। नार्मली जागरण की अवस्था में जो तरंगे मस्तिष्क की बनती हैं ग्राफ में उनको बीटा वेव्स कहते हैं। ध्यान की अवस्था में, सम्मोहन की अवस्था में, तल्लीनता की अवस्था में, जब आप किसी चीज में पूरी तरह से लीन होते हैं, आनंदित होते हैं तब अल्फा वेव्स बनती हैं। कोई पेंटर जब पेंटिंग बना रहा है या कोई कवि कविता लिख रहा है उस समय वह पूरी दुनिया को भूलकर कविता में लवलीन है।

हो सकता है किसी गणितज्ञ को बड़ा रस आता हो गणित में और जब वह कोई समस्या हल कर रहा है तब वह सारी दुनिया भूल गया। इस समय उसके ब्रेन में जो वेव्स बन रहीं हैं वे अल्फा वेव्स हैं। ठीक वहीं वेव्स हिप्नोसिस में भी बनतीं हैं और वहीं वेव्स ध्यान में भी बनतीं हैं। अब तो वैज्ञानिक उपायों से भी जांच–परख की जा सकती है। तो नींद–नींद सब एक सी नींद नहीं हैं और जिसको हम साधारण नींद कहते हैं उसमें भी परत दर परत गहराइयां हैं।

आप खुद भी कभी–कभी कहते हैं कि आज उथली नींद आई, इसका मतलब कभी आप कहते हैं कि आज बड़ी गहरी नींद आई। थीं तो दोनों नींद लेकिन कहीं भेद उसमें पड़ गया और आपको पता भी है। कभी आप कहते हैं उथली नींद आई और कभी आप कहते हैं कि गहरी नींद आई, कभी आप कहते हैं कि आज तो बहुत ही गहरी नींद आई। तो हमारे साधारण अनुभव में भी यह बात हमको पता है कि सारी नींदें एक जैसी नींद नहीं हैं, बड़े भेद हैं उनमें। हमारे सपने–सपने में भी बड़े भेद हैं, सब सपनों को एक कैटेगरी में नहीं रखना, कई प्रकार के सपने हैं।

सब झूठ नहीं हैं, सब काल्पनिक भी नहीं हैं। करीब–करीब दो–तीन प्रतिशत सपने ऐसे हैं जो सच हैं। कुछ अतीत की सच्चाइयां हैं, कुछ वर्तमान की सच्चाइयां हैं, कुछ भविष्य की सच्चाइयां हैं, कुछ सांकेतिक हैं, प्रतीकात्मक हैं। शायद हम डिफरेंशिएट न कर पाएं वह एक अलग बात है लेकिन भविष्य में जैसे–जैसे नींद के बारे में और खोज होती जाएगी मैं समझता हूं आने वाले भविष्य में वैज्ञानिक ऐसे उपकरण बना लेंगे जिनसे जांच–परख हो सके कि कब व्यक्ति सपना देख रहा है झूठा और कब सच्चाई में लवलीन है। उन बातों को पकड़ा जा सकेगा और तब हमारे जीवन को सुनियोजित करना बड़ा आसान हो जाएगा।

अभी जो मनोवैज्ञानिक मनोविश्लेषण करते हैं कुछ हद तक उन्होंने खोजबीन कर ली है लेकिन वह बहुत गहरी बात नहीं है। माना कि सामान्य से काफी ज्यादा जानकारियां उनको मिल गईं लेकिन वह काफी कन्फ्यूजन वाली जानकारियां हैं, अभी उसमें सब एक मत भी नहीं हो पाते, मतभेद हो जाते हैं। सपने का क्या अर्थ करें, उसकी व्याख्या में फर्क पड़ जाता है। अभी और थोड़ा वक्त लगेगा। शायद मनोवैज्ञानिक तो नहीं कर पाएंगे खोजबीन लेकिन अन्य फिजिकल उपायों से और विशेषकर सम्मोहन की विधियों के द्वारा काफी कुछ खोजबीन की जा सकती है।

तो नींद–नींद में भेद है, स्वप्न–स्वप्न में भी बड़े भेद हैं, गहराइयां हैं, उथलेपन हैं। सम्मोहन की अवस्था को भी हम तीन हिस्सों में बांटते हैं। एक सुपरफीशियल ट्रांस, मीडियम ट्रांस और एक डीप सोमनाबुलस्टिक ट्रांस, इनमें भी भेद हैं। सब नींद एक जैसी नहीं हैं, थोड़ा गौर करना, आप खुद थोड़ा परखने की कोशिश करना। वह जो ध्यान वाली स्थिति है उस पर नींद का लेबल नहीं लगाना वरना बड़ा नुकसान हो जाएगा। उसको साधारण मत समझना, उसको तो और–और पाने के लिए उपाय करना।

तृतीय प्रश्न– दुनिया में प्रेम का इतना अकाल क्यों है?

सद्‌गुरु ओशो के अमृत वचन सुनो, आपको उत्तर मिल जाएगा–

'मैं आपको एक सूत्र की बात कहूं: जिस मनुष्य के पास प्रेम है उसकी प्रेम की मांग मिट जाती है। और यह भी मैं आपको कहूं: जिसकी प्रेम की मांग मिट जाती है वही केवल प्रेम को दे सकता है। जो खुद मांग रहा है वह दे नहीं सकता है। इस जगत में केवल वे लोग प्रेम दे सकते हैं जिन्हें आपके प्रेम की कोई अपेक्षा नहीं है, केवल वे ही लोग! महावीर और बुद्ध इस जगत को प्रेम देते हैं। जिनको हम समझ ही नहीं पाते। हम सोचते हैं, वे तो प्रेम से मुक्त हो गए हैं। वे ही केवल प्रेम दे रहे हैं। क्योंकि उनकी मांग बिल्कुल नहीं है। आपसे कुछ भी नहीं मांग रहे हैं, सिर्फ दे रहे हैं।

प्रेम का अर्थ हैः जहां मांग नहीं है और केवल देना है। और जहां मांग है वहां प्रेम नहीं है, वहां सौदा है। जहां मांग है वहां प्रेम बिल्कुल नहीं है, वहां लेन–देन है। और अगर लेन–देन जरा गलत हो जाए तो जिसे हम प्रेम समझते थे वह घृणा में परिणत हो जाएगा। लेन–देन गड़बड़ हो जाए तो मामला टूट जाएगा। ये सारी दुनिया में जो प्रेमी टूट जाते हैं, उसमें और क्या बात है? उसमें कुल इतनी बात है कि लेन–देन गड़बड़ हो जाता है। मतलब हमने जितना चाहा था मिले, उतना नहीं मिला; या जितना हमने सोचा था दिया, उसका ठीक प्रतिफल नहीं मिला। सब लेन–देन टूट जाते हैं।

प्रेम जहां लेन–देन है, वहां बहुत जल्दी घृणा में परिणत हो सकता है, क्योंकि वहां प्रेम है ही नहीं। लेकिन जहां प्रेम केवल देना है, वहां वह शाश्वत है, वहां वह टूटता नहीं। वहां कोई टूटने का प्रश्न नहीं, क्योंकि मांग थी ही नहीं। आपसे कोई अपेक्षा न थी कि आप क्या करेंगे तब मैं प्रेम करूंगा। कोई कंडीशन नहीं थी। प्रेम हमेशा अनकंडीशनल है।

कर्तव्य, उत्तरदायित्व ये सब कंडीशनल हैं। तो मैं आपसे नहीं कहता आप कैसे कर्तव्य निभाएं। जब आपको यह ख्याल ही उठ आया है कि कैसे कर्तव्य निभाएं, तो आप पक्का समझ लें, आपके भीतर कोई प्रेम नहीं है। तो मैं आपसे यह कहूंगा, प्रेम कैसे पैदा हो जाए।

यह भी आपको इस सिलसिले में कह दूं कि प्रेम केवल उस आदमी में होता है जिसको आनंद उपलब्ध हुआ हो। जो दुखी हो, वह प्रेम देता नहीं, प्रेम मांगता है, ताकि दुख उसका मिट जाए। आखिर प्रेम की मांग क्या है? सारे दुखी लोग प्रेम चाहते हैं। वे प्रेम इसलिए चाहते हैं कि वह प्रेम मिल जाएगा तो उनका दुख मिट जाएगा, दुख भूल जाएगा। प्रेम की आकांक्षा भीतर दुख के होने का सबूत है। तो फिर प्रेम वह दे सकेगा जिसके भीतर दुख नहीं है। जिसके भीतर कोई दुख नहीं है, जिसके भीतर केवल आनंद रह गया है, वह आपको प्रेम दे सकेगा।

अब अगर मेरी बात ठीक से समझेंः दुख भीतर हो तो उसका प्रकाशन प्रेम की मांग में होता है और आनंद भीतर हो तो उसका प्रकाशन प्रेम के वितरण में होता है। प्रेम जो है आनंद का प्रकाश है। तो जो आदमी भीतर आनंद से भरेगा उसके जीवन के चारों तरफ प्रेम विकीर्ण हो जाएगा। जो भी उसके निकट आएगा उसे प्रेम उपलब्ध होगा। जो भी उसके करीब होगा उसका कर्तव्य पूरा हो जाएगा, उसका उत्तरदायित्व निभेगा। प्रेम आनंद का प्रकाश है, तो

आनंद आत्मबोध का अनुभव है। आत्मबोध के पूर्व प्रेम संभव नहीं है। हम अपने को नहीं जानते, इसलिए प्रेम मांगते हैं। अगर हम अपने को जानेंगे, आनंद होगा; आनंद होगा तो प्रेम हमसे विकीर्ण होगा।'

अंतिम प्रश्न– कुछ पूछने को नहीं बचा, क्या पूछूं?

बहुत सुंदर हुआ, मन की खुजलाहट मिटी। आओ, मा ओशो प्रिया की मधुर आवाज के संग, इस गीत की धुन पर नाचें, उत्सव मनाएं, फिर यहां से विदा हों।

नाद की, नूर की, बंदगी दे गए, ओशो हंसती हुई ज़िंदगी दे गये
रोशनी को तरसती थी कब से ज़मीं, हम अंधेरे में थे चांदनी दे गये
आदमी को नया आसमां मिल गया, चांद सूरज सितारे सभी दे गये
वो खुदी को मिटा बेखुदी दे गये, छीनकर रंज़ो–गम हर खुशी दे गये
किसे मालूम था हमें क्या चाहिये, जो मुनासिब था हमको वही दे गये
ओशो हंसती बहकती संभलती हुई, इक उमंगों भरी ज़िंदगी दे गये

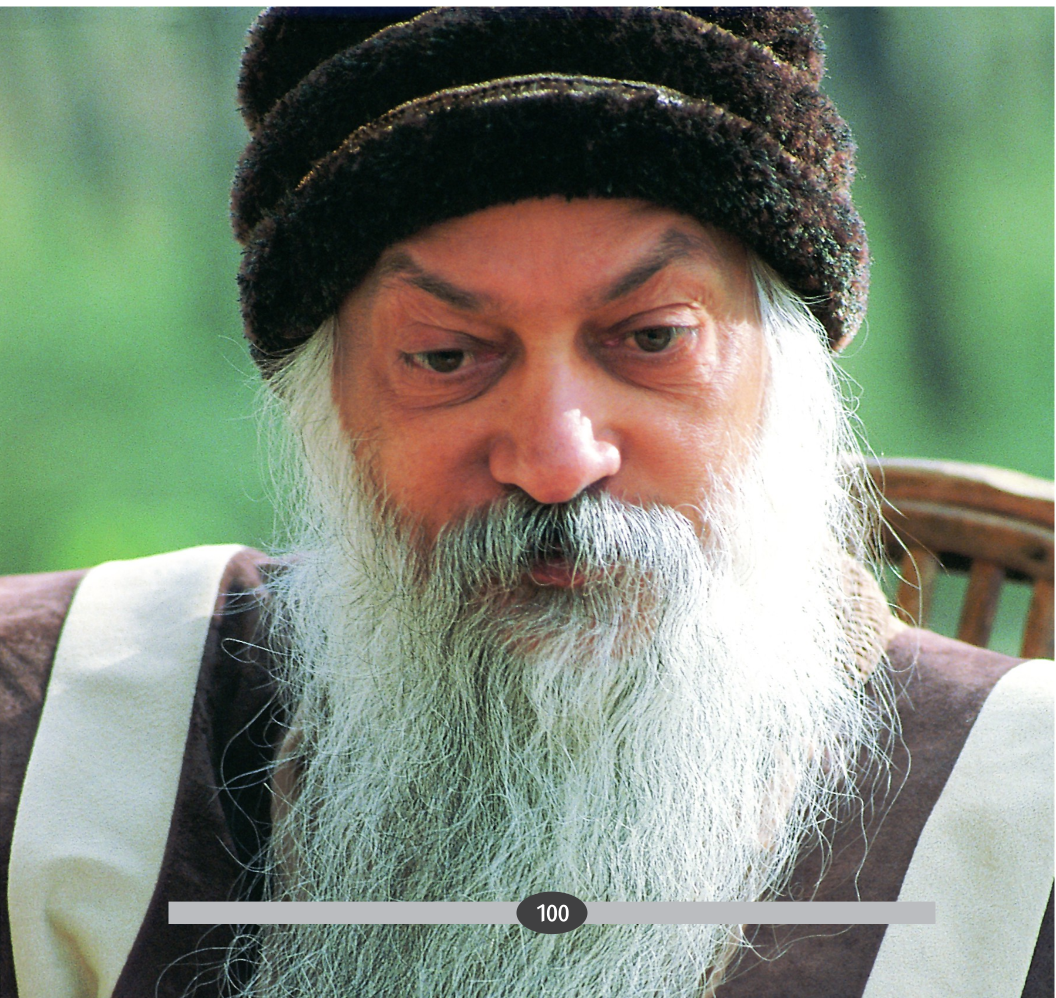

11

संबंधों की मुश्किलें, अध्यात्म का विज्ञान

आज का पहला सवाल है कि क्या अध्यात्म, विशुद्ध रूप से विज्ञान है।

हमारे होने के चार तल हैं– फिजिकल, मेंटल, इमोशनल और स्पिरिचुअल। फिजिकल अर्थात भौतिक शरीर, इसके पीछे छुपा है हमारा मन, जिस चेतन और अवचेतन मन से हम परिचित हो रहे हैं। और भीतर छुपा है उससे भी ज्यादा सूक्ष्म इमोशनल, भावनात्मक आयाम। और सर्वाधिक भीतर बिल्कुल केन्द्र में है हमारी चेतना, स्पिरिचुअल बीइंग। बाहर के फिजिकल शरीर के बारे में तो मेडिकल साइंस बन गई, एनाटॉमी, फिजियोलॉजी का ज्ञान हो गया। मन के बारे में मनोविज्ञान बन गया, साइकोलॉजी।

इमोशन के बारे में मनोवैज्ञानिक स्टडी करते हैं लेकिन अभी तक इस बारे में बहुत गहरी स्टडी नहीं हो पाई है। यह क्षेत्र अभी अछूता ही है। मनोविज्ञान भी लगभग सवा सौ साल पहले ही शुरू हुआ, नई घटना है। मन के थोड़ा और आगे जाएंगे तब जाकर इमोशन वाले क्षेत्र में पहुंच पाएंगे, यह जरा बारीक मामला है। और सर्वाधिक सूक्ष्म है चेतना, जिसके बारे में अभी तक बाहर से स्टडी नहीं की जा सकी है और भविष्य में भी नहीं की जा सकेगी। इसलिए जिसे हम 'अध्यात्म' कहते हैं, जो कि चेतना का विज्ञान है, उसकी ऑब्जेक्टिवली स्टडी संभव नहीं है। इसे केवल हम स्वयं ही जान सकते हैं बस। हर व्यक्ति खुद ही अपनी चेतना को जान सकता है।

तो इस भेद को स्मरण रखिएगा, शरीर के बारे में बाहर से निरीक्षण हो सकता है, एक ऑब्जेक्ट की तरह। दूसरे लोग उसकी जांच–परख कर सकते हैं। मन के बारे में भी बाहर से

निरीक्षण की संभावना है, काफी स्टडी हो चुकी है और भी स्टडी की जा सकती हैं। अब धीरे–धीरे ऐसे उपकरण भी बन गए हैं जो मन की ऐक्टीविटी को रिकार्ड कर सकें। ई.ई.जी. मशीन है जो कि ब्रेन के ऐक्टीविटी को रिकार्ड करती है। सपनों के बारे में काफी प्रयोगशालाएं काम कर रहीं हैं कि सपने क्या हैं, क्यों आते हैं। अवचेतन मन के बारे में बहुत ज्यादा जानकारी हासिल हो गई है और भी जानकारी हासिल हो जाएगी।

इमोशंस के बारे में भविष्य में भी काफी कुछ ज्ञान प्राप्त होने की संभावना है। ये ऑब्जेक्ट हैं, दूसरे को देखकर हम समझ सकते हैं, दूसरे से मिलकर स्टडी कर सकते हैं लेकिन अपनी चेतना को केवल हम ही जान सकते हैं, अन्य कोई नहीं जान सकता। आत्मा किसी के लिए दृष्य नहीं बन सकती, किसी वैज्ञानिक उपकरण के द्वारा इसको नहीं पकड़ा जा सकता। इसलिए अध्यात्म एक निजी विज्ञान है, बिल्कुल पर्सनल।

यह भी विज्ञान है लेकिन यह अन्य विज्ञानों से थोड़ा अलग है। अन्य विज्ञानों में सामूहिक निरीक्षण किया जा सकता है, कई लोग मिलकर ऑब्जर्वेशन कर सकते हैं, अध्यात्म के बारे में ऐसा संभव नहीं है। इसका केवल हम ही निरीक्षण कर सकते हैं कि हमारी चेतना किस ढंग से फंक्शन करती है। इस थोड़े से फर्क के साथ यह भी विज्ञान है। आज तक हम जिसको धर्म कहते रहे हैं, उसका मूल तत्व रहा है 'अध्यात्म' अर्थात 'चेतना का विज्ञान'।

एक व्यक्ति ने पूछा है कि ध्यान में जब मन शांत होने लगता है तो अचानक झटका सा लगता है, ऐसा क्यों होता है?

हमारी चेतना जिन चार आयामों में गति करती है उनको कहा जाता है जागृति, स्वप्न, सुषुप्ति और तुरीय अवस्था। जागृति अर्थात दिनचर्या वाला जागरण, दिन में काम करते हुए जो हम जागे हुए होते हैं। दूसरी अवस्था है, स्वप्न। जहां सबकॉन्शस माइण्ड काम करता है। तीसरी अवस्था है सुषुप्ति, यहां सबकॉन्शस माइण्ड भी सो गया, कॉन्शस माइण्ड भी सो गया। चौथा है ध्यान का आयाम, सुपरकॉन्शसनेस, इसको तुरीय अवस्था भी कहा जाता है। 'तुरीय' का संस्कृत में अर्थ है 'चौथा'।

जिस प्रकार कार में गियर बदलने पर, एक गियर से दूसरे गियर में जाने से झटका लगता है, ठीक इसी प्रकार चेतना के इन चारों गियर्स में कहीं से भी कहीं जाने पर एक हल्का सा झटका लगता है। कई बार आपने छोटे बच्चों को देखा होगा कि सोते–सोते चौंक जाते हैं। हम खुद को ऑब्जर्व तो नहीं कर पाते क्योंकि हम रात को सो रहे होते हैं। होश में भी होते हैं तो हमें उतना पता नहीं चलता है। किन्तु ध्यान में अथवा योगनिद्रा वाली स्थिति या सम्मोहन में जाने में स्पष्ट रूप से पता चलता है क्योंकि हम भीतर से जागे हुए होते हैं, इसलिए गियर बदलने का पता चलता है।

तो इसमें कोई अस्वाभाविक बात नहीं है, ऐसा होना बिल्कुल स्वाभाविक बात है। घबराने की भी बात नहीं है, जो हो रहा है बिल्कुल बढ़िया हो रहा है, उसको स्वीकार करें।

अगला सवाल है कि जब मैं ध्यान में गहरे जाती हूं और मन बिल्कुल रिलैक्स्ड हो जाता है तो गला सूखने लगता है और खराश होती है जबकि नॉर्मल नींद में ऐसी खांसी नहीं आती, इसका क्या कारण है?

नॉर्मल नींद में हमारे गले में जो सलाइवरी ग्लैंडस हैं, थूक बनाने वाली जो ग्रंथियां हैं वह काम करनी बंद कर देती हैं। जब भी हम गहरे रिलैक्सेशन में होते हैं, चाहे वह अवस्था ध्यान की हो, चाहे सम्मोहन की हो अथवा नींद की हो, इन तीनों में थूक बनना बंद हो जाता है इसलिए गला सूखा–सूखा हो जाता है। किन्तु हमें रात को नींद में इसका पता नहीं चलता क्योंकि हम सो रहे होते हैं। फिर सुबह उठकर हमें पता चलता है। छः–सात घंटे तक लार नहीं बनी, थूक नहीं गुटका गया, मुंह से स्मेल आती है। इसलिए सुबह उठकर ब्रश करना पड़ता है।

हमारे मुंह में लगातार थूक बनता रहता है और हर पंद्रह–बीस सेकेण्ड बाद हम थूक गटकते हैं, फ्रेश थूक फिर आ जाता है, हमेशा मुंह की सफाई चलती रहती है। नींद में यह प्रक्रिया बंद हो जाती है। चाहे वह नींद हो, चाहे स्वप्न हो, चाहे हिप्नोसिस हो, चाहे ध्यान हो, इन सबके समय थूक बनना बंद हो जाता है। इसका संबंध रिलैक्सेशन से है। जितने हम नर्वस होते हैं उतना ही ज्यादा थूक बनता है, आपने इस बात पर कभी गौर किया? रिलैक्सेशन का ठीक उल्टा होता है– नर्वसनेस, घबराहट। कोई व्यक्ति कहीं इंटरव्यू देने गया है तब भी भीतर से एक घबराहट होती है, अब वह जल्दी–जल्दी थूक गुटकेगा। उसको देखकर यह समझा जा सकता है कि यह घबरा रहा है।

जो व्यक्ति शांत है उसका थूक गुटकना नॉर्मल ढंग से होगा। अगर अचानक अभी आपको बुलाकर कहा जाए कि माइक पर गाना गाइए तो दो चीजें होंगी, या तो गला सूखने लगेगा या नर्वसनेस की वजह से ज्यादा थूक बनने लगेगा। हां, जिनकी माइक पर गाने की आदत है उनको कुछ नहीं होगा, वे सामान्य रहेंगे। तो ये थूक बनने की प्रक्रिया हमारे रिलैक्सेशन से अथवा टेंशन से संबंधित होती है। और चूंकि ध्यान या हिप्नोसिस की अवस्था में थूक नहीं बनता। और साथ ही ध्यान की अवस्था में हम सजग भी हैं इसलिए हमको इस बात का तुरंत पता चल जाता है कि गला सूख गया या खांसी आ रही है। जब आपको इसके पीछे छिपे विज्ञान का पता चल जाएगा तो फिर ऐसा नहीं होगा, फिर आप इस बात को स्वीकार लेंगे। थोड़ी देर तक तो गला सूखा–सूखा लगेगा, फिर वह खांसी या खराश नहीं आएगी। वह प्राकृतिक रूप से नहीं आ रही है, अगर ऐसा होता तो वह रात को भी आती, ऐसा तो नहीं होता अर्थात् सिर्फ गला सूखने से खांसी नहीं आती। किन्तु जब हम इस बात के प्रति सजग नहीं होते तब लगता है कि कुछ अस्वाभाविक बात हो रही है, फिर हम खराश को ठीक करने की कोशिश करते हैं। अब आपने इस बात को समझ लिया तो खांसी या खराश नहीं आएगी।

अगला प्रश्न है कि मैं एक अच्छा वक्ता बनना चाहता हूं, क्या सम्मोहन इसमें मदद कर सकता है क्योंकि स्वभाव से मैं बहुत डरपोक हूं?

अवश्य, इसमें सम्मोहन कार्य कर सकता है। आप विजुआलाइज करना शुरू करें, चित्र देखें कि आप कहीं खूब भीड़ के सामने खड़े हैं और माइक पर आप जो बोलना चाह रहे हैं बोल रहे हैं। आप कल्पना करें कि आप बहुत अच्छे से बोल पा रहे हैं और लोग ताली बजा रहे हैं, प्रशंसात्मक नजरों से आपकी तरफ देख रहे हैं। आप बोलने के बाद जब हॉल से बाहर निकले वहां लोग आपसे मिल रहे हैं। कोई आटोग्राफ मांग रहे हैं, कोई आपकी तारीफ कर रहा है इसको चित्र रूप में देखें।

एक मेंटल वीडियो फिल्म, धीरे-धीरे ये छवि आपके भीतर बैठती जाएगी। इस प्रयोग को रात को सोते समय करें, सोने के करीब बीस मिनट पहले यही कल्पना करते हुए आप सो जाएं। क्रमशः एक दिन ऐसा आएगा कि इसी प्रकार के स्वप्न आपको आने लगेंगे तब आप समझना कि अब बात बन गई। वह सेल्फ सजेशन नींद में भी प्रवेश कर गया। अब सबकांशस तक बात पहुंच गई। और तब आप पाएंगे कि वह जो भय बैठा हुआ था वह विदा हो गया और यह नई छवि, नई प्रतिमा आपकी उभरकर आ गई। और वास्तव में आप ऐसा करने में सक्षम हो गए।

हमारे भीतर जितने भी प्रकार के भय हैं नेचुरल फियर्स को छोड़कर उन सबको ओवरकम किया जा सकता है। जो नेचुरल फियर्स हैं वह प्रकृति ने हमको सुरक्षा के लिए दिए हैं, उनका होना जरूरी है इसलिए उनको छोड़ दें। बाकी के सारे फियर्स हमारी सोशल कंडीशनिंग से आए हैं। कहीं न कहीं बचपन में हमारे अवचेतन में बातें बैठ गईं, उन डरों को निष्कासित किया जा सकता है अपनी एक पॉजिटिव इमेज अपने भीतर डाल कर।

अगला प्रश्न है, गहरे ध्यान में डूबने पर कभी-कभी अचानक भय लगता है और मैं बाहर आ जाता हूं, इससे कैसे पार होऊं?

ध्यान में जो मिटने का भय लगता है वह इसीलिए लगता है कि हमारा तादात्म्य जो मैंने तीन लेयर्स की बात की थीं- फिजिकल, मेंटल और इमोशनल, उससे है। उसी को हम स्वयं का होना समझते हैं। वह जो चौथा हमारा सेंटर है स्पिरिचुअल बीइंग, कॉन्शसनेस, उसका हमें एहसास नहीं है। तो जब हम इन तीनों परिधि से खिसककर सेंटर में पहुंचने लगते हैं तो हमें लगता है कि हम मिटे।

समझो कोई आदमी अपने आपको समझ रहा हो कि मैं कपड़ा हूं और लंबे समय तक वह इसी को समझने लगे कि यही मैं हूं। तो जब वह कपड़े को उतारे तो घबड़ा जाए कि मैं मरा, अब हम इसको क्या कहेंगे? कहेंगे ये उसकी भ्रांति है, वह मरा नहीं, केवल वस्त्रों से दूर खिसक रहा है। पहले वस्त्रों के भीतर था और अब वस्त्रों से बाहर जा रहा है, मर थोड़े ही रहा है? लेकिन जो व्यक्ति सालों-साल, जन्मों-जनम ऐसा समझता रहा हो कि मैं वस्त्र ही हूं वह

तो बिल्कुल घबड़ा जाएगा। ठीक ऐसा ही ध्यान में होता है, हमने शरीर को, मन को, विचारों को, भावनाओं को ऊपर से धारण किया है, ये वस्त्र से अधिक नहीं हैं।

जब हम अपने भीतर की चेतना के प्रति सजग होते हैं तो हम कपड़ों की इन पर्तों से दूर खिसकते हैं। इसमें घबराने की कोई बात नहीं है। लेकिन ऐसा लगना बिल्कुल स्वाभाविक है कि जैसे मैं मिटा, मैं मरा। एक नया आइडेंटीफिकेशन बनाएं कि वह चैतन्य ही वास्तविक मैं हूं। चैतन्य ही आत्मा है इस भाव को गहराएं, दोहराएं तब आप पाएंगे कि आपको बहुत आनंद आने लगा। जिस ध्यान में डूबने से आपको भय लग रहा था वही घटना परमानंददायक हो गई। लेकिन हम अपनी बाहर की चीजों से तादात्म बना लिए हैं।

मुझे मुल्ला नसीरुद्दीन की एक कहानी याद आती है। एक बार वह कहीं जा रहा था तो रात हो गई वहां पहुंचते-पहुंचते। उसको उस गांव से और आगे जाना था। जब रात हो गई तो उसने वहीं रुकना तय किया। उसे किसी जगह की तलाश थी जहां वह रात को रुक सके। कहीं भी जगह नहीं मिल रही थी। बामुश्किल एक होटल मालिक ने कहा कि एक कमरे में एक आदमी है और वहीं एक बिस्तर खाली है लेकिन वह आदमी सो गया होगा तो आप जाकर चुपचाप बिना उसे डिस्टर्ब किए सो जाइएगा।

नसीरुद्दीन ने कहा कि मुझे कोई प्राब्लम नहीं, मैं आराम से सो जाऊंगा क्योंकि मुझे सुबह जल्दी उठना भी है। जब नसीरुद्दीन उस कमरे में गया तो तेज लाइट तो नहीं जला सकता था, हल्की सी टॉर्च मैनेजर ने दिखाई कि वहां जाकर सो जाइए। नसीरुद्दीन जब सोने लगा तो उसके मन में एक विचित्र ख्याल आया, ऐसा पहली बार है कि मैं एक अजनबी आदमी के साथ एक कमरे में सो रहा हूं। ऐसा पहले कभी नहीं हुआ था, सब परिचित लोग ही रहते थे, हमेशा घर-परिवार में ही रहता था।

अगर मैं सो जाऊंगा तो जब सुबह उठूंगा तो पता कैसे चलेगा कि मैं कौन हूं? इसलिए कुछ पहचान बना ली जाए। तो नसीरुद्दीन ने टॉर्च जलाकर देखा कि क्या कहीं कुछ समझ में आ रहा है। उसको बच्चों के खेलने के गुब्बारे दिखाई दिए। ऐसा लगता है कि इस कमरे में पहले कोई परिवार ठहरा होगा तो गुब्बारे वहां पर छूट गए होंगे। नसीरुद्दीन ने सोचा कि चलो अपने पैर में एक गुब्बारे का धागा बांध लेते हैं, इससे पता चल जाएगा कि जिस पैर में गुब्बारा बंधा रहेगा वही मैं रहूंगा और जिसके पैर में नहीं बंधा होगा वह दूसरा आदमी होगा। नसीरुद्दीन ने सोचा कि अब ठीक है, सो जाते हैं।

जब वह सोया तो उसका खर्राटा बजने लगा। खर्राटा सुनकर रात को दूसरे आदमी की नींद खुल गई, उसने देखा कि कोई और भी आकर इसी कमरे में सो रहा है। उसने देखा कि ये कैसा विचित्र आदमी है, इसके पैर में तो गुब्बारा बंधा हुआ है, ये कौन आदमी है? उसको मजाक सूझी और उसने धीरे से उस धागे को खोल दिया और गुब्बारे को अपने पैर में बांध लिया। उसको क्या पता कि किसलिए ये गुब्बारा बंधा हुआ है।

अब नसीरुद्दीन को सुबह जल्दी जाना था तो वह उठा और सबसे पहले उसके मन में यही ख्याल आया कि कन्फर्म कर लूं कि कौन हूं मैं? नसीरुद्दीन ने कहा कि इस वाले आदमी को

तो पता है कि मुझे उठकर कहां जाना है। अब प्रश्न ये उठता है कि ये जो बिना गुब्बारे का दूसरे पलंग पर सो रहा है इसको कहां जाना है और ये कौन है? और इस होटल से निकलकर ये जाएगा कहां और क्या करने जाएगा? अब उस आदमी को उसने धीरे से उठाया और कहा कि मुल्ला नसीरुद्दीन जी उठिए, मुझे आपके बारे में सब पता है कि आप कहां से आए हैं, कहां जाएंगे और लौटकर फिर कहां पहुंचना है लेकिन इस आदमी के बारे में कुछ नहीं पता कि कहां जाना है?

हम नसीरुद्दीन पर हंसेंगे कि गुब्बारे से अपनी पहचान बना रहा है। हम अपने बारे में सोचें कि क्या हमारी पहचान इससे ज्यादा भिन्न है। समझो आज रात को आप सोए और नींद में आपको बेहोशी की दवा दी जाए और आपकी प्लास्टिक सर्जरी करके किसी निग्रो की चमड़ी लगा दी जाए पूरे शरीर पर और कल सुबह जब आप एनेस्थीसिया से बाहर आएं और आइना में देखें तो क्या चीख नहीं मार देंगे कि ये कौन है? क्या आपकी पहचान गुब्बारे से कुछ ज्यादा है? आप भी घबरा जाएंगे कि ये है कौन?

जिसको हम अपना होना समझते हैं वह गुब्बारे या कपड़े से ज्यादा नहीं है। नसीरुद्दीन पर हंसना नहीं, हम भी ऊपरी–ऊपरी चीजों को अपना होना मान रहे हैं क्योंकि हमें अपनी अंतरात्मा की तो पहचान ही नहीं है, आत्मज्ञान ही नहीं है। आत्मा है भी कि नहीं, इसका भी हमें पता नहीं है क्योंकि वहां हम कभी जाते ही नहीं। हम तो ऊपर–ऊपर पहने हुए कपड़ों को अपना होना समझ लिए हैं।

और इसलिए जब ये ऊपर का तादात्म्य टूटने लगता है और इस परत से हम भीतर की ओर खिसकते हैं तो घबराहट पैदा होती है कि मैं मरा, मैं मिटा। नहीं, यह मिटना नहीं है, यह तो अमृत की अनुभूति में पहुंचना है। यह 'मैं' का समाप्त होना नहीं, यह असली 'मैं' में पहुंचना है, स्वयं में प्रवेश है। इसके पहले तक हम झूठे 'मैं' में जी रहे थे। लेकिन इतने लंबे समय से हम ऐसे ही जी रहे हैं कि मानो भूल ही गए कि वास्तविक 'मैं' कौन है?

अगला सवाल है कि हिप्नोसिस में जाने के लिए कहते हैं तो समाधि घट जाती है, ठीक है या नहीं?

नहीं, शुरुआत में जब हम आपको ऑटोसजेशन दे रहे हैं, उस समय हिप्नोटिक ट्रांस की अवस्था में जाइए जो कि नींद से मिलती–जुलती अवस्था है। ऐसी नींद हमने खुद ही चुनी है। ऊपर–ऊपर से नींद जैसी, भीतर–भीतर हम जागे हुए हैं किन्तु ऊपर–ऊपर से बिल्कुल जैसे सोए हुए हों या जैसे कोई शराबी नशे में हो ऐसी स्थिति बन जाती है। जिसको हम ध्यान या समाधि कहते हैं, वह है सुपरकॉन्शस मन में जाना, चेतन मन के भी ऊपर। दोनों में एक समानता है कि वहां चेतन मन काम नहीं करता, दोनों में हम लॉजिकल माइण्ड के पार हो जाते हैं। ऐसा समझें कि तीन मंजिला इमारत है और हम बीच की मंजिल पर ही रहते हैं, उसी को अपना घर समझते हैं। हम भूल ही गए कि नीचे भी एक मंजिल और है और ऊपर भी मंजिल है जो कि हमारे ही मकान के हिस्से हैं लेकिन हम वहां कभी गए ही नहीं। तो नीचे की

मंजिल में जाएं, चाहे ऊपर की मंजिल में जाएं, दोनों में एक समानता है कि उतनी देर के लिए हम बीच वाली मंजिल में नहीं रहते। लेकिन ऐसा नहीं हो सकता कि आप नीचे और ऊपर की मंजिल में इकट्ठे पहुंच जाएं। जब नीचे जाएंगे तो ऊपर नहीं जा सकते और जब ऊपर जाएंगे तो नीचे नहीं जा सकते।

तो यहां दोनों चीजें हम बारी–बारी से करवाते हैं, लगभग पौन घंटे हिप्नोटिक ट्रांस की अवस्था में और अंत में हम छोड़ते हैं ध्यान में डूबने के लिए। अगर उसमें समाधि घटित होती है तो बिल्कुल ठीक।

अगला प्रश्न– प्रेमिका के संग संबंध को लेकर मैं कठिनाई में पड़ गया हूं। इसे बचाऊं या तोड़ डालूं?

'दिस इज इट!' नामक दर्शन डायरी में लगभग इसी प्रकार का सवाल किसी ने सदगुरु ओशो से पूछा है। ओशो ने जवाब दिया–

'जल्दबाजी मत करो, क्योंकि होता यह है कि मन के अपने अंधेरे व उजाले क्षण होते हैं, दिन के क्षण और रात्रि के क्षण। जब दिन का क्षण आता है तो हर चीज बहुत अच्छी लगती है; तुम हर चीज साफ–साफ देख सकते हो। जब रात आती है तो हर चीज काली हो जाती है और तुम कुछ भी साफ–साफ नहीं देख पाते।

यह पूरी संभावना है कि तुम रात के क्षण में, अंधेरे क्षण में, क्षीण ऊर्जा के क्षण में ऐसा कोई निर्णय ले लेते हो। अगर तुम उस घड़ी में कोई ऐसा निर्णय ले लेते हो तो यह समझ का निर्णय न होगा क्योंकि तुमने इसी स्त्री के साथ सुंदर क्षण भी देखे हैं।

जरा सोचो: हम यहां बैठे हैं, यहां प्रकाश है, तुम मुझे देख सकते हो और तुम यहां सबको देख सकते हो, तुम पेड़ों को देख सकते हो– और अचानक बिजली चली जाती है। अब तुम किसी को नहीं देख सकते; पेड़ और बाकी सब कुछ अब नहीं हैं। तो क्या तुम कहोगे कि अब पेड़ों का अस्तित्व मिट गया है, व्यक्तियों का अस्तित्व मिट गया है? अगर तुम ऐसा कहते हो तो यह निर्णय बहुत जल्दबाजी का होगा। क्या तुम याद नहीं कर सकते कि कुछ पल पहले यहां लोग थे, पेड़ हरे थे और सब कुछ यहीं था और सब चीजें साफ थीं?

अपने निर्णयों को दिन के समय तक के लिये संभालें!

जब रात है तो दिन को स्मरण रखें, इसे भूलें मत, और शीघ्र ही दिन आता ही होगा। तुम्हें जब भी निर्णय लेना हो, तो बेहतर है उसे दिन के समय में ही लें; तब तुम्हारा जीवन विधेय बन जाता है, अगर तुम अपना निर्णय रात के समय में करते हो तो तुम्हारा जीवन निषेध बन जाता है। मैं धार्मिक व अधार्मिक व्यक्ति में यही भेद करता हूं। अधार्मिक सदा रात के समय में अपना निर्णय करता है, वह नकारात्मक अवस्था में निर्णय लेता है। तभी तो वह यह नहीं कह सकता कि ईश्वर है– वह कहता है, ईश्वर नहीं हैं। वे सभी 'न' मिलकर एक बड़ी 'न' बन जाती है– 'कहीं कोई ईश्वर नहीं है। सभी 'हां' मिलकर बड़ी 'हां' बनती है; 'हां' ईश्वर है।

तो प्रतीक्षा करें! निर्णय तभी लें, जब उजाला हो।

जब फिर से तुम इस स्त्री को चाहने लगते हो और कोई अवरोध नहीं, सब कुछ सुंदर है, अतिरेक में है, निर्णय तब लें। और अगर तुम अलग होना चाहते हो तो अलग हो जाओ! लेकिन निर्णय अंधेरे में न लो। तभी मैं इसे थोड़ा और टालने को, प्रतीक्षा करने को कहता हूं। यह बीत जाएगा।

एक तीसरी अवस्था भी है, भावातीत अवस्था। जब तुमने दिन और रात को बार–बार देख लिया। तब तुम जान जाते हो कि इन दोनों के ऊपर भी कुछ है। तुम, तुम्हारे साक्षी होने की क्षमता, दोनों से ऊपर है।

तो निर्णय तीन प्रकार के हैं। पहला निर्णय निषेधात्मक है जो जीवन को बंजर बना देता है। तब वहां कुछ भी नहीं उगता– यह निराशा है, यह नरक है! दूसरी तरह का निर्णय 'हां' का है, दिन का निर्णय– जहां जीवन प्रफुल्लता, उत्सव बन जाता है। वहां प्रसन्नता है और तुम अपने होने का आनंद अनुभव करते हो– यहीं स्वर्ग है, यहीं बैकुंठ है। और तीसरा है, न उजाला, न अंधेरा– जहां निर्णय साक्षीभाव से आता है; दिन और रात, दोनों के अनुभव से तुम निर्णय लेते हो। वहीं अंतिम निर्णय है, वहीं मनुष्य को संबुद्ध बनाता है। तो थोड़ी प्रतीक्षा करें, देखें और दिन के उजाले की प्रतीक्षा करें, तब निर्णय लें। यही सही है!'

आखिरी प्रश्न– परसों आपने चित्रात्मक आत्मसुझाव के प्रभाव के बारे में समझाया था। कृपया थोड़ा और विस्तार से कहें।

अवचेतन मन तर्क–वितर्क नहीं जानता। पिक्चर्स पहचानता है। इसीलिए सपने फिल्म जैसे चलते हैं। आज एक महिला मिलने आई थीं एक सौ बीस किलो की, जबकि उनको होना चाहिए साठ किलो का। मैंने उनसे कहा कि तुम चित्र भेजती जाओ और देखती जाओ कि आप मशीन पर खड़ी हो और कांटा साठ पर आकर रुका है। कांशस माइण्ड कहेगा कि ये नहीं होने वाला, हम इतनी कोशिश कर चुके, ये कर चुके, वह कर चुके लेकिन लाभ नहीं हुआ; तो कहने दो, तुम उसकी बात ही नहीं सुनो।

आप इस चित्र को अपने भीतर डालो। समय तो लगेगा लेकिन आप रिपीट करते जाना, कम से कम दो–तीन महीने किसी एक चीज पर ही काम करना। तीन महीने के अंदर–अंदर आप पाएंगे कि कॉन्शस माइण्ड ने विरोध करना छोड़ दिया, अब वह भी थक गया कि ये आदमी तो जिद्दी है, ये साठ किलो कि मशीन देखते ही जा रहा है। कब तक वह तर्क करे, अब वह भी कहता है कि भाड़ में जाओ, देखो जो देखना है। और जिस दिन लॉजिकल माइण्ड बीच में इंटरफेयर करना छोड़ देता है आपका वह जो ड्रीमिंग माइण्ड है सबकॉन्शस माइण्ड उसकी जीत उसी दिन से शुरू हो जाती है।

इसलिए मैं कह रहा हूं कि समय लगेगा, एक ही विषय पर काम करना कम से कम तीन महीने। जैसे वह लक्स–लक्स और फेयर एण्ड लवली करते रहते हैं, तो दिमाग में घुसती गई, घुसती गई और आप भलीभांति जानते हैं कि आज तक कोई भी गोरा नहीं हुआ। लेकिन फिर

भी फेयर एण्ड लवली बिक रही है और बिकती ही रहेगी। जो लोग लगा चुके हैं सालों–साल वे भी आगे लगाते रहेंगे। उनकी खोपड़ी में घुस चुकी है फेयर एण्ड लवली। भलीभांति जानते हैं कि कुछ नहीं हुआ मगर फिर भी वह मजबूर हैं। विज्ञापनदाताओं ने उनको हिप्नोटाइज कर दिया। तो ये जो हिप्नोसिस है विज्ञापन के द्वारा, शिक्षाओं के द्वारा, संस्कारों के द्वारा, किताबों के द्वारा, माता–पिता के द्वारा, सामाजिक व्यवस्था द्वारा भांति–भांति की हिप्नोसिस हमारे भीतर घुसाई गई है। इन सब लोगों ने अपना मतलब निकालने के लिए हिप्नोटाइज्ड किया है, अपना मतलब निकालने के लिए।

माता–पिता ने हिप्नोटाइज्ड किया है कि माता–पिता का सम्मान करना चाहिए। बचपन से ही ये आप सुनते आ रहे हैं, सुनते आ रहे हैं, सुनते आ रहे हैं। रामचन्द्र जी आदर्श हैं, पिताजी ने कहा कि बेटा जंगल चले जाओ, उन्होंने आप तीर–धनुष उठाया और चल दिये। और सीता माता भी चल दी और छोटे भाई भी चल दिए और राम के गुणगान गाए जा रहे हैं। हर माता–पिता चाहते हैं कि उसका बेटा राम जैसा हो जाए, हर माता–पिता चाहता है कि उसका बेटा आज्ञाकारी हो जाए। जो तर्क न करे, ये न कहे कि बुढ़ऊ तुम्हारा दिमाग सठिया गया है, उस युवा स्त्री के चक्कर में फंसकर तुम मुझे जंगल भेज रहे हो, चलो तुम पर कोर्ट केस करते हैं।

आप नहीं चाहते कि आपका बेटा ऐसा करे, आप चाहते हो कि वह बिल्कुल हिप्नोटाइज्ड होकर माता–पिता का सम्मान करे। भांति–भांति की कहानियां सुनाते जाओ वह हिप्नोटाइज्ड हो जाएगा, अब उसके भीतर कितनी ही ज्यादा घृणा पैदा हो जाए लेकिन वह व्यक्त नहीं करेगा, ऊपर–ऊपर से सम्मान दिखाता जाएगा। तो हमको जिन ढंगों से हिप्नोटाइज्ड किया गया है समाज के द्वारा, विज्ञापनदाताओं के द्वारा, धर्मगुरुओं के द्वारा, राजनेताओं के द्वारा उन्होंने अपना मतलब निकालने के लिए किया है, हमारे हित में नहीं किया है।

राजनेता चाहते हैं कि बेटा शहीद हो जाओ। शहीदों की चिताओं पर लगेंगे हर बरस मेले, आप जानते हो कि कहीं भी लगते नहीं हैं मेले, बस कविताओं में हैं। लेकिन कविताएं प्रभावी हैं क्योंकि बचपन से सुनते आए उनको। हो जाओ सेना में भर्ती, मारो या मरो, हो जाओ शहीद बेटा और चढ़ जाओ सूली पर। अब तो लाखों लोग हो गए सेना में भर्ती, ये सब हिप्नोटाइज किए गए हैं बुरी तरह से।

राजनेताओं ने हिप्नोटाइज किया है। वे नहीं चाहते कि लोग सुख–चैन की जिंदगी जिएं, उनको मरने के लिए तैयार कर लिया। इनके अंदर कोई विचार पैदा नहीं होता गोलियां चलाने में, बम पटकने में, कि उस तरफ भी हमारे जैसे ही लोग हैं कभी ख्याल नहीं आता इस बात का, सब हिप्नोटाइज्ड लोग हैं। ऑटोमैटिक मशीन से, रोबोट की तरह काम कर रहे हैं।

एक दिन मुल्ला का एक दोस्त उससे एक–दो दिन के लिए मुल्ला का गधा मांगने के लिए आया। मुल्ला अपने दोस्त को बेहतर जानता था और उसे गधा नहीं देना चाहता था। मुल्ला ने अपने दोस्त से यह बहाना बनाया कि उसका गधा कोई और मांगकर ले गया है। ठीक उसी समय घर के पिछवाड़े में बंधा हुआ मुल्ला का गधा रेंकने लगा। गधे के रेंकने की आवाज

सुनकर दोस्त ने मुल्ला पर झूठ बोलने की तोहमत लगा दी। मुल्ला ने दोस्त से कहा– 'मैं तुमसे बात नहीं करना चाहता क्योंकि तुम्हें मेरे से ज्यादा एक गधे के बोलने पर यकीन है।'

हम सब ने भी गधों की बातें मान–मानकर अपनी जिंदगी तबाह कर ली है। अपनी आत्मा की सुनो, अपने वास्तविक अंतःकरण को अवसर दो बोलने का। स्वधर्म में जीने की कला सीखनी होगी। आत्म–सुझाव औषधि बन जाएंगे, परधर्म रूपी रोग से मुक्ति दिलाने में सहयोगी बन जाएंगे। स्वयं से प्रेम करने की कला सीखो, आत्म–सम्मान से भरो।

आप कह रहे हैं कि चित्रात्मक सजेशन कैसे काम करते हैं? अपने चारों तरफ देखो, चारों तरफ आपको रोबोट्स नजर आएंगे जो प्रोग्राम्ड कर दिए गए हैं और मशीन की तरह काम कर रहे हैं। अगर आपको अपने हित में कुछ करना है तो आपको सजेशन देना होगा अपने पक्ष में। तो निगेटिव हिप्नोसिस के विपरीत हमें जागना है और अपने हित के लिए अपने कल्याण के लिए और सबके कल्याण के लिए भी नए ढंग से अपने मन को री–कंडीशन करना है। पिक्टोरियल सजेशन जादुई असर करेंगे। उपयोग करना शुरु करें। शुभ रात्रि!

12

साक्षी या लीनता की साधना?

प्रथम प्रश्न– तनाव मुक्त होने के लिए क्या करूं?

सर्वप्रथम तो उत्तरदायित्व अपने कंधों पर लें– यही है तनावमुक्ति का बुनियादी सूत्र। मेरी जिंदगी का 90 प्रतिशत नियंता मैं हूं। जो हुआ और हो रहा है, अधिकांश मेरे ही कारण। जिम्मेदारी लेने के साथ ही यह संभावना खुल जाती है कि परिवर्तन संभव है। यदि मैं खुद को तनाव का जिम्मेदार नहीं मानता, तो फिर मैं बदलाहट का हकदार भी नहीं रह जाता। शांति के साथ, प्रेमपूर्वक जीना हो सकता है। आनंद, उत्सव, सद्भावनाएं, उमंग, उत्साह आदि संभव हैं। अशांति, दुख, निराशा, दुर्भावनाएं; मेरी ही गलत जीवन–शैली ने उत्पन्न की हैं। परिस्थितियों की जिम्मेदारी ज्यादा से ज्यादा दस प्रतिशत हो सकती है। यह पहला बिंदु स्वीकारना ही सर्वाधिक कठिन है। जो इस पर राजी है, केवल वही दूसरा कदम उठा सकता है।

दूसरा कदम– बहाने न खोजें। स्वयं को सांत्वना न दें। कोई कर्मबंध या ज्योतिष के धार्मिक सिद्धांतों से, तो कोई फिल्मी गानों से सांत्वना खोज लेता है– आए हैं दुनिया में तो जीना ही पड़ेगा, जीवन है अगर जहर तो पीना ही पड़ेगा। अपनी किस्मत ही कुछ ऐसी थी कि दिल टूट गया। थोड़े गम हैं, थोड़ी खुशियां, यही है जिंदगी। क्या करें, ऐसा ही चलता रहता है! सावधान। आप ऐसा चलाते रहे हैं, इसलिए ऐसा चलता रहा है। ये जिंदगी की साइकिल आपके पैडल मारे बगैर नहीं चल सकती। हैंडिल भी आपके हाथों में है।

अधार्मिक और वैज्ञानिक बुद्धि वाले जर्मनी के एक जेनेटिक इंजीनियर ने मुझे कहा था–

'मेरी पर्सनालिटी ही नर्वस टाइप है। मैं क्या कर सकता हूं? मुझमें मैनुफैक्चरिंग डिफेक्ट है। मेरे माता–पिता तनावग्रस्त रहते थे, मेरे दादा–दादी भी, नाना–नानी भी बड़े गुस्सैल थे। उन्हीं के क्रोमोज़ोम्स और जीन्स मुझमें हैं। मैं ऐसा होने के लिए मजबूर हूं।'

निवेदन है कि निरर्थक दोषारोपण छोड़ें– परिवार, संस्था, देश, सरकार, शादी, बच्चे, मां–बाप, आदि पर। गृह–नक्षत्र, हस्तरेखा, भाग्य, जन्मकुंडली, भगवान को दोष देना बंद कीजिए। बचपन की घटनाएं, लालन–पालन, शिक्षा, संस्कार आदि को गालियां देने से अब परिवर्तन न होगा। आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक व्यवस्थाओं को अपने तनाव की वजह मानने से हम कभी तनावमुक्त न हो सकेंगे।

तीसरा सोपान– तनाव से मुक्त होने के अस्थायी, हानिप्रद, अस्वस्थ उपायों से बाज आएं– धूम्रपान, शराब, ड्रग्स, अधिक या बहुत कम भोजन, घंटों टी.वी. देखना, परिवारजनों व मित्रों से दूरी, कामधाम भूलकर हाथ पर हाथ धरे बैठना, अति–निद्रा, इतने ज्यादा व्यस्त होना कि तनाव की याद न आए, लोगों पर क्रोध और घृणा का जहर उगलना। ये सारे उपाय अस्थायी रूप से कुछ राहत भले ही दे दें, अंततः ये असफल होने को बाध्य हैं।

चौथा सोपान– शांत और शिथिल होने के स्वस्थ तरीके अपनाएं– सर्वप्रथम इस बात का ज्ञान कि उपरोक्त विधियां काम नहीं करतीं, परेशानी बढ़ाती हैं। तनावजनक परिस्थिति को बदलना होगा या तनावग्रस्त की मनःस्थिति को। परिस्थिति परिवर्तन की कोशिश में तो आप लगे ही रहते हैं, अतः उस संबंध में अधिक कुछ न कहूंगा। तनावग्रस्त व्यक्ति की मनःस्थिति बदलने का सुझाव दूंगा। स्व–सम्मोहन की कला सीखकर, रोज रात सोने के पूर्व बीस मिनट सेल्फ–सजेशन देते हुए नींद में प्रवेश करें। 'मैं शांत हूं' 'मैं प्रसन्न हूं' मैं प्रफुल्लित हूं' ऐसा चित्रात्मक रूप से देखते हुए सो जाएं। हमेशा विधायक भाषा का प्रयोग कीजिए। 'तनाव–मुक्त' 'क्रोध–रहित' कहने की जरूरत नहीं। उनमें बारंबार तनाव और क्रोध की ही याद आती है।

अंतिम बात– धीरज रखें। नियमित सम्मोहन का प्रयोग निष्ठापूर्वक करने पर, कम से कम तीन माह लगेंगे। साइकिल में मारे पैडलों का पुराना मोमेन्टम अपना असर दिखाएगा, थोड़ी दूर तक साइकिल बिना चलाए भी चलती रहेगी। अधैर्य तनाव को बढ़ाता है। धैर्यवान बनें। आधुनिक मनुष्य की बड़ी मानसिक बीमारियों में से एक है– अधैर्य, शीघ्रता। किंतु आश्चर्य यह कि इलाज की बात तो दूर, कोई इसे रोग ही नहीं मानता! ध्यानी के पास होनी चाहिए प्रतीक्षा की क्षमता। ध्यान का पौधा मौसमी फूलों की तरह नहीं है, कि आज बीज बोए, 15 दिन में पौधा तैयार। विराट वटवृक्ष की भांति है धर्म की साधना।

जितनी महत्त्वपूर्ण घटना हो उसके फूलने–फलने में उतना ही अधिक समय लगता है। बैक्टीरिया वाइरस की संतान 20 मिनट में प्रौढ़ हो जाती है, और अगली पीढ़ी को जन्माने लगती है। मक्खी मच्छर अपने 2–3 सप्ताह के जीवनकाल में 150–200 अंडे प्रतिदिन देते

हैं। पंक्षियों के बच्चे परिपक्व होने में 10–15 दिन लेते हैं। पशुओं के बच्चों का विकास 2–4 माह लेता है। मनुष्य का बच्चे की प्रतिभा प्रौढ़ होने में 25–30 वर्ष का वक्त लेती है। कुत्ते के बच्चे से ज्यादा उम्मीद नहीं है। उसके विकास की संभावना अत्यंत सीमित है।

आदमी के विकास की अनंत संभावनाएं हैं। वह इंसान से भगवान बन सकता है। पतन का खतरा भी भयंकर है। वह शैतान भी बन सकता है। कोई गधा या घोड़ा, सिकंदर या हिटलर जैसा हैवान नहीं बन सकता। सभी प्राणियों की नियति लगभग सुनिश्चित है। आदमी का सौभाग्य है, और दुर्भाग्य भी यही है कि प्रकृति ने उसे स्वतंत्र छोड़ा है। प्रतिभा की प्रौढ़ता में 25–30 साल लगते हैं, यह तो साधारण सांसारिक बुद्धिमत्ता की बात है। आध्यात्मिक रूप से विकसित होने में तो अनेक जन्म लगते हैं। जितना धैर्य, उतना शांत चित्त, उतने ही कम जन्म लगते हैं। जितनी जल्दबाजी में, उतनी अशांति की दशा, उतनी ही देर लगती है। प्रार्थना के संग जितनी गहन प्रतीक्षा की तैयारी, उतने शीघ्र परिणाम संभव। यही उलटबांसी है। लेकिन यह पढ़कर घबरा न जाना। यहां कोई नया नहीं, हम सब अनंत जन्मों से आत्मिक विकास की इस यात्रा पर हैं। यदि इस बार कुछ कदम उठा लिए, तो अपनी मनुष्य योनि को सार्थक समझें। जिस व्यक्ति ने इस प्रकार की धैर्यपूर्ण जीवन–दृष्टि अपना ली, आधा तनाव–मुक्त तो वह उसी समय हो गया।

द्वितीय प्रश्न– एक साधक ने पूछा है कि नाद एवं आलोक को देखना सुनना है अथवा उसमें लीन होकर डूबकर एकात्म हो जाना है अथवा साक्षीभाव में स्थित रहना है?

ये सभी साधकों के लिए महत्त्वपूर्ण बात होगी। हमारे अंतर्तम में हम जिसे जानते हैं हम उसके साथ एक हैं ही, होना नहीं है। और बाहर हम जिसको भी जानते हैं उसके साथ हम एक हो ही नहीं सकते, वहां द्वंद और द्वैत सदा रहेगा। तो बाहर के जगत में साक्षीभाव को साधना है और भीतर हम एक हैं ही इस बात को पकड़ना है। जरा आप नाद सुनते हुए खोजिए कि सुनने वाला है कौन, क्या कोई अलग–थलग है, किसको किसमें लीन करेंगे, दो होना तो चाहिए पहले, आप किसी को भी न पाएंगे।

ठीक यही बात अन्य किसी भी दिव्य अनुभव में होगी। हां, वह दिव्य अनुभव है किन्तु कोई अलग–थलग पृथक बैठा हुआ नहीं है, आप साक्षी बनोगे कैसे? तब यही पता चलता है कि हम जिसे जान रहे हैं हम वही हैं। आप खोजना, अगर आपको दो मिल जाएं तो मुझे बताना फिर मैं सुधार लूंगा। अंतस का मतलब है कि वहां केवल मैं ही हूं इसलिए तो हम उसको भीतर कह रहे हैं। अगर वहां भी दूसरे प्रगट हो जाएं, दूसरे मौजूद हो जाएं, भीड़–भड़क्का लग जाए तो फिर वह भीतर कहां रहा।

भीतर का मतलब है कि वहां केवल मैं ही हूं। तो हम जिसे जान रहे हैं नाद को, कि नूर को मैं वही तो हूं। इसलिए वहां पर साक्षी होने का कोई उपाय ही नहीं है और बाहर के जगत

में हम जो भी जानते हैं, अपनी इंद्रियों के द्वारा देखते या सुनते हैं, छूते हैं, वह सब मैं से भिन्न है, वह पराया है, उसके साथ हमेशा ही द्वंद और द्वैत रहेगा। वहां द्वंद्ववश हमने भ्रांति बना ली। तो दो भ्रांतियां हैं, एक बाहर के जगत की भ्रांति, वहां हम तादात्म्य बना लेते हैं। उन्हें अपना समझने लगते हैं, उसके साथ एक हो जाते हैं, यह भ्रांति है, क्योंकि ऐसा कभी हो नहीं सकता, यह असंभव है।

बाहर के जगत में हम किसी के साथ एक नहीं हो सकते। जिसे हम जानते हैं, वहां केवल साक्षीभाव ही संभव है और भीतर अर्थात जहां कोई दूसरा है ही नहीं, वहां कौन किसका साक्षी होगा। साक्षी बनने के लिए कम से कम दो तो चाहिए, एक दृष्य, एक द्रष्टा, वहां ऐसा नहीं है, हो ही नहीं सकता। लेकिन हम भीतर भी जाते हैं एक भ्रांति सहित हम सोचते हैं कि मैं सुन रहा हूं। आप खोजना कि ये मैं कौन है जो सुन रहा है। ऐसा कोई भी मैं वहां न पाओगे।

तो ये दो भ्रांतियां हैं, इन दोनों से इकट्ठे ही मुक्त हो जाइए। बाहर के जगत में जो कुछ भी है हम केवल उसके साक्षी हैं, हम केवल उसके जानने वाले हैं, हम वह कभी भी नहीं हैं। मैं एक पेड़ देखता हूं तो निश्चितरूप से मैं पेड़ नहीं हूं। मैं एक नदी या पहाड़ देखता हूं तो मैं स्वयं नदी या पहाड़ नहीं हूं। अब एक तीसरी चीज है जो न भीतर की है और न बाहर की है वह है मन। मन है हमारी खोपड़ी के भीतर किन्तु उसमें प्रतिछवियां बन रही हैं बाहर की।

मन स्मृति भंडार है। पीछे हमने जो कुछ भी जाना वे सारे अनुभव मौजूद हैं, अभी हम जो देख–सुन रहे हैं वह मन तक जा रहा है, तो मन है तो भीतर लेकिन उसमें जो भी प्रभाव पड़ते हैं वह बाहर के हैं। तो एक प्रकार से मन न तो बाहर है और न ही भीतर है, बीच में समझें और उसमें जो कुछ भी हो रहा है वो बाहर की परिस्थितियों से संबंधित है। किसी ने आपका अपमान कर दिया, क्रोध आ गया तो अपमान करने वाला बाहर है और क्रोध की लहर मन में उठी, चैतन्य भीतर है।

ये मन बीच की चीज है लेकिन इसमें जो कुछ भी हो रहा है वह बाहर का है। बाहर किसी ने आपकी प्रशंसा कर दी, चार मीठे बोल बोल दिए और आप खुश हो गए, आपके मन में प्रेम उत्पन्न हो गया। ऐसा लगता है कि यह प्रेम भीतर है किन्तु यह भी भीतर नहीं है, यह बाहर का ही रिफ्लेक्शन है। उसी के रिस्पॉन्स में यह उत्पन्न हुआ है। और बाहर वाला व्यक्ति अगर बदल जाएगा तो आपका प्रेम भी बदल जाएगा। ये आपका नहीं है। किसी ने तारीफ की थी और आपको अच्छा लगा तो ये अच्छे लगने की फीलिंग आपको लगता है कि आपके भीतर हो रही है। नहीं, अगर वो व्यक्ति आपको कुछ बुरा बोल दे तो आपको बुरा लगने लगेगा।

यह आप नहीं हो। अच्छा लगना या बुरा लगना, प्रेम या घृणा, ये बाहर के रिफ्लेक्शंस हैं। जैसे कोई दर्पण भीतर हो किन्तु दर्पण में जो छवियां बनती हैं वह सब बाहर की हैं। लगभग ऐसा ही है हमारा मन। तो इसको बाहर का ही जानना। इसमें जो भी दिख रहा है वह बाहर का है। जो भी विचार हैं, जो भी भावनाएं हैं वे हमने सब बाहर से ली हैं। जब हम पैदा

हुए थे हमको कोई भाषा नहीं आती थी, शब्द नहीं आते थे, कुछ भी नहीं आता था। फिर हमने भाषा सीखी, विचार, किताबें, सुना, पढ़ा, लिखा।

जो भी ज्ञान हमने अर्जित किया है वह सब बाहर का है। जो भी अनुभव जीवन में हुए वे सब बाहर के लोगों से संबंधित हैं, परिस्थितियों से, व्यक्तियों से संबंधित हैं। इसमें आंतरिक कुछ भी नहीं है। तो यह जो मध्य की चीज है दर्पण जैसी जिसमें भासती हैं चीजें कि भीतर हैं किन्तु वे हैं सब बाहर की। यहां पर असली मुश्किल खड़ी होती है। हैं बाहर की चीजें और लगती हैं कि मेरे भीतर हैं, इनसे हमारा तादात्म्य हो जाता है।

समझो कोई हिन्दू घर में पैदा हुआ और हिन्दू धर्म के बारे में उसने बचपन से सुना, पढ़ा, देखा चारों तरफ अब उसके मन में हिन्दू धर्म चला गया, ये सब बाहर से आया था। कल कोई मुसलमानों का ग्रुप आकर मंदिर में मूर्ति तोड़ दे तो यह हिन्दू बौखला उठेगा, लड़ने–मरने को तैयार हो जाएगा, शहीद होने को तैयार हो जाएगा कि मूर्ति कैसे तोड़ी।

इसी हिन्दू बच्चे को मान लो कि बचपन में ही किसी मुसलमान दंपत्ति ने गोद ले लिया होता, पालन–पोषण भी मुसलमान परिवार में हुआ होता तब ये बचपन से ही मुसलमान कंडीशनिंग से भरा होता, ये भी मूर्ति के खिलाफ होता। इसकी धारणा होती कि मूर्ति में परमात्मा कैसे कैद हो सकता है। यह तो छोटी सी मूर्ति है और परमात्मा है विराट। ये सब बकवास है, आकार में निराकार कैसे समाएगा। मूर्तियां तोड़नी हैं ताकि परमात्मा को मुक्त किया जा सके इस कैद से। तब ये तलवार लिए घूमता होता कि कहीं मूर्ति मिल जाए तो खंडित कर दूं।

ये वही बच्चा है, न हिन्दू धर्म इसका है और न ही मुसलमान धर्म इसका हैं। ये बाहर से अर्जित चीजें हैं। इनके प्रति साक्षी होना क्योंकि ये बाहर की ही हैं। तुम्हारे अंदर जो भी भावनाएं पैदा हो रही हैं सब बाहर की हैं, तुम्हारा कुछ भी नहीं। जो भी धारणाएं हैं, विश्वास हैं सब बाहर के हैं। यहां तक कि धर्म भी बाहर का है, तुम्हारा कुछ भी नहीं। तुम तो चैतन्य हो जिसमें नाद–नूर मौजूद है। यह नाद, नूर और निराकार की त्रिवेणी तुम हो। तो अब अच्छे से समझ लो, बाहर के जगत में जो हो रहा है उसको सजग होकर साक्षी होकर जानो। उसमें लिप्त मत हो जाओ, अछूते रहो जल में कमलवत।

भीतर मन में जो घटित हो रहा है वह बाहर की परिस्थितियों का परिणाम है उसको इतना महत्व न दो, वह तुम्हारा नहीं है। जब तक तुम उसे अपना मानोगे, तुम गंभीरतापूर्वक एक हो जाते हो। वास्तव में नहीं हो जाते हो परंतु तुम्हें लगने लगता है कि तुम एक हो। सारी मुसीबतों की जड़ यह है। और जो अंतर्यात्रा करके अपने भीतर नाद, नूर, चैतन्य में स्थित होते हो वह तुम्हीं हो। वहां कौन किसमें लीन होगा, वहां दो हैं ही नहीं। तो इन तीन बातों को समझना। यह समझ बिल्कुल स्पष्ट कर देगी, कहां क्या करना है।

जगत में जब जी रहे हो साक्षीपूर्वक जीओ और अपने मन के प्रति अपनापन छोड़ दो। ये दर्पण अपना है, छवियां जो बनेंगी वे बाहर की हैं। जैसे ही ये ख्याल आया अचानक वह जो

दीवानगी थी इन विचारों, मान्यताओं, भावनाओं के पीछे पागल होने की वह तुरंत ही समाप्त हो जाएंगी, वह बिल्कुल ही महत्वहीन हैं। और जब ध्यान, समाधि में डूबो वहां केवल तुम्हीं हो। वह नाद, वह नूर, वह चैतन्य, वह जानने की क्षमता तुम्हीं हो।

अगला सवाल, ध्यान में बहुत गहरी अनुभूति हुई जिसमें शरीर बिल्कुल हल्का और निर्भार महसूस हुआ और ऊपर की ओर उड़ने लगा, ऐसा लगा कि पूरे युनिवर्स में मैं उड़ा हूं और तेज हवा में ठंडक महसूस की उड़ते–उड़ते, इसके लिए बहुत–बहुत धन्यवाद। सवाल यह उत्पन्न होता है कि उसके बाद एक झटका सा लगा और फिर मैं नॉर्मल हो गया। बहुत सुंदर लगा, मैं मौन में डूब गया फिर तेजी से विचार चलने लगे।

कितना ही अच्छा अनुभव हो उससे सवाल जरूर उत्पन्न हो जाता है। हमारा मन को हर चीज में प्रश्न उत्पन्न करने की आदत है। इससे थोड़ा बचें। खासकर जब आपको अच्छा लग रहा है तो उसका आनंद लें, विश्लेषण करने की न सोचें। हां, जब कोई तकलीफ है, कोई बीमारी है, कोई रोग है, मन में कोई परेशानी है तो जरूर कारण पूछना कि ऐसा क्यों? क्योंकि उसको हमें दूर करना है।

कोई बीमारी है तो हमें उसकी जांच करनी होगी, डायग्नोसिस करनी होगी, इलाज करना होगा क्योंकि उसे मिटाना है। लेकिन जब कुछ अच्छा लगे, सत्यम् शिवम् सुंदरम् की दिशा में कदम उठें तब प्रश्न नहीं उठाना। इन्होंने अंत में लिखा है कि फिर तेजी से विचार चलने लगे। वह तो चलेंगे ही जब आप विश्लेषण में लग गए। फिर मन के तल पर आ गए झटके के संग, इस भूल से बचिए।

तो एक सीधा सा फार्मूला कि जो चीज खराब है या जिससे हम बचना चाहते हैं उसका कारण खोजना, उसका क्या राज है, क्यों हो रहा है ये पता लगाना ताकि हम उसको दूर कर सकें और मिटा सकें। और जो चीज हमें ठीक लग रही है, जिसमें हम आनंद ले रहे हैं उसमें सवाल पैदा नहीं करना किसी प्रकार का वरना वह सारा मजा किरकिरा हो जाएगा।

कुछ दिन पहले ही मुल्ला की एक घटना कही थी वो आपको सुनाता हूं–

नसरुद्दीन को विचित्र–विचित्र बीमारियां होती थीं। डॉक्टर भी थक गया था सुन–सुन के क्योंकि रोज वह नई–नई बीमारियों को ले आता था जो मेडिकल की किताबों में भी नहीं लिखी थीं। बड़ा इनवेंटिव माइंड नई–नई चीजों को खोजने में। डॉक्टर भी थक गया था बिल्कुल। एक दिन डॉक्टर ने कहा कि तुम दस–पंद्रह दिन के लिए छुट्टी मनाने कहीं हिल स्टेशन पर चले जाओ। वहां का मौसम देखकर तुमको अच्छा लगेगा। मुल्ला ने कहा जरूर, आप कहते हैं तो उपचार का एक भाग समझकर मैं चला जाता हूं। वह चला गया हिल स्टेशन।

दूसरे दिन सुबह ही वहां से फोन आया कि डॉक्टर साहब यहां मुझे बहुत अच्छा लग रहा है, बताइए क्यों? अब आपकी क्या डायग्नोसिस है अच्छा लगने की। नहीं, जब अच्छा लग रहा है तो मजा लो, फिर मत पूछो क्यों। सोचो अगर कोई आदमी डॉक्टर के पास जाकर पूछे कि मैं स्वस्थ हूं बताइए क्यों? डॉक्टर भी अपना सिर पीट लेगा। हां, तकलीफ हो तो जरूर पता लगाना क्यों। आपको बहुत सुंदर अनुभव हुआ, एस्ट्रल ट्रेवलिंग की अनुभूति हुई, इसका आनंद लो। इसके विचार में, विश्लेषण में नहीं लगना। ओशो सिद्धार्थ जी का प्यारा गीत है, सुनो–

जीवन शुरु हुआ अब, जीने का ढंग आया,
शमां–ए–रूह क्या जली, महफिल में रंग आया।
आए थे इस जहां में, जीवन संवारने को,
लेकिन बिसार बैठे, जिसने हमें बनाया।
खुद से ही बेखबर हो, हम कब से सो रहे थे,
बलिहारी सद्‌गुरु ने, आकर हमें जगाया।
प्रभु के विराट मंदिर में दीप जल रहा है,
यह आत्मदीप मेरा, सद्‌गुरु ने जलाया।
मुर्शिद की इस कृपा का, कैसे बयां करें हम,
मंजिल ने खुद ही आकर, हमको गले लगाया।

एक और सवाल– प्रभु आपकी संपूर्ण कृपा है, न अतीत है और न ही भविष्य बचा है। स्वयं के प्रति पूर्ण स्वीकार भाव है किन्तु फिर भी जीवन में प्रेम नहीं। ऐसा क्यों?

प्रेम के संबंध में आपकी जो धारणा है शायद वह गलत है। जिस व्यक्ति के लिए भविष्य, भूत विदा हो गए, जिसके लिए स्वयं का पूरा स्वीकार भाव जाग गया, जो ऐसी जागरूकता की अवस्था में रह रहा है उसके पीछे सूक्ष्म प्रेम छाया की भांति चलता है। किन्तु हमारे मन में धारणा बैठ गई है हिन्दी फिल्म वाले प्रेम की, हम चाहते हैं प्रेम अर्थात् वह। बचपन से वही हमने देखा, सुना, कहानियों में, फिल्मों में, उपन्यासों में, टी.वी. सीरियल्स में, वह प्रेम वास्तविक प्रेम नहीं है।

बहुत बार ऐसा होता है जो अत्यंत प्रेमपूर्ण लोग हैं जैसे ये जिन मित्र का सवाल है जो कह रहे हैं, भूत, भविष्य नहीं बचा, गहन जागरूकता में जी रहे हैं, पूर्ण स्वीकार भाव में जी रहे हैं और फिर इस प्रकार का सवाल कि प्रेम क्यों नहीं है। इसका मतलब है प्रेम के प्रति हमारी जो भ्रांत धारणा है वह सवाल पैदा कर रही है। ऐसा व्यक्ति निश्चितरूप से प्रेममय है, इसमें कोई संदेह नहीं। लेकिन इसका प्रेम वैसा सक्रिय प्रेम नहीं होगा जैसा कि सामान्य रूप से हम जानते हैं।

जो बहुत एक्टिव लव, इनीशिएटिव लेने वाला उसमें एक प्रकार का आक्रमण होता है, वह हिंसा का ही एक छोटा सा रूप है। उसमें दूसरे को पजेस करना, दूसरे को डॉमिनेट करना, दूसरे को अपने ढंग से चलाना, अपनी बात मनवाना ये सारे तत्व मौजूद रहेंगे प्रेम के नाम पर। लेबिल खूब अच्छा है, कंटेनर बहुत अच्छा और अंदर ओह शिट! तो कंटेनर तो बहुत अच्छा है ऊपर से बहुत आकर्षक लेकिन एक बार उसके चंगुल में फंसे तो फंसे, फिर वहां से मुसीबतों का सिलसिला शुरू होता है।

इसलिए फिल्मों में शादी के बाद आगे की घटना फिर नहीं बताते कि क्या हुआ। वह बताने लायक नहीं है। वहां पर जाकर 'दि एण्ड' लिखा आ जाता है कि इसके बाद वे लोग सुखपूर्वक जिए। आगे का अब कहने लायक नहीं कि क्या हुआ। फिर भारी पजेशन होगा, डोमिनेशन होगा। वे सब हिंसा के ही सूक्ष्मरूप हैं। लेकिन सीधा–सीधा यदि किसी पर हिंसा करोगे तो आदमी विद्रोह कर देगा, होने ही नहीं देगा। हमें इस कड़वी दवाई के ऊपर शुगर लपेटकर बनानी पड़ती है गोली तब वो खाई जा सकती है।

ठीक ऐसे ही हम अपना पजेशन और डोमिनेशन खूब शुगर कोटेड करके, प्रेम का आवरण चढ़ाकर प्रगट करते हैं। उसमें खूब धोखाधड़ी छिपी हुई है। आपने जो कहा है कि भूत, भविष्य नहीं है, गहन जागरूकता है, पूर्ण स्वीकार भाव है यही है प्रेम। ऐसा प्रेम आक्रामक नहीं होगा, हमलावर नहीं होगा शायद दूसरों को पता भी न चले कि आप प्रेमल हैं और यहां तक कि आपको भी पता नहीं चल रहा है तभी तो यह सवाल पैदा हो रहा है क्योंकि हमारे मन में धारणा भरी हुई है किसी दूसरे प्रकार के प्रेम की उससे ये बात मैच नहीं कर रही।

मैं आपको आश्वस्त करता हूं, आपको जो हो रहा है एकदम से ठीक हो रहा है, सुंदर हो रहा है ऐसा ही होना चाहिए। ध्यान के पीछे–पीछे प्रेम छाया की भांति चला आता है। वह आ रहा है लेकिन उसकी पदचाप भी सुनाई नहीं पड़ती। सुनाई पड़ने लगे तो वह भी फिर आक्रामक हो गया, फिर वो हिंसक रूप ही हो गया। तो प्रेम के नाम पर बड़ी सूक्ष्म हिंसा चलती है। दुश्मनों के साथ हम इतनी हिंसा नहीं करते क्योंकि दुश्मन बहुत दूर है। उससे तो हमेशा मुलाकात भी नहीं होती।

हम अपनों के साथ, जिन्हें हम कहते हैं प्रेम करते हैं उनसे, अपने परिवारजनों के संग, अपने रिश्तेदारों के संग, अपने मित्रों के संग, अपने सहकर्मियों के बीच वहां हम जो सूक्ष्म हिंसा का तानाबाना बुनते हैं प्रेम की आड़ में वो बड़ा खतरनाक है, उसके प्रति सावधान होना। गौर से टटोलना, ऊपर–ऊपर से प्रेम का दिखावा है धोखा देने के लिए। जैसे मछली पकड़ने के लिए कांटे में आटा लगाते हैं बस, वैसा ही भीतर कांटा छिपा है, भीतर हमारा अहंकार मौजूद है। और इसीलिए फिर इतना संघर्ष।

चूंकि दोनों तरफ से ऐसा ही हुआ, दोनों ने ही एक–दूसरे को धोखा दे दिया और जब कांटे फंस गए एक–दूसरे में उलझ गए, फिर मुसीबत का सिलसिला शुरू। फिर वह हिंसा

चलती रहेगी, घृणा पनपती रहेगी। दुश्मनों के साथ हम उतनी हिंसा नहीं कर पाते, वह तो यदा–कदा कभी होता है लेकिन अपनों के साथ लगातार एक संघर्ष चल रहा है। वैसा वाला प्रेम धोखे का प्रेम है।

ध्यान में डूबे व्यक्ति के भीतर एक सहज प्रेम उत्पन्न होता है जो बहुत स्थूल नहीं, बहुत स्पष्ट नहीं। दूसरों को तो समझ आएगा ही नहीं, यहां तक कि खुद भी शक पैदा होने लगता है कि मैं प्रेमपूर्ण हूं कि नहीं। याद रखना, वे जो झूठे प्रेम करने वाले लोग हैं वे झूठ में ऐसे मग्न हैं कि उनके भीतर ये सवाल ही पैदा नहीं होता आश्चर्य की बात है। जिनके भीतर सवाल पैदा होने चाहिए उनके भीतर नहीं होता।

मैं आपसे निवेदन करूंगा, अभी एक नई किताब छपी है 'प्रेम के रंग अनेक' आप यह किताब पढ़िएगा। इस पर खूब विस्तार से चर्चा की है। एक बार 'प्रेम समाधि' में जो प्रश्नोत्तर हुए थे केवल एक ही विषय पर हैं। प्रेम के ऊपर ही वही इस किताब के रूप में संकलित हुई है। तो प्रेम के संबंध में बहुत विस्तृत बात है इसमें और इसको पढ़कर आपको स्पष्ट होगा कि वास्तव में प्रेमपूर्ण आप ही हैं। लेकिन अब अहंकार इतना भी नहीं बचा कि जो ये कह सके कि मैं प्रेमपूर्ण हूं। वह जो आदमी सिद्ध करता रहता है कि आई लव यू, आई लव यू, आई लव यू का मंत्र जपता रहता है उसका मतलब एकदम धोखाधड़ी है।

जहां प्रेम होता है वहां कहने की भी कोई आवश्यकता नहीं होती। जहां बार–बार प्रमाणित करना पड़े, फिर से सिद्ध करो, फिर से सिद्ध करो, इसका मतलब मामला कुछ गड़बड़ है। क्यों इतना सिद्ध करना पड़ रहा है और दूसरे से भी अपेक्षा कि वह भी लगातार फीडबैक दे, प्रमाणित करता रहे कि प्रेम है, प्रेम है, प्रेम है। इसका मतलब मामला कुछ और है। शायद अहंकार है, शायद वासना है, शायद मोह है, शायद दूसरे को डॉमिनेट करने की इच्छा है। उसे अपनी इच्छा अनुसार चलाना है, उसकी जिंदगी को बदलना है।

और हैरानी की बात अगर वो हमारी इच्छानुसार बदल जाए, एक तो बदलेगा नहीं क्योंकि उसका भी अपना अहंकार है। वह तो आपको बदलने में उत्सुक है, आप उसे बदलने में उत्सुक हो, दोनों एक–दूसरे की काट–छांट करने में उतारू हैं, दोनों ही काफी दुख पाएंगे। कोई बदलेगा नहीं, और बाईचांस अगर वह बदल गया तब हम पाएंगे कि अब वह प्रेम करने के काबिल ही नहीं रहा क्योंकि हम जिस व्यक्ति को प्रेम करते थे वो तो ऐसा नहीं था, हम किसी और से आकर्षित हुए थे।

मुल्ला नसरुद्दीन कह रहा था गर्लफ्रेंड की परिभाषा, गर्लफ्रेंड एक ऐसी नारी है जो लगातार टोक–टोक कर आपकी सारी आदतें बदल दे और अंत में शादी के लिए इंकार कर दे और कहे कि अब आप वैसे नहीं रहे जैसा कि पहले थे। शादी के बाद अधिकांश पति 'मोल्ड' होने की कोशिश करते हैं, पत्नी के अनुसार ढलने की कोशिश करते हैं। पत्नी जैसा कहती है वैसा करने की कोशिश करते हैं और अंत में एक दिन पाते हैं कि उनकी पत्नी अब उन्हें प्रेम नहीं करती। जोरू के गुलाम को कौन प्रेम करेगा?

वह जिससे आकर्षित हुई थी, वह सीना फुलाए हुए फिल्मी हीरो की तरह शेरखान थे वो और यह मरियल चूहा। पत्नियां चूहे से भी डरती हैं मगर पति से नहीं डरतीं। अब ये प्रेम के योग्य ही नहीं बचा और पति ने पूरी कोशिश की थी पत्नी का प्रेम हासिल करने के लिए कि जैसा–जैसा वो चाहती है मैं वैसा–वैसा ही करूं। एक गाना है न, जो तुमको हो पसंद वही बात कहेंगे, तुम दिन को अगर रात कहो रात कहेंगे। अगर तुम ऐसे हो जाओ तो फिर प्रेम बिल्कुल नहीं मिलेगा। फिर पत्नी की नजर किसी और पर पड़ने लगेगी। क्योंकि उसका आकर्षण था कि वह जो शेर की तरह सीना फुलाए हुए चलता था, जिसमें कुछ दम तो हो। यह प्रेम, प्रेम नहीं है, यह हिंसा का ही एक रूप है। पत्नी ने इस शेर को पीट–पीट कर चूहा बना दिया।

मैंने सुना है एक चुटकुला कि जंगल में जानवरों ने तय किया कि एक मैरिज ब्यूरो खोला जाए ताकि तय हो सके कि किसकी किससे शादी हो और ताकि ठीक से शादी हो और लोग सुखपूर्वक रह सकें, वरना बहुत लड़ाई चल रही थी हर परिवार में। तो एक बार मैरिजब्यूरो की जब मीटिंग चल रही थी, शेर की शादी होने वाली थी और अपने लिए उसने एक दुल्हन चुन ली थी एक शेरनी को। एक चूहा बार–बार आकर शेर के कान में फुसफुसाए कि हुजूर शादी मत करिए। शेर ने कहा कि क्यों न करूं? बार–बार वह फिर आ जाए कि विनती करता हूं मत करिए हुजूर शादी, पूछिए नहीं। शेर ने कहा मगर क्यों, सब लोग शादी करते हैं मैं क्यों न करूं? चूहे ने कहा फिर सुन लीजिए, शादी के पहले मैं भी एक शेर था।

आखिरी बात– अपने प्रेम को उर्ध्वगामी होने दो। श्रद्धा और भक्ति की ओर उठने दो। किसी ने ओशो के श्री चरणों में ये पंक्तियां अर्पित की हैं–

हे ओशो, मेरा ये तन तुम्हारा है, मेरा ये मन तुम्हारा है।
हे ओशो, मेरी ये जाँ तुम्हारी है, मेरा जीवन तुम्हारा है।।
है जाना गुरुवर ने मुझको, उबारा गुरुवर ने मुझको।
सराहा गुरुवर ने मुझको, संवारा गुरुवर ने मुझको।।
बसाया गुरुवर ने मुझको, तराशा गुरुवर ने मुझको।
निखारा गुरुवर ने मुझको, मुझे गुरुवर ने तारा है।।

13

भय, तनाव और चिंता

एक सज्जन ने लिखा है कि कल आपने तनाव के संबंध में थोड़ी चर्चा की थी। मैं भी हमेशा तनाव में रहता हूं, इससे कैसे छुटकारा हो?

जैसे अन्य प्रकार के एडिक्शन होते हैं, लत पड़ जाती है सिगरेट पीने की, शराब पीने की, तम्बाकू खाने की वैसे ही कुछ हमारे मेंटल एडिक्शन भी हैं। किसी को आदत पड़ गई है गुस्सा होने की, किसी को आदत पड़ गई है तनावग्रस्त रहने की, कारण भी नहीं पता किस कारण से, बस पड़ गई है। कोई नाराज है तो बस नाराज ही है, दिनभर नाराज ही होता रहता है। कोई भी जस्टीफाईड रीजन नहीं है, केवल एक पुरानी आदत। तो शारीरिक रूप से जब हम किसी चीज के प्रति निर्भर होते हैं और आदी हो जाते हैं तो वह तो सबको पता है कि एक आदमी शराब पी रहा, गुटखा खा रहा, उसके बिना रह ही नहीं सकता, इसी प्रकार मेंटल एडिक्शन भी हैं सूक्ष्म।

किसी को तनावग्रस्त रहने की आदत पड़ गई है वह आदतवश है। शुरूआत में कोई कारण रहे होंगे अब वह परिस्थिति भी बदल गई, सब कुछ बदल गया लेकिन उनकी अब एक मनस्थिति बन गई है फिक्स टेंशन में रहने की। किस बात का टेंशन है उनको खुद भी नहीं पता होगा। पूछ लो तो और तनाव बढ़ जाएगा कि किस बात का टेंशन है यह भी नहीं पता। निष्चित ही इससे छुटकारा संभव है, इस बात को समझ लें। यह एक ढांचा सबकॉन्शस माइण्ड में बैठ गया है और हम इसी को जिंदगी समझ रहे हैं कि जिंदगी बस ऐसी ही है।

चारों तरफ हम लोगों को देखते हैं चिंताग्रस्त, तनाव से भरे, दुखी। कोई छोटा बच्चा

बचपन से चारों तरफ देखता है खासकर माता–पिता और परिवार के लोगों का बहुत ज्यादा उसके ऊपर प्रभाव पड़ता है। बुजुर्ग जैसे हैं यह बच्चा भी बड़ा होकर लगभग वही कहानी दोहराएगा। अगर माता–पिता झगड़ालू थे तो यह बच्चा बड़ा होकर विवाह करके यह भी अपनी पत्नी से लड़ेगा, यह वही कहानी दोहराएगा। इसके मन में एक छाप बैठ गई है कि पति–पत्नी यानि आंतरिक दुश्मन। दिन–रात यह लड़ते ही रहें, हर चीज पर इनकी बहस हो, किसी बात पर कोई किसी से राजी न हो।

मुल्ला नसीरुद्दीन के तलाक का मुकदमा चल रहा था, कोर्ट में ही मियां–बीबी का झगड़ा हो गया। वकील कुछ पूछे और जब मुल्ला कुछ उत्तर दे तो पत्नी बीच में टोक दे। जज उसको बोले कि शांत रहो, चुप। पत्नी कुछ बोले तो मुल्ला उसकी बात बीच में काट दे, वहीं पर कलह शुरू हो गई जज के सामने ही। जज भी हैरान हुआ, उसने कहा कि तुम लोग कभी किसी बात पर आज तक सहमत हुए कि नहीं? पत्नी ने कहा कि हां, एक बार हुए थे। जज के भी कान खड़े हो गए और गौर से सुनने लगा क्योंकि उनको देखकर भरोसा तो नहीं आ रहा था।

पत्नी ने कहा कि एक बार हुए थे, रात दो बजे मकान में आग लग गई, सब तरफ लपटें ही लपटें, नसीरुद्दीन ने कहा कि इस खिड़की से कूद चलें बाहर, क्योंकि वही एक जगह थी जहां से निकल सकते थे। जब मेरे पति ने कहा कि इस खिड़की से बाहर निकल सकें तो मैंने पहले चारों तरफ देखा कि क्या और कुछ उपाय संभव है लेकिन वहां और कुछ संभव ही नहीं था तब मैंने कहा कि चलो ठीक है, निकल जाते हैं यहीं से। तो एक बार सहमत हुए थे बस। पैटर्न बन गया। अब इनके बच्चे देखेंगे कि माता–पिता कैसे जिंदगी जी रहे थे, बड़े होकर वह भी इस रोल को निभाएंगे। अब उनकी ऐसी धारणा बन गई है कि ऐसा ही जीवन है।

चारों तरफ तनावग्रस्त लोगों को देख–देख के हम भी उन्हीं जैसे हो जाते हैं। बच्चे बहुत नकलची होते हैं याद रखना, वह जो कुछ भी सीखते हैं नकल कर–कर के ही तो सीखते हैं, जिंदगी जीने की शैली भी नकल करके सीख जाते हैं। यह हमारे इम्प्रेशन गहरे अचेतन मन में पड़े हुए हैं, खूब सावधानी पूर्वक इससे छुटकारा पाया जा सकता है। सीधे–सीधे छुटकारा नहीं पाया जा सकता है तनाव से, आपको एक विपरीत धारणा बनानी है। भूल जाओ आप उसको जो अपने घर–परिवार में देखे, समाज में देखे।

स्मरण करो गौतमबुद्ध की मूर्ति शांत, स्मरण करो भगवान महावीर को फूल जैसे खिले हुए। ऐसे लोग भी दुनिया में हुए हैं। याद करो मीरा को नाचती हुई, गाती हुई, गुनगुनाती हुई तस्वीर, याद करो गुरुनानक देव जी को गीत गाते हुए, ऐसे भी लोग दुनिया में हुए हैं। याद करो ईसामसीह की जो लोग उनकी हत्या कर रहे थे उनको भी उन्होंने क्षमा कर दिया और उनके लिए भी प्रार्थना की कि हे प्रभु इनको माफ कर देना। कोई तनाव उनको पैदा नहीं हुआ, वह जैसे शांत पहले थे वैसे ही हमेशा रहे। उनकी याद करो, उनकी धारणा करो। तुम कल्पना करो, आंख बंद करके 'विजुअलाइज' करो कि यह मैं नहीं, गौतमबुद्ध की मूर्ति ही बैठी है। अपने चेहरे पर वही शांति, वही मुस्कुराहट, वही प्रसन्नता का भाव लाओ।

एक नई धारणा बैठा लो, पुरानी से कोई मतलब नहीं, क्योंकि उससे हम लड़ नहीं सकते, अगर हम लड़ने गए तो हार जाएंगे। वह तो आप ऑलरेडी कर ही रहे होंगे तनाव से

छुटकारा पाने की कोशिश, वह सही विधि नहीं है, उसमें कभी कोई सफल नहीं होगा। आप तो एक विपरीत धारणा करो कि मैं शांत, प्रफुल्लित, बहुत प्रेमपूर्ण इंसान हूं, कैसी भी परिस्थिति आए, तुम कल्पना में काल्पनिक परिस्थिति देख सकते हो जिसमें आप तनावग्रस्त हो जाते हैं, आप विजुआलाइज करें कि वैसी परिस्थिति है लेकिन मैं अभी भी शांत हूं। कम से कम कल्पना तो कर ही सकते हो। महीने-दो महीने करते-करते आप पाओगे कि एक दिन वास्तविक स्थिति भी वैसी आ जाएगी और आप शांत रहे आओगे, तनाव नहीं पकड़ेगा। यह विधि है तनावग्रस्त से छुटकारा पाने की। अब मुल्ला का लतीफा सुनकर हंसो, और तनाव को दूर भगाओ, जैसे मुल्ला ने लुटेरों को भगाया था।

'जब मैं रेगिस्तान में था तब मैंने खूंखार लुटेरों की पूरी फौज को भागने पर मजबूर कर दिया था'- मुल्ला ने लोगों को बताया। 'वो कैसे मुल्ला?'- लोगों ने हैरत से पूछा। 'बहुत आसानी से!'- मुल्ला बोला- 'मैं उन्हें देखते ही भाग लिया और वे मेरे पीछे दौड़ पड़े!'

अगला सवाल है, मेरी छः वर्षीय बेटी बहुत ही डरपोक है, मार्गदर्शन करें?

पहले हम ही बच्चों को भयभीत करते हैं, उनको डराते हैं, धमकाते हैं कंट्रोल करने के लिए और जब वे डर जाते हैं तब मुसीबत खड़ी हो जाती है। फिर हम कहते हैं कि यह कायर है, डरपोक है, साहसी नहीं है और माता-पिता ही वह लोग हैं जिन्होंने बच्चों का साहस नष्ट किया। माता-पिता को सिर्फ दो तरकीब आती हैं बच्चों को वश में करने की, या तो डराओ या तो फिर कुछ प्रलोभन दो, फियर आर ग्रीड, यह दो तरीके हैं। समाज के पास और देश के पास भी वही तरीके हैं फियर एण्ड ग्रीड। अगर नियम-कानून नहीं मानोगे तो सजा देंगे, जेल में बंद कर देंगे, अपमान करेंगे, समाज के नियमानुसार चलोगे तो पुरस्कार मिलेगा, भारत रत्न पा जाओगे वही दो तरीके हैं।

वही प्राचीन काल से धर्मगुरू करते आ रहे हैं। ईश्वर, नर्क और स्वर्ग इत्यादि की कल्पनाएं खड़ी करके। अगर यहां बच गए और हमारी बात नहीं मानी, अच्छे वकील करके केस जीत गए कोई बात नहीं, ऊपर बैठा है एक और जज देख रहा है, वहां से तो बच्चू नहीं बच सकते, वहां नर्क में बुरी यातना देगा। नर्क का भयानक वर्णन है शास्त्रों में कि क्या-क्या वहां होगा। और जो लोग धर्मगुरू की बात मानकर चलेंगे, नैतिक आचरण करेंगे, पुण्य करेंगे वे स्वर्ग जाएंगे फिर स्वर्ग का वर्णन कि वहां क्या-क्या होगा। लोभी आदमी फंस जाएगा, डरपोक आदमी फंस जाएगा। तो समाज डराने की कोशिश कर रहा है, नीति, नियम, कानून, संविधान डराने की कोशिश कर रहे हैं, माता-पिता डराने की कोशिश कर रहे हैं, धर्मगुरू डराने की कोशिश कर रहे हैं। जो बेचारे सचमुच में डर गए उनके लिए हम परेशान होते हैं कि डरपोक क्यों हैं। हमीं ने उनको ऐसा बनाया है। भयमुक्त कैसे हुआ जाए इस बात को समझें।

मैं थोड़ी सी बात मेडिकल साइंस की करनी चाहूंगा उसके बाद इसके उत्तर पर आऊंगा तब आपको समझ में आ जाएगा। हमारे अंदर एलर्जी की बीमारियां होती हैं वह कैसे होती हैं उसकी विधि पहले मैं आपको बताता हूं फिर भय वाली बात बताता हूं। कोई ऐसा पदार्थ, कोई

ऐसा केमिकल, खासकर कोई प्रोटीन होती है जो हमारे शरीर में प्रवेश करती है चाहे वह दवा के रूप में हो या औषधि हो, वैक्टीरिया, वायरस हो जिसको हमारा शरीर पहचान लेता है कि यह हमारे शरीर का हिस्सा नहीं है वह उसको मिटाने की कोशिश करता है, उससे दुष्मनी करता है। हमारे भीतर एक रक्षा यंत्र भी है इम्युनिटी इसको कहते हैं।

जो बाहरी तत्व प्रवेश किया उसको मेडिकल भाषा में कहते हैं ऐंटीजन और उसके खिलाफ लड़ने के लिए जो केमिकल्स तैयार होते हैं उनको बोलते हैं ऐंटीबॉडी। तो समझो कि एक प्रकार को युद्ध छिड़ जाता है ऐंटीबाडी और ऐंटीजन का। ऐंटीबॉडीज उनको नष्ट करने की कोशिश करेंगे, अगर जीत गए तो फिर हमको वह बीमारी नहीं होगी, अगर ऐंटीबॉडीज़ हार गई, ऐंटीजन ज्यादा मजबूत निकला, कि वैक्टीरिया ज्यादा ताकतवर था तो हमको फिर वह बीमारी हो जाएगी। अभी मलेरिया बीमारी फैल जाए तो सबको मलेरिया नहीं हो जाएगा, कुछ लोगों को हो जाएगा जिनके अंदर ऐंटीबॉडीज़ नहीं हैं।

एक बार कोई बीमारी हो जाएगी उस प्रोसेस में एंटीबॉडीज़ बननी शुरू हो जाएंगी उस कीटाणु के खिलाफ इसलिए जल्दी से वही बीमारी दुबारा नहीं होगी। एक बार आपको खांसी हो गई, फिर ठीक हो गई, अब आपको तुरंत महीने–दो महीने तक खांसी नहीं होगी क्योंकि अभी ऐंटीबॉडीज़ मौजूद हैं। कीटाणु आसपास घूम रहे हैं, हवा में आसपास मौजूद हैं, फेफड़ों में जा रहे हैं लेकिन अभी ऐंटीबॉडीज़ वहां पहले से ही लड़ने को बैठी हुई हैं, वह उसको परास्त कर देंगी। कुछ बीमारियां ऐसी हैं कि एक बार अगर ऐंटीबॉडीज़ बन गईं तो जिंदगी भर रहेंगी। चेचक की बीमारी, स्मॉलपाक्स अगर एक बार किसी को हो गई तो जिंदगी में कभी दुबारा नहीं हो सकती। उसके अंदर ऐंटीबॉडीज़ इतनी हाई क्वान्टिटी में रहेंगी कि जहां कहीं भी वह कीटाणु आया उन्होंने उसे धर दबोचा और तुरंत नष्ट कर दिया।

इसी प्रकार टीके का निर्माण हुआ इसमें उसी कीटाणु को उबालकर मार डाला जाता है टेम्प्रेचर से और फिर उसका इंजेक्शन बनाते हैं। चाहे वह स्मॉलपाक्स का हो, चाहे डिप्थीरिया हो, कि टिटनस हो जो भी टीके बनते हैं वह इस प्रकार से बनते हैं। वही कीटाणु जिससे बीमारी होती है उसको मारकर फिर उसका टीका बना देते हैं। वह चूंकि मरा हुआ है इसलिए उससे इन्फेक्शन तो हो नहीं सकता, वह रिप्रोडक्शन नहीं कर सकता, उसकी संतति नहीं हो सकती किन्तु उसकी प्रोटीन्स तो वही हैं जो जिंदा रहने में थीं, केमिकल स्ट्रक्चर उसका वही का वही है तो हमारा शरीर उन केमिकल के खिलाफ ऐंटीबॉडीज़ बना लेगा। क्योंकि वास्तविक कीटाणु तो मरा हुआ है इसलिए रोग तो हो नहीं सकता लेकिन ऐंटीबॉडीज़ बन गईं।

अब जब वास्तविक इन्फेक्शन फैलेगा तो हमारे शरीर में ऐंटीबॉडीज़ पहले से ही मौजूद हैं जो कि उनसे लड़ेंगी, बीमारी से हमारी रक्षा करेंगी। यह हमारा रक्षा तंत्र है इम्यून सिस्टम। कुछ एंटीबाडीज ऐसी हैं जो साल भर रहती हैं, जैसे टायफाइड। अगर एक बार टायफाइड का टीका लग गया तो एक साल तक प्रोटेक्टेड हैं फिर धीरे–धीरे एंटीबॉडीज का लैवल कम हो जाएगा, दुबारा चांस है कि टायफायड हो जाए। इसलिए हर साल रिपीट करना पड़ेगा। ऐसे ही टिटनस अगर एक बार लग जाए तो पाच साल तक उसका असर रहता है, पांच साल के बाद रिपीट करना पड़ेगा। यह हमारी साधारण बीमारी को रोकने के लिए उपाय हैं।

अब इसका एक दूसरा रूप है जिसको बोलते हैं ओव्हर प्रोडक्शन ऑफ ऐंटीबॉडीज़, जरूरत से ज्यादा, अनावश्यक। इतनी ज्यादा ऐंटीबॉडीज़ पैदा हो गईं उससे लड़ने के लिए जितनी जरूरत नहीं थीं। जैसे कोई छोटी सी पिस्तौल लेकर लड़ने आए और हमने उस पर मिसाइल चलाना शुरू कर दिया, परमाणु बम फेंकने लगे तब यह खतरनाक हो गया। जिसको बोलते हैं कि रक्षक से भक्षक हो गए। यह जो ज्यादा मात्रा में ऐंटीबॉडीज़ थीं, वह खुद ही अपने आप में उपद्रव का कारण बन गईं।

जैसे पाकिस्तान में हर दो–चार साल में सेना कब्जा कर लेती है, उसी प्रधानमंत्री और राष्ट्रपति ने सेना निर्मित की थी और अचानक सेना ही रिवॉल्यूशन कर देती है, प्रेसीडेंट को भागना पड़ता है, पकड़ा गया तो मारा जाता है और सेना कब्जा कर लेती है पूरे देश में। करीब–करीब ऐसी स्थिति हमारे शरीर में भी बनती है। यह फिजिकल घटना है, बाद में मैं मेंटल चीज पर आऊंगा, वहां भी कुछ ऐसा ही होता है। यह ऐंटीबॉडीज़ का बहुत ज्यादा बन जाना भी नुकसानदायक है।

समझो पेंसिलीन का इंजेक्शन दे रहे हैं और ऐंटीबॉडीज़ इतनी ज्यादा बन गईं कि उन ऐंटीबॉडीज़ के रिएक्शन की वजह से ही मरीज मर गया। इसको पेंसिलीन ने नहीं मारा, ऐंटीबॉडीज़ ने मारा। पेंसिलीन तो एक कीटाणु से निकला छोटा सा फंगस, फफूंद से निकला पदार्थ है, जो उससे लड़ने वाले थे उन्होंने ऐसा हमला किया कि मरीज उसी में समाप्त हो गया। इसको बोलते हैं हाइपरसेंसिटिविटी। दूसरी सामान्य भाषा में एलर्जिक रिएक्शन। इसी के और दूसरे रूप होते हैं, समझो सर्दी–खांसी का एक कीटाणु है उसने गले में इन्फेक्शन किया। अब संयोग की बात उस कीटाणु की प्रोटीन और हमारी हड्डियों की प्रोटीन और किडनी की प्रोटीन और मस्तिष्क की प्रोटीन मिलती–जुलती थीं वह जो खांसी वाला कीटाणु है।

जैसी रचना उसकी है वैसी ही ज्वाइंट्स में प्रोटीन्स हैं, वैसी ही किडनी में और ब्रेन में भी हैं। तो उसके खिलाफ जो ऐंटीबॉडीज़ बनीं। कीटाणु को मारने के लिए अब वे ज्वाइंट्स के सेल को नष्ट करने लगीं। वह तो केवल केमिकल स्ट्रक्चर पहचानती हैं, उनको थोडे ही पता है कि यह कौन हैं, वह समझ रही हैं कि यह भी दश्मन हैं। ऐसे में गठिया का रोग हो जाएगा। यह हाइपरसेंस्टिविटी रिएक्शन है। मारना था उसको खांसी के कीटाणु को लेकिन सेना इतनी मजबूत बन गई कि खांसी तो गायब ही हो गई उससे मिलता–जुलता जो दिखाई दिया उसी को मारने लगे, अब जोड़ों में गठिया का रोग हो जाएगा।

इसको बोलते हैं ऑटो इम्यून डिसऑर्डर, ऑटो यानि खुद के खिलाफ सेना लड़ रही है। अगर किडनी में यही हो गया तो किडनी नष्ट हो जाएगी, यह ऐंटीबॉडीज़ उनको नष्ट कर देंगी। अगर ब्रेन में यही हो गया तो कोरिया नाम की बीमारी हो जाएगी। यह कन्फ्यूजन की वजह से हो रहा है, ऐंटीबॉडीज़ पहचान नहीं पा रही हैं। वह अपने ही शरीर के सेल्स को शत्रु समझ रही हैं, शक्ल–सूरत उनकी मिलती–जुलती है इसलिए।

इंदिरा गांधी को मारा एक सरदार ने और पूरे देश के सरदारों की पिटाई शुरू हो गई। यह तर्कयुक्त नहीं है। सब सरदार दोषी नहीं हैं। जैसे आप हैं, हम हैं, ऐसे ही सब सरदार हैं। उनकी बस शकल–सूरत मिलती–जुलती है, पगड़ी समान है, बस। पूरा देश पागल हो गया,

ठीक ऐसे ही पागलपन हमारे शरीर के अंदर होता है उस कीटाणु से मिलती–जुलती सेल्स को नष्ट करने लगते हैं और बड़ी खतरनाक बीमारियां पैदा हो जाती हैं जिनको ऑटो इम्यून डिसऑर्डर कहते हैं। जरूरत से ज्यादा रक्षा का उपाय भक्षक बन गया।

इसका इलाज कैसे करते हैं, इन एलर्जिक बीमारियों का इलाज प्रोटीन्स की सेंसिटिविटी को पता लगाकर कि किससे एलर्जी है उसके द्वारा किया जाता है। उस चीज के इंजेक्शन दिए जाते हैं बहुत छोटी–छोटी मात्रा में डायलूट करके। समझो किसी को धूल से एलर्जी है तो धूल में जो तत्व हैं उनको बहुत डायलूट करके बहुत कम मात्रा में डायलूट करके इंजेक्ट किया जाएगा। फिर क्रमशः थोड़ी मात्रा और बढ़ाएंगे दूसरे दिन, फिर चार दिन बाद, फिर सप्ताह बाद मात्रा बढ़ाते जाएंगे, बढ़ाते जाएंगे इस बीच में शरीर इसके प्रति ऐडजेस्ट होता जाएगा और फिर एक दिन ऐसा आएगा कि जिस व्यक्ति को धूल से दमा की बीमारी हो जाती थी अब उसको अस्थमा के अटैक नहीं आएंगे।

इसको बोलते हैं डी–सेंसिटिडाइजेशन। वह दमा का अटैक ओव्हर सेंसिटीविटी रिएक्शन के कारण पड़ रहा था, जैसे ही धूल का कण सांस में गया शरीर ने ऐसी लड़ाई कि कण से कि पूरा चोक कर दिया सांस की नली को और उतनी ही सूजन आ गई सांस में। इतना म्यूकस सीक्रेशन कर दिया कि वह कण चिपक जाए। अभी एक धूल का कण गया था और इतना म्यूकस पैदा कर दिया कि वह अपने आप में ही एक समस्या बन गया, सांस लेते ही नहीं बन रही, सांस की नली का डायमीटर कम गया। यह था ओव्हर सेंसिटिविटी रिएक्शन। अब इसको धूल के कण के छोटे–छोटे इंजेक्शन दे–दे कर धीरे–धीरे डोज बढ़ाते–बढ़ाते दो–तीन महीने में एक स्थिति ऐसी आ जाएगी कि वह डी–सेंसिटिडायजेशन हो जाएगा। किसी को किसी फूल के परागकण से एलर्जी हो सकती है। मार्च और अप्रैल के महीने में जब फूल खिलते हैं तब बहुत लोगों को दमा के अटैक पड़ते हैं। वह किसी विशेश प्रकार के फूल से उसके परागकण हवा में घूम रहे हैं और सांस के भीतर जा रहे हैं, उसका हाइपर सेंस्टिविटी रिएक्शन हो रहा है। बसंत कई लोगों के जीवन में बड़ी खिजां ले आती है, कई लोग मरेंगे सीवियर अस्थमा के अटैक से। बसंत भी प्राणलेवा बन जाएगी ओव्हर सेंस्टिविटी रिएक्शन की वजह से। इनको अगर डी–सेंस्टिडाइज करें वही पराग का कण खूब छोटी मात्रा में दिया जाएगा, धीरे–धीरे डोज बढ़ाते जाएंगे तो दो–तीन महीने में एक स्थिति ऐसी आएगी कि अब वह सेंस्टिविटी खत्म हो गई।

यह विधि इसलिए समझाई है क्योंकि कुछ ठीक ऐसा ही मन के तल पर होता है। हमने डराने का उपयोग किया था कि बच्चा जब अंधेरे में जा रहा था तो हमने कहा कि नहीं जाओ वहां पर बाबा बैठा है पकड़कर ले जाएगा। अब बच्चे को पता नहीं है कि बाबा मतलब क्या। अरे वहां पर राक्षस रहता है। हम चाह रहे थे कि बच्चा अंधेरे में न जाए कहीं गिर न जाए, टकरा न जाए, चोट न लग जाए हम तो उसको बचाना चाह रहे थे, रक्षा का इंतजाम था कि बेटा वहां नहीं जाना, हौआ पकड़ लेगा। अब हौआ क्या होता है कोई आइडिया नहीं है लेकिन उसकी मां ने जिस प्रकार से इस शब्द का उपयोग किया उसके चेहरे के हाव–भाव देखकर उसको लगा कि बहुत ही खतरनाक चीज होगी।

उसने अपने मन में एक बहुत खतरनाक धारणा बना ली कि बाहर अंधेरे में हौआ रहता है वह पकड़ लेगा। बच्चा चीख मारकर भीतर आ गया, उस समय तो ठीक है, मां का काम चल गया, वह जो चाह रहीं थीं कि अंधेरे में बच्चा न जाए वह तो रक्षा करने की कोशिश कर रहीं थीं, अगर बच्चा इस बात के प्रति ओव्हर सेंस्टिविटी रिएक्शन करने लगा, अब वह बड़ा होकर दस साल का हो गया अब मुसीबत खड़ी। अब वह कह रहा है कि बाहर हम अकेले नहीं जाएंगे, मम्मी साथ चलो। अब लगता है कि कैसा लड़का है यह, क्यों इतना डरता है, हम भूल गए कि हम हीं ने डराया था, हमीं ने उसके दिमाग में हौआ बैठाया था, अब वह बेचारा क्या करे, उसके सबकांसस में यह सब बैठा हुआ है कि अकेले कहीं नहीं जाना रात में। हाथ पकड़ो तब जाएंगे।

कुछ बच्चे बहुत परेशान कर देते हैं, छोटी–छोटी चीज से हमने डरा दिया उनको वह डर गए। नार्मली तो होता है कि बड़े होते–होते वह रिकव्हर हो जाएंगे इस बात को भूल जाएंगे, माता–पिता से भरोसा उठ जाएगा कि इनकी कई बातें झूठीं थीं, अन्य बातें भी झूठ निकलीं, यह भी झूठ निकली। लेकिन दस परसेंट बच्चे इस चक्कर में फंस जाएंगे, माता–पिता पर उनकी बड़ी श्रद्धा है। जो–जो उन्होंने कहा था वह सब उनके भीतर जम गया, बाप ने डांटा था और कहा था उल्लू के पट्ठे, गधे कहीं के, किसी काम के नहीं, अक्ल नाम की तो चीज ही नहीं अब वह लड़के ने इस बात को पकड़ लिया कि हम तो गधे हैं, हम तो उल्लू हैं, हमसे कुछ नहीं होने वाला।

अब जिंदगी भर उससे कुछ नहीं होने वाला यह पिताजी ने कहा था। फिर स्कूल में टीचर ने भी कहा था, जिन–जिन का उसके मन में आदर था उन्होंने यह निगेटिव सजेशन उसको दिया बार–बार कि तुम नालायक हो, तुम उल्लू हो, तुमसे कुछ नहीं होगा, जिंदगी में तुम कुछ नहीं कर पाओगे बच्चे के अनकांसस माइण्ड में यह बात बैठ गई, अब वह जिंदगी भर असफल रहेगा। तो जो चीज उसको उकसाने के लिए कही गई थी, उसकी रक्षा के लिए वही चीज हाइपर सेंस्टिविटी रिएक्शन में चली गई। अंधेरे से डराया था तो अब वह अंधेरे में पैर ही नहीं रखता। मैं जानता हूं तीन–चार बच्चों को जो कि अब बड़े हो गए हैं।

एक महिला तो चालीस साल की है, लाइट बंद करके नहीं सो सकती, हद हो गई। रात को लाइट जलाकर ही सोएगी। जब उसकी शादी हो गई तो उसके पास भारी समस्या हो गई उसकी ससुराल में, लाइट बंद कर ही नहीं सकते नहीं तो उसकी चीख निकल जाएगी। उसके हसबैंड को बामुश्किल उसके साथ एडजेस्ट करना पड़ा, लाइट जलाकर सोना कोई हंसी–खेल नहीं है। अंधेरे में अच्छी नींद आती है मगर नहीं, अगर संयोग से कभी दो मिनट के लिए भी लाइट चली जाए तो वह तुरंत उठकर बैठ जाती है, पता नहीं उसको नींद में कैसे पता चल जाता है कि लाइट चली गई है। टार्च भी अपने पास में ही रखकर सोती है कि क्या पता, रात को बिजली चली जाए तो। हमारा महान देश भारत जहां बिजली जाती ही रहती है।

कल मैं एक रिपोर्ट पढ़ रहा था कि भारत में सबसे ज्यादा खुश लोग रहते हैं और खासकर बिहार के लोग सबसे ज्यादा प्रसन्न हैं। कारण है कि दिन भर में कई बार सेलीब्रेशन के मौके आते हैं। दस–बीस बार लोग चिल्लाते हैं कि अरे बिजली आ गई, इतने खुशी के

अवसर दुनिया में कहीं नहीं आते। भय का भूत लोगों के भीतर बैठाया गया है परिवार के द्वारा समाज के द्वारा, धर्मगुरुओं के द्वारा, कानून, संविधान, पुलिस सबके द्वारा। फिर यह भय दस परसेंट जो कमजोर किस्म के लोग हैं वे हाइपर सेंसिटिव हो जाते हैं।

एक सज्जन हैं, वह पुलिस से डरते थे जो कि ओशो के पहचान के थे और साथ में ही प्रोफेसर थे। उनको खाकी कपड़ा पहना हुआ कोई भी व्यक्ति मिल जाए तो उनके हाथ–पैर कांपने लगते थे और वह दूसरी गली में चले जाते, जहां जाना ही नहीं था वहां पहुंच जाते। बड़े पढ़े–लिखे थे जो कि इंगलैंड में पढ़ाई की थी और प्रोफेसर थे युनिवर्सिटी में क्योंकि यह बात सबको पता थी इसलिए बड़ी हास्यास्पद स्थिति बन जाती। वह कहते कि नहीं, हमको पकड़ लेंगे। भाई आपने किया क्या है कि आपको पकड़ लेंगे, कोई छोटी सी बात कभी हुई थी जब वह छात्र थे तब की बात है कुछ छिट–पुट बात। ऐसी बात भी नहीं थी कि उसमें कोई गिरफ्तार होता।

जब आठवीं क्लास में थे तो कुछ उन्होंने गलत किया था तो किसी ने डरा दिया कि अरे, इसमें तो ऐरेस्ट हो जाओगे। कोई विशेष बात नहीं थी, कोई अपराध नहीं था लेकिन वे इतना उनके मन में गहरा बैठ गया था कि ऐरेस्ट हो जाएंगे, अगर पता लग गया तो पकड़ लेंगे यह लोग, छोड़ेंगे नहीं। अब माता–पिता और टीचर ने जो कहा था वह इसलिए कि भविष्य में कोई गलती न करे लेकिन वह बात उनके जेहन में ऐसी बैठ गई कि पुलिस वालों को देखते ही उनके हाथ–पैर कांपने लगते। कितनी बार उनका ऐक्सीडेंट हुआ या होते–होते बचा, कार चलाते हुए जब ट्रेफिक पुलिस वाला दिख जाता तो उनके होश गायब हो जाते। डर कि पुलिस वाले पकड़ लेंगे।

पच्चीस–तीस साल पहले तुमने क्या किया था जो कि कोई खास बात भी नहीं थी, यूं ही समझाने के लिए, डराने के लिए कह दिया था कि पुलिस पकड़ लेगी। यह आप समझे, हाइपर सेंसिटिविटी का मामला, जरूरत से ज्यादा प्रोटेक्शन। लेकिन यह जरूरत से ज्यादा प्रोटेक्शन इनके प्राण के लिए घातक हो गया, यह तो अपनी जिंदगी भी ठीक से नहीं जी सकते। रात को कोई जीप निकलती सड़क से हॉर्न बजता तो वह उठकर बैठ जाते कि पुलिस वाले आ गए, कि जीना हराम। उपाय क्या है, वही जो मैंने शारीरिक रूप से उपाय कहा वही उपाय इसका भी है, डी–सेंसिटिडायजेशन। छोटी–छोटी मात्रा में शुरूआत करनी होगी, कल्पना से शुरू करनी होगी, यथार्थ से नहीं।

ओशो ने इनके साथ प्रयोग किया कि आप कल्पना करो, क्योंकि आपको पक्का पता है कि कमरे में कोई पुलिस नहीं है इसलिए द्वार–दरवाजे बंद करके आप कल्पना करो कि पुलिस वाला आ रहा है और आप उसके सामने हो और वह बगल से निकल गया और आप भी चले जा रहे हो, कोई दिक्कत नहीं है। अब तुमको तो पता है कि कोई पुलिस वाला नहीं है। उन्होंने कहा कि हां, यह तो कर सकते हैं। तो जब उन्होंने शुरू किया तो जैसे ही पुलिस वाले की कल्पना करते तो वह घबरा जाते लेकिन तीन–चार दिन बाद इस कल्पना को वह देखते हुए भी शांत रहने लगे।

कई दिन बाद उन्होंने मुस्कुराते हुए आंख खोली और कहा कि आज मैं बिल्कुल समझ गया। वह काल्पनिक पुलिस वाला आया और मैंने उससे हाथ भी मिलाया। मैंने अपना

परिचय बताया कि मैं फलां–फलां प्रोफेसर डॉक्टर शर्मा हूं। ओशो ने कहा कि अब उससे दोस्ती कर लो, क्योंकि परिचय तो हो ही गया, अब उसके साथ–साथ चलो, वह कहां जा रहा है, क्या कर रहा है कल्पना में ही। कोई रियलिटी तो अभी है नहीं, यह तो मन का खेल है इसलिए फिर डर नहीं लगता क्योंकि हमको पता है कि हम ही तो सोच रहे हैं। अगर ज्यादा डर गए तो बंद कर देंगे सोचना, कोई सही–सही पुलिस वाला तो है नहीं। फिर पंद्रह दिन के अंदर वह अपने कार में भी बैठा लिए पुलिस वाले को। कल्पना में ट्रैफिक पुलिस वाले से भी उन्होंने दोस्ती कर ली।

वह सिगरेट पीने का आदी था तो चूंकि यह भी सिगरेट पीते थे तो उसको भी पिलाने लगे, वह भी खुश हो गया कल्पना में। तो पंद्रह–बीस दिन के अंदर कल्पना में इनके सारे डर निकल गए। फिर ओशो ने कहा कि अब अगला एक झूठे पुलिस वाले से अभी रियल नहीं, तो एक मित्र थे कालेज में जो कि वह भी प्रोफेसर थे उनसे कहा गया कि आप पुलिस की ड्रेस पहनकर आइए। अब तो उनको पता था कि यह तो अपने दोस्त हैं, उन्हीं का असिस्टेंट लेक्चरर है, कोई सचमुच का पुलिस वाला तो है नहीं तो फिर एक नकली पुलिस वाले के प्रति मिलना, उससे बातचीत करना आठ–दस दिन में एडजस्ट हो गया।

फिर ओशो ने कहा कि अब थोड़ा डोज और बढ़ाते हैं, अब किसी सचमुच के सिपाही को फुसलाकर लाया गया कि भाई इनसे तुम्हें मिलना है, प्रेमपूर्वक बात करनी है। इनके साथ चाय पीनी है, सिगरेट पीनी है जो कि तुम खुद इनको पिलाना, वह पुलिस वाले को जाकर पैसे दिए कि तुम ऐसा–ऐसा करना क्योंकि इनका डर निकालना है। जब सचमुच का पुलिस वाला आया तो एक बार तो वह फिर से सकपका गए लेकिन जब उसने अच्छी–अच्छी बातें की, इनको चाय पिलाई, सिगरेट पिलाया और कहा कि कभी घर आइए तो बैठकर बात करेंगे, इससे उनको कुछ अच्छा लगा।

फिर दो–चार दिन उस पुलिस वाले से मिलना–जुलना चलता रहा, उसके घर भी यह गए। जिस दिन घर गए उस दिन समझो बहुत बड़ी सफलता हो गई कि यह खुद ही पुलिस वाले के पास जा रहे हैं। उसकी बाइक में बैठकर बाजार भी गए, उस दिन इनके अंदर काफी साहस आ गया कि मैं जैसा समझता था पुलिस वालों को यह लोग तो वैसे नहीं हैं, यार वह भी तो इंसान हैं हमारे जैसे ही। ठीक है पुलिस में नौकरी कर रहे हैं तो क्या हुआ, वह भी तो इंसान ही हैं। अब इनकी धारणा चेंज हुई, वह जो पुलिस वालों का डर उनके मन में बैठा हुआ था अब वैसा नहीं था, अब उनको भी लगने लगा कि यह पुलिस तो समाज की भलाई के लिए है, एक नई बात इनके भीतर बैठी।

जैसे उस छोटे बच्चे के मन में जो बैठ गया था उसके निकलने में वक्त लगा कोई दो–ढाई महीने खर्च हो गए। लगभग तीन महीने पूरे होते–होते यह स्थिति आई कि फिर वह नॉर्मल व्यवहार करने लगे कि ठीक है, राह से निकलेंगे तो ट्रेफिक वाले भी मिलेंगे, पुलिस वाले भी मिलेंगे और डर खत्म हो गया। यह है डी–सेंसिटिडायजेशन प्रोसेस। बहुत छोटे डोज से शुरू किया, धीरे–धीरे बढ़ाया और शुरू किया हमेशा कल्पना से क्योंकि हमको पक्का पता है कि इस कल्पना के मालिक हम ही हैं, हम जब चाहें इसको रोक सकते हैं इसलिए हम निडर होकर ऐसे

कर सकते हैं। जब कल्पना में सफल हो जाएं तो उसके बाद वास्तविकता में वैसा करें। धीरे–धीरे कदम बढ़ाना, धीरे–धीरे डर समाप्त हो जाएगा। यह है डी–सेंसिटिडायजेशन प्रोसेस।

यहां पर एक साइकैट्रिस्ट भी बैठे हुए हैं। कल मुलाकात हुई थी उनसे जो कि सम्मोहन सीखने आए हैं। मैंने कहा कि आपकी प्रैक्टिस में यह बहुत काम आएगा। बहुत से मरीज हैं फोबिया के मरीज जिनको कहते हैं, अनावश्यक भय जिनके भीतर बैठे हैं और मेडिकल ट्रीटमेंट से जिनको कोई लाभ नहीं होता। हो भी नहीं सकता, ऐसी कोई भी मेडिसिन अभी तक नहीं बनी है जो भय को निकाल सकें, यह डी–सेंसिटिडायजेशन प्रोसेस जिसमें लगभग दो–तीन महीने लगेंगे जिसकी शरुआत कल्पना से होगी। धीरे–धीरे कल्पना को बढ़ाएंगे, फिर थोड़ा सा वास्तविकता पर आएंगे और फिर धीरे–धीरे पूरी वास्तविकता में ले आएंगे।

यह वही प्रोसेस हुई जैसे एलर्जी को दूर करने के लिए ट्रीटमेंट किया जाता है। वह जो ऐंटीजन दुश्मन था उसको हम धीरे–धीरे ले आए, क्रमशः हम उसके प्रति रेजिस्टेंट होते गए। आपको आपकी बेटी के साथ इस प्रकार की प्रोसेस करनी होगी।

किसी शायर ने लिखा है–

जो मेरे आगे–आगे चल रहा है
मेरे पीछे कभी पागल रहा है
बिछड़ना चाहता है अब उसी से
ये दिल जिसके लिये बेकल रहा है
भले ही ख़ाक उड़ती है यहां अब
ये मैदान कभी जलथल रहा है
जिसे था नाज़ अपनी शीशगी पर
वही अब पत्थरों में ढ़ल रहा है
यहां फूलों भरे भी रास्ते हैं
तो क्यूं तू पत्थरों पर चल रहा है
अब उसकी मर्ज़ी आये या न आये
दिया दहलीज़ पर तो जल रहा है
मुझे पत्थर बनाकर वो जादूगर
सुना है हाथ अपने मल रहा है
यहां यूं ही नहीं वहशत का आलम
हमार शह्र भी जंगल रहा है

शायर ने ठीक ही लिखा है। हम सब जंगलों के वासी रहे हैं। लाखों साल तक पाषाण युग में बड़े खतरों में जिए हैं। वहशत का आलम बेवजह नहीं है। गहरे अचेतन में भय समाया हुआ है। यद्यपि सारी बाहरी परिस्थिति बदल चुकी है। अब भीतरी मनस्थिति परिवर्तन का वक्त आ गया है। वह मुमकिन है। आसानी है। धन्यवाद। शुभ रात्रि।

14

जीवन की पकड़, मौत का भय

पहला सवाल है, जीवन को पकड़कर जिएं या साक्षीभाव से?

मुझसे पूछने की जरूरत नहीं है, आप पकड़कर देख लें। अगर पकड़ में आता हो पकड़ लें, आज तक कोई पकड़ नहीं पाया। और ऐसा नहीं सोचना कि हम साधारण, कमजोर लोग हैं इसलिए नहीं पकड़ पाए, बड़े–बड़े हिटलर और सिकंदर भी नहीं पकड़ पाए। यह काम आकाश को मुट्ठी में बंद करने जैसा है। जब हाथ खुला था तब थोड़ा–बहुत आकाश था भी लेकिन मुट्ठी बांधते ही वह भी आकाश से निकल गया। ठीक ऐसा ही जीवन है, कुछ पकड़ में नहीं आता। जितना ही पकड़ने की कोशिश करो उतना ही फिसलता है।

किसी भी चीज को पकड़कर देखो हाथ से फिसल जाता है जो–जो महत्त्वपूर्ण है। हां, कचड़ा–कूड़ा बटोर लोगे वह ठीक है। कोई धन को पकड़ेगा तो धन जरूर इकट्ठा हो जाएगा लेकिन अगर प्रेम को पकड़ोगे तो तुम्हारा प्रेम फांसी बन जाएगा। और प्रेमपात्र भाग खड़ा होगा। जो महत्वपूर्ण है उसको नहीं पकड़ सकते हो। सिर्फ कचड़ा–कूड़ा ही बटोर सकते हो। और वह कचड़ा–कूड़ा भी सिर्फ धोखा ही देता है कि तुमने पकड़ लिया।

सिकंदर ने अपने जमाने में जितनी दुनिया ज्ञात थी उसको सबको जीत लिया था, विश्वविजेता हो गया था। क्या कुछ खबर है उनकी कि आजकल कहां हैं हिटलर? जिन्होंने पूरी दुनिया पकड़ ली थी वह कहां गए? सिकंदर की जब मृत्यु हुई तो उसने कहा कि अर्थी के बाहर मेरे हाथ लटके रहने देना ताकि लोग देख लें कि सिकंदर भी भिखारी की तरह खाली हाथ जा रहा है। राजा और रंक में कोई भेद नहीं रह जाता। इसका मतलब बीच में हम भ्रम में ही रहे, भ्रांति में ही रहे कि हम कुछ पकड़े हुए हैं, हमने कुछ पा लिया है। कभी भी कुछ पकड़ में

नहीं था, केवल एक सपना था। लेकिन सिकंदर गलती में है कि लोग देख लेंगे उसके खाली हाथ। लोगों को अपने खाली हाथ नहीं दिख रहे, उसके कौन देखेगा?

तुम पहले गौर से अपने हाथ देख लो कि तुमने जो पकड़ा है क्या वह वास्तव में पकड़ में है? अचानक तुम पाओगे कि साक्षीभाव घटित होने लगा। जागरूक होकर देखोगे तो तुम साक्षी हो जाओगे। वही एक मात्र जीवन जीने का सम्यक तरीका है, वही था और आगे भी रहेगा। इसके अलावा न कोई उपाय पहले था, न आज है और न ही भविष्य में कभी होगा। जो मैं कह रहा हूं कुछ भी मानने की जरूरत नहीं है, आप खुद टटोलना, अपने अनुभव को देखना।

एक दिन आप बच्चे थे, बचपन को पकड़ने की चाहत रही होगी, कहां गया वह बचपन, युवा हो गए। जवानी हाथ से खिसक रही है, प्रौढ़ावस्था आने लगी, क्या इस युवावस्था को कोई पकड़ सकता है। बाल डाई करवाने से और नकली दांत लगवाने से कोई युवा नहीं हो जाता है, जो एक दिन गया सो गया, दिन क्या, एक क्षण भी गया सो गया फिर वह वापिस नहीं लौटता, जो बीत गया सो बीत गया, सदा–सदा के लिए बीत गया, अब वह कभी नहीं लौटेगा।

सब चीजें हाथ से खिसकी जा रही हैं और फिर भी हम भ्रांति में हैं कि हमारी पकड़ में कुछ है। अपने शरीर पर अपना वश नहीं है, एक सांस भी हम अपनी मर्जी से नहीं ले सकते, जब मौत सामने खड़ी होगी तो हम एक सांस भी अपनी मर्जी से न ले सकेंगे। जिंदगीभर हम धोखे में थे कि हम सांस ले रहे हैं, हम सांस नहीं ले रहे हैं, सांस हमें ले रही है। जब तक ले रही है तो ले रही है, जब नहीं लेगी तो नहीं लेगी।

क्या आप सोच रहे हो कि शरीर में खून को आप दौड़ा रहे हो, आप हृदय को धड़का रहे हो? किस चीज पर पकड़ है। जिस दिन यह हृदय नहीं धड़केगा सो नहीं धड़केगा, बात खत्म। हम सुबह कहते हैं कि मैं उठ आया, जैसे उठना हमारे हाथ में हो। कितने लोग हैं जो रात को समाप्त हो जाते हैं सुबह नहीं उठते। अगर उनके हाथ में था तो उठ जाते। हम धोखे में रहे इतने दिनों तक कि यह सब हमारे हाथ में है। कर्ताभाव बड़े से बड़ा भ्रम है। और पकड़ का मतलब है कर्ताभाव।

आपने पूछा है कि जीवन को पकड़कर जिएं कि साक्षीभाव में जिएं? पकड़ने शब्द के कर्ताभाव को अगर आप रिप्लेस कर दीजिए। अर्थात् मैं कर रहा हूं, जहां ऐसी भावना है, साक्षीभाव, कि मैं केवल द्रष्टा हूं, मैं केवल देख रहा हूं, जान रहा हूं कि चीजें ऐसी हो रही हैं, यह रहस्य अज्ञात है, कैसे हो रहे हैं, कौन कर रहा है। तब एक बात पक्की है कि हम इसको करने वाले नहीं हैं। ये हमारा धोखा ही है कि हम कर रहे हैं। छोटी सी चीज ही ले लो, हम कहते हैं कि मैं सो गया, किसी दिन आप सोने का प्रयास करके देखो और आप पाओगे कि आज नींद आनी मुश्किल हो गई।

आपने अगर कोशिश की तो फिर वह चीज आपके हाथ से गई। आप नींद को पकड़ने

की कोशिश करो और नींद बिल्कुल फिसल जाएगी, नींद आनी मुश्किल हो जाएगी। हमारे हाथ में कुछ भी नहीं है, चीजें सब नदी की तरह बह रहीं हैं। हम केवल साक्षी होकर, द्रष्टा होकर देख सकते हैं कि नदी प्रवाहित हो रही है। न हम इसकी दिशा बदल सकते, न हम इसको बहा रहे हैं, न हम इसको रोक सकते, हम कुछ भी नहीं कर सकते। जीवन की नदी बही जा रही है।

हम छोटे से तिनके हैं इस बड़ी नदी में। ये नदी न तो हमसे पूछकर चल रही, न हमारी सलाह मांग रही और न हीं हमारे कहने से चल रही, उसे हमारे बारे में पता भी नहीं है। हमारे जैसे सात अरब मनुष्य इस धरती पर हैं और धरती को किसी के बारे में नहीं पता है। ऐसे खरबों-खरबों लोग रह चुके, न जाने कितनी बार जमीन उलट-पलट चुकी और सब मिट्टी में समा गए।

अभी जहां रेगिस्तान है अरब देशों में वहां नीचे पेट्रोल है। पता है पेट्रोल कैसे बनता है, हमारे जैसे हीं मनुष्य रहे होंगे वहां उन्हीं के फैट्स से पेट्रोल बनता है। जब वह जमीन के दस-पांच किलोमीटर नीचे दब जाते हैं तो उसी से कई सालों बाद पेट्रोल निर्मित हो जाता है। आज जहां रेगिस्तान है कभी वहां सघन शहर रहे होंगे करोड़ों की आबादी वाले। अब पांच किलोमीटर नीचे वे कैसे सब के सब पहुंच गए।

कभी कोयलों की खदान में जाकर देखना, परत दर परत, पता चलेगा दो किलोमीटर नीचे एक परत जमी है मोटी कोयले की, फिर उसके एक किलोमीटर नीचे और एक परत है, उसके और एक किलोमीटर नीचे एक और परत है। ये कोयला कैसे बना, कभी सघन जंगल थे, बड़े घने जंगल रहे होंगे। फिर भूकंप आया होगा कि ज्वालामुखी फटा होगा। ठीक-ठीक तो नहीं पता लेकिन जो नीचे कोयला है वह कभी जंगल रहा होगा। वह जो लकड़ी थीं वह जमीन के नीचे हाईप्रेशर में कोयला बन गई।

और ऐसा कितनी बार हो चुका है वे परतें बता रहीं हैं कोयले की। और फिर याद रखना, एक बार जब लावा ऊपर आ जाता है तब उसको दुबारा मिट्टी बनने में करीब दस करोड़ साल लगते हैं। दस करोड़ साल बाद जाकर कुछ मिट्टी बनेगी, फिर घास-पात उगेगी, फिर पौधे आएंगे, फिर कई करोड़ साल बाद घने जंगल बन पाएंगे, फिर उलटफेर हो जाएगी। एक आदमी की तो छोड़ो, पूरी प्रकृति में कितने बड़े-बड़े उलटफेर हुए, क्या हमारी पकड़ में कुछ है? इस विराट नदी की प्रवाह में एक तिनके की तरह हम बह रहे हैं और हमारे अंदर कर्ताभाव है कि मैं कुछ कर रहा हूं।

इससे बड़ी गलतफहमी और क्या हो सकती है कि मैं कुछ कर रहा हूं। हम कहते हैं कि फलानी तारीख को फलाने शहर में मैंने जन्म लिया। हम ऐसे बताते हैं कि जैसे हमने कोई महान कृत्य किया है और हमने जानबूझकर किया है। हम कहते हैं कि फलाना आदमी इस तारीख को मर गया, जैसे जानबूझकर, सोच-विचारकर उसने तय किया हो और मर गया। ये जीवन के दो छोर, न जन्म हमारे हाथ में है और न मृत्यु हमारे हाथ में है, न हमसे पूछकर हुए

और हम सोचते हैं कि सब हमारे हाथ में है।

शुरुआत हमारे हाथ में नहीं है, अंत हमारे हाथ में नहीं है और मध्य में अच्छा धोखा खड़ा किया हम सोच रहे हैं कि हमारे हाथ में है। बड़ी–बड़ी चीजें तो छोड़ दो, आप जानबूझकर एक सपना देखने की कोशिश करो तब पता चलेगा कि सपना तक हमारे हाथ में नहीं है, वह भी अपने आप चला आता है। कहां से आता है आप भी नहीं जानते, कहां चला जाता है पता नहीं। आप जानबूझकर सपना तक नहीं देख सकते जो आपके बिल्कुल भीतर की बात है, जिसमें किसी का कोई हाथ नहीं है।

बाहर की जगत का तो छोड़ो, यहां तो सात अरब आदमी हैं, पता नहीं कितना हस्तक्षेप होगा। आपका मन तो आपका मन है, वहां तो किसी का हस्तक्षेप नहीं है। आपकी नींद और आपके सपने तो बिल्कुल निजी हैं, कोई वहां अवरोध पैदा नहीं कर सकता। आप अपनी मर्जी का सपना ही देखकर बता दो। कर्ताभाव बड़ी से बड़ी भ्रांति है। और जब हम इसे देखते हैं तो देखते–देखते हम द्रष्टा हो जाते, साक्षी हो जाते। है। इस तथ्य का जब हम निरीक्षण करते हैं तो अचानक हम द्रष्टा हो गए और यही अध्यात्म की सारी साधना का केन्द्र बिन्दु है।

कर्ताभाव से साक्षीभाव में आ जाना। और विधि वही है जो मैंने आपसे कही, अपने जीवन का होशपूर्वक निरीक्षण करें और बिन्दु परिवर्तित होना शुरू हो जाएगा।

अगला सवाल है, हिप्नोडिस्क को देखते हुए जब भीतर देखते हैं तो कुआं दिखाई देता है लेकिन जब आप बाद में कहते हैं कि कल्पना करके देखें तब मुश्किल लगती है और मुझे गोल्डन लाइट भी दिखाई नहीं दी, अब क्या करें?

चलो गोल्डन नहीं तो सिल्वर देख लो, सिल्वर नहीं कॉपर देख लो, जो दिख रहा है वही देख लो। हिप्नोडिस्क तो एक उपाय है थ्री डायमेंशनल गहराई देखने का। नॉर्मली जब हम देखते हैं बंद आंखों से तो हम टू डायमेंशनल देखते हैं। लंबाई–चौड़ाई और गहराई नहीं होती उसमें। थोड़ी सी प्रैक्टिस हिप्नोडिस्क के माध्यम से हो जाती है कि हमें गहराई भी दिखने लगे। आप किसी अन्य विधि से भी इसका प्रयोग करके देख सकते हैं अगर हिप्नोडिस्क वाली विधि काम नहीं कर रही तो।

मुख्य बात ये है कि आप गहराई को देखने का प्रयास करें। अभी यहां से जाकर आप बंद आंख से देखने का प्रयोग करना अपने कमरे में लाइट बुझाकर सोते हुए कल्पना करना कि आप छः इंच दूर देख रहे हैं बंद आंखों से। फिर जब आपको लगने लगे कि गहराई आ गई छः इंच दूर में फिर एक फुट दूर देखना, फिर पांच या दस फुट और ऐसे ही बढ़ाते जाना, अंत में अनंत गहराई में पहुंच जाओगे। और अच्छा होगा कि रात को करना सारे प्रकाश बुझाकर, बड़ी आसानी से आप अनंत गहराई में पहुंच जाएंगे, थ्री डायमेंशनल दृष्टि आपकी हो जाएगी।

क्योंकि वह जो अवचेतन है वह गहराई में है। उसका नाम ही अवचेतन है इसलिए सबसे

नीचे, सबकॉन्शस, सब यानि नीचे, अवचेतन यानि चेतन के नीचे। विलो द कॉन्शस माइण्ड। नॉर्मली हम केवल सतह पर हैं, टू डायमेंशनल ऊपर के सर्फेस में जीते हैं चेतन मन में। गहराई में उतरना है तो थ्री डी–विजन डेवलप करना होगा, उससे बड़ी मदद मिलेगी। दूसरी बात प्रकाश के बारे में, जरूरी नहीं है कि गोल्डन लाइट ही देखें, कोई भी कलर काम करेगा जो आपको दिखाई दे रहा है। आप उसके संग उस भावना को, उस सुझाव को जोड़ लें ये बात महत्त्वपूर्ण है।

चूंकि अधिकांश लोगों के मन में एक हिप्नोसिस है सोने के बारे में, स्वर्ण रंग के बारे में, उसको बड़ा कीमती मानते हैं इसलिए हम गोल्डन लाइट वर्ड उपयोग करते हैं। करीब–करीब अस्सी–नब्बे प्रतिशत लोग वैसा देख पाते हैं और उसके साथ बड़ी आसानी से उस भाव को जोड़ पाते हैं। लेकिन दस–बारह प्रतिशत लोग रह जाएंगे जो शायद वैसा न देख पाएं तो उसकी चिंता न करें, कोई कलर महत्वपूर्ण नहीं है। आप किसी भी रंग के साथ जोड़ दीजिए, सांस के संग जोड़ दीजिए कि हर भीतर जाती सांस के साथ ऐसा–ऐसा हो रहा है।

अपना सुझाव जोड़ दीजिए कि मैं शांत हो रहा हूं, कि शिथिल हो रहा हूं, कि शरीर शिथिल हो गया, कि मन चुप होने लगा। आप सांस के संग जोड़ दीजिए आप पाएंगे कि तब भी वही बात हो गई। निश्चित ही अगर आप कोई खास ध्वनि, प्रकाश या अन्य इन्द्रियों का आंतरिक काल्पनिक उपयोग कर पाएं तो और गहराई मिल पाएगी। चलो आप सुगंध का प्रयोग करके देख लो। यहां जितने लोग बैठे हैं इसमें से दस–पंद्रह प्रतिशत लोग ऐसे होंगे जो काल्पनिक सुगंध ले सकते हैं।

आप कल्पना करें कि आप गुलाब के बगीचे में हैं और महसूस करने की कोशिश करें कल्पना में कि गुलाब की गंध आ रही है। दस–बारह प्रतिशत लोगों को सफलता मिल जाएगी तो वह इसी का उपयोग कर लें। इसी के साथ सुझाव को जोड़ दें। मुख्य बात यह है कि वह जो शक्ति चेतन मन में लगी है, विचारों में, तर्कों में उस शक्ति को वहां से हटाना है, शिफ्ट करना है और वह जो भावुक हिस्सा है, कल्पनाशील हिस्सा है सबकॉन्शस माइण्ड का वहां उस शक्ति को लगाना है।

हमारे भीतर ये दो हिस्से हैं, एक बौद्धिक, एक इंटेलेक्चुअल हिस्सा है जहां विचार चलते हैं, तर्क चलते हैं, वाद–विवाद होता है, जहां हमारा पढ़ा–लिखा, शिक्षित मन है और ज्ञान इकट्ठा मौजूद है और दूसरा मन है प्राकृतिक हिस्सा जो कि पिक्टोरियल है, चित्रात्मक है, अनुभवगत है। याद रखना, जब हमको कोई भी भाषा नहीं आती थी तब भी हमारी इंद्रियां थीं, हमको चीजें दिखती थीं, सुनाई पड़ती थीं, माना कि जो सुना जाता था उसका कोई अर्थ हमको नहीं पता था। किसी ने कहा पानी तो ध्वनि तरंगें तो सबके कान में टकराएंगी, पानी शब्द तो उसको सुनाई दिया लेकिन इसका अर्थ क्या है इसका मतलब किसी भी छोटे बच्चे को नहीं पता।

अगर खुशबू है हवा में या दुर्गंध है तो बच्चे को भी अहसास हो रही है यद्यपि वह इस

शब्द को नहीं जानता है कि सुगंध है कि दुर्गंध है लेकिन अच्छा और बुरा तो उसको लग रहा है, बिना शब्द के। वह यह तो नहीं जानता कि यह अच्छा है कि बुरा है। कोई चींज उसको गड़तीं है, चुभतीं है तो वह रोता है, अब वह ये तो नहीं जानेगा कि इसका नाम चुभन है। जब हम नरम कपड़े में उसको रखते हैं तब उसको आराम मिलता है लेकिन उसको यह तो पता नहीं है कि इसका नाम अच्छा लगना है या आराम है। लेकिन फीलिंग तो उसको हो रहीं है सारीं की सारीं।

इसका मतलब हमारा चेतन मन विकसित होने के बहुत पहले जन्मजात हम सबकॉन्शस माइंड को लेकर आए हैं जिसमें फीलिंग करने की क्षमता है, इन्द्रियगत अनुभव उसको होते हैं। चलो मनुष्य से हटकर सोचते हैं। मान लो एक बिल्लीं है, कुत्ता भौंकते हुए बिल्लीं की तरफ दौड़ा, बिल्लीं अपनी जान बचाकर पेड़ पर चढ़ गई क्योंकि ऐसा उसने अपनी मां को करते हुए देखा था। डर गई बिल्लीं पेड़ पर चढ़ गई लेकिन कुत्ता उसका कुछ न बिगाड़ सका। थोड़ीं देर में चला गया।

यह बिल्लीं कोई भाषा नहीं जानतीं, इसको ये नहीं पता है कि इस प्राणी का नाम कुत्ता है कि इसकी आवाज को भौंकना कहते हैं लेकिन ये आवाज उसके चित्त में बैठ गई। अब उसको पता है कि जब भीं ये आवाज सुनाई दे एक दम से भाग खड़े होओ, खतरा है। ये छविं बिल्लीं के भीतर कुत्ते के प्रति बैठ गई कि जैसे हीं ये नजर आए, छुप जाओ, ये खतरनाक है। शब्द उसको नहीं पता है खतरनाक, शब्द उसको नहीं पता कुत्ता, उसको ये भी नहीं पता है कि यह भौंकना है लेकिन वह छवि, वह रूप, वह आवाज उन सबके साथ भय जुड़ गया।

अब भविष्य में जब कभीं भीं यह बिल्लीं ये आवाज सुनेगीं तुरंत अपने बचने का इंतजाम कर लेगीं। अगर हमने भाषा नहीं सींखीं होतीं तो ये वाला मन जिसको हम चेतन मन कहते हैं यह हमारे पास नहीं होता किन्तु बाकीं कीं सब चींजें तो होतीं हमारे अंदर जैसे अन्य जीव–जंतुओं में हैं। यह तो हम जन्मजात लेकर हीं आए थे। इसलिए हम यहां पर कल्पना का उपयोग करते हैं, भावना का उपयोग करते हैं सजेशन देते हुए ताकि आपकी जीवन ऊर्जा चेतन मन को रिलैक्स छोड़ दे, वहां से शिफ्ट हो जाए और आप फीलिंग में चलें।

जब आपसे कह रहे हैं कि धूप की किरणों के जैसा एहसास करें तो क्या आपने धूप नहीं देखीं है, आप गोल्डन लाइट क्यों अनुभव नहीं कर सकते? क्या आपने धूप की किरणें नहीं जानीं? आपको फीलिंग में ले जाना चाह रहे हैं, अगर आप गोल्डन प्रकाश नहीं देख पा रहे हैं तो कोई बात नहीं, किसीं अन्य इन्द्रिय का उपयोग कर लें। जैसे आज दोपहर को मैं सजेशन दे रहा था कि कल्पना करें कि आकाशवाणी हुई, ऐसीं–ऐसी आवाज सुनाई दीं, आवाज सुनने कीं कल्पना कर सकते हैं। चलो देखने कीं अगर आप नहीं कर पा रहे हैं तो छोड़ें, सुनने कीं तो कर सकते हैं।

सुनने कीं भीं नहीं कर पा रहे हैं तो सुगंध की कर सकते हैं, छूने की कर सकते हैं। इसलिए मैंने जो भीं वर्णन किया कि आप बगींचे में चल रहे हैं, लान में ओस गिरीं हुई है,

आपके पैर के पंजे गीले हो गए हैं ताकि आपकी विचारशक्ति रिलैक्स्ड हो जाए क्योंकि यहां उसका कोई काम नहीं है, आप गीली ओस में चले हैं उस अनुभव का स्मरण करें, पंजे का गीलापन कैसा होता है, दूब में चलना कैसा लगता है, कि पानी के झरने में स्नान करना कैसे लगता है, उसकी शीतलता का अनुभव अपनी त्वचा से कर सकते हैं, शीतलता, ठंडक या गर्मी किसी भी चीज के साथ जोड़ सकते हैं। जरूरी नहीं है कि एक चीज ही चुनें।

अगर हो सके तो सभी इन्द्रियों का जोड़ चुनें ताकि आप टोटलिटी के साथ पांचों इंद्रियों से फील करने में लग जाएं और जो चीजें आपने अच्छे से फील की हैं उन्हीं को आप कल्पना या स्मरण में लाएं। गोल्डन लाइट नहीं आ रहा है फीलिंग में तो छोड़ दो, कोई बात नहीं, चांदनी रात तो आपने देखी है, श्वेत किरणें तो देखी हैं चांदी जैसी, झिलमिलाती लहरें तो देखी हैं पानी में, पांचों इन्द्रियों का अगर उपयोग कर सकें तो बहुत अच्छा।

इसलिए जानबूझकर जो मैंने वर्णन किया था कि बगीचा है, वृक्ष हैं, चांदनी है, दूब है, चल रहे हैं, नदी के किनारे से गुजर रहे हैं, दूर से झरने की आवाज आ रही है, ठंडक लग रही है, हवाओं में सुगंध है वृक्षों की सब इंद्रियों का इकट्ठा उपयोग हो जाए। जब–जब आप फीलिंग में आएंगे थिंकिंग से आपकी ऊर्जा फीलिंग में आएगी तो थिंकिंग बंद होने लगेगी और फीलिंग प्रगाढ़ होने लगेगी। सबकांसस में फीलिंग पहुंचेगी, थिंकिंग नहीं पहुंचती। आज दोपहर में हमने विस्तार से चर्चा की थी कि वह बौद्धिक ज्ञान हमारे किसी काम नहीं आता।

हम जानते हैं कि कोई कार्य गलत है फिर भी हम वही करते हैं, इसका मतलब हमारी थिंकिंग हमारे ही काम नहीं आती। महाभारत में वर्णन आता है कि श्रीकृष्ण दुर्योधन को समझाने गए, बताने लगे कि क्या–क्या धर्म है और क्या–क्या अधर्म है, पाप क्या है, पुण्य क्या है। दुर्योधन ने हाथ जोड़ लिए और कहा कि महाराज बंद करो ये बातें, आपने मुझे कोई छोटा बच्चा समझ रखा है क्या, मैं पढ़ा–लिखा सुशिक्षित राजकुमार हूं, मुझे सब पता है कि क्या पुण्य है और क्या पाप है, क्या है धर्म जो करना चाहिए और क्या है अधर्म जो नहीं करना चाहिए।

आप मुझे कोई नई बात थोड़ी बता रहे हो, ये सब मुझे पता है, असली सवाल ये नहीं है कि मैं जानता नहीं हूं, मैं सब जानता हूं। असली सवाल ये है कि धर्म करने की मेरे भीतर से प्रेरणा ही नहीं होती, अधर्म करने में ही मेरी रुचि है। मेरी समस्या ये थोड़ी है कि मुझे धर्म और अधर्म का ज्ञान नहीं है कि आप कोई नई बात मुझे बता रहे हो कि पाप है और ये पुण्य है, वह तो मुझे भी पता है लेकिन मेरी प्रवृत्ति ही पाप करने की है, पुण्य में मेरा कोई इंट्रेस्ट नहीं है।

दुर्योधन ने बिल्कुल दो टूक बात कह दी कि मेरे चेतन मन को सब पता है, मैं भी गुरुकुल में रहा हूं और वहीं पढ़ा–लिखा हूं, चेतन मन को तो सब पता है लेकिन असली बात यह नहीं है, वह पता होना मेरे किसी काम नहीं आता, मैं गलत ही काम करता हूं, सही काम मुझसे नहीं होता। तो आपके ज्ञान देने से कोई परिवर्तन नहीं हो जाएगा कि आप मुझे बता दोगे कि क्या सही है और क्या गलत है तो वह तो मुझे खुद ही पता है। दुर्योधन ने जो सवाल उठाया

वह बहुत ही महत्वपूर्ण है कि असली बात मेरे सबकांसस माइण्ड की है जो मेरे वश में नहीं है और वह मुझसे कुछ करवा लेता है, वहां मेरी बौद्धिक समझ किसी काम नहीं आती।

कोई भूत सा सवार हो जाता है मेरे ऊपर, वह भूत हमारा ही अवचेतन मन है। कैसे उस अवचेतन मन में हम पहुंचे उसके उपाय हैं। अपनी इंद्रियों से प्राप्त ज्ञान, अनुभव, फीलिंग्स उनकी कल्पना अथवा स्मृति में आप जाएं तब आप इंटेलेक्चुअल मन से दूर हटे, सोच–विचार वाले हिस्से से आपकी शक्ति अलग हुई दूसरी तरफ। वह जो मस्तिष्क का दूसरा हिस्सा है जहां फीलिंग्स पहुंचती हैं, जहां इंद्रियों के अनुभव और एक्टीविटीज पहुंचती हैं जब आप वहां शिफ्ट हुए तब आप अवचेतन में डूबने लगे, तब सुझाव काम आएंगे।

दुर्योधन की बात का भगवान कृष्ण ने कोई बहुत संतोषजनक उत्तर नहीं दिया, एक प्रकार से हार मान गए, उसके साथ कुछ कर ही नहीं सकते। हम अपनी स्थिति देखें तो लगभग उसी स्थिति में हर मनुष्य है। और कुछ किया जा सकता है, हार मानने की जरूरत नहीं है। काफी कुछ संभव है, थोड़ी सी कला सीखनी होगी। तो मैं नहीं कह रहा हूं कि आप गोल्डन लाइट के पीछे ही पड़ जाओ कि कुआं के पीछे ही पड़ जाओ। आज दोपहर को मैं करवा रहा था सीढ़ियां उतरने की, मैं नहीं समझता कि इसमें किसी को कोई प्राब्लम होगी।

सीढ़ियां हम सब उतर–चढ़ चुके हैं, उसका स्मरण क्यों नहीं कर सकते, जरूर कर सकते हैं। और जब आप उसको महसूस करने लगेंगे, इसलिए मैं आपसे विस्तार में कहता हूं कि एक हाथ में टार्च पकड़े हुए हैं, दूसरा हाथ आपका रेलिंग पर है और धीरे–धीरे आप एक–एक पंजा नीचे रख रहे हैं इसलिए टच पर जाइए कि जब आपका पैर सीढ़ी पर लगा तो कैसा महसूस हुआ, फिर दूसरा पैर उठाया और टार्च से आप देख रहे हैं और उस अंधेरे कक्ष में पहुंच गए हैं, उसकी फीलिंग में जाइए, ट्राई टू फील इट विथ आल योर सेंस ऑर्गन्स ताकि वैचारिक हिस्सा, बौद्धिक हिस्सा निष्क्रिय हो जाए और फीलिंग वाला हिस्सा सक्रिय हो जाए तब आपके अवचेतन में पैठ हुई और तब आप वहां जो सुझाव अपने आपको देंगे वह कारगर होने लगेंगे।

आपकी बात भीतर पहुंच जाएगी अंधेरे कक्षों में। उसको फीलिंग के संग जोड़िए, वह फीलिंग कोई भी हो सकती है। अलग–अलग लोग हैं, अलग–अलग हमारी इंद्रियां प्रमुख हैं। चूंकि आंख अस्सी परसेंट लोगों की सबसे प्रमुख इंद्रिय है इसलिए हम ज्यादा बात करते हैं प्रकाश देखने की। कुछ लोग ऐसे हैं जिनकी आंखें उतनी प्रबल नहीं, कान ज्यादा प्रमुख हैं तो चलो उसका उपयोग कर लें। जैसे मंत्र का उपयोग कर रहे थे 'ओममणिपदमें हुं' ध्वनि का उपयोग, हर सीढ़ी में आप कह रहे हैं कि 'ओममणि पदमें हुं', और वही मंत्र चल रहा है तो सुन भी रहे।

मैंने कहा झींगुर की आवाज सुनें, झरने की आवाज सुनें ताकि कानों का भी उपयोग हो जाए, अन्य इंद्रियों का भी उपयोग कर सकते हैं। कोई व्यक्ति हो सकता है नाक से प्रमुख हो कि स्वाद की इंद्रिय बड़ी तेज हो या स्पर्श तो आप उसमें जा सकते हैं। कोई जरूरी नहीं है कि

आप गोल्डन लाइट या कुआं ही जरूरी है। जो आपकी प्रमुख इंद्रिय है जो आपको आसानी से विचारों से दूर हटाकर फीलिंग में ले जाए आप उसी का उपयोग कर लें।

अगला सवाल– हे दयालु गुरुदेव, मुल्ला की प्रतीक्षा कब तक करनी पड़ेगी?

बस, अब सही वक्त आ गया। एक नहीं, दो किस्से सुनो। किस्मत सबकी पलटा खाती है। एक वक़्त ऐसा भी आया कि मुल्ला को खाने के लाले पड़ गए। बहुत सोचने के बाद मुल्ला को लगा कि भीख मांगने से अच्छा पेशा और कोई नहीं हो सकता इसलिए वो शहर के चौक पर खड़ा होकर रोज़ भीख मांगने लगा।

मुल्ला के बेहतर दिनों में उससे जलनेवालों ने जब मुल्ला को भीख मांगते देखा तो उसका मजाक उड़ाने के लिए वे उसके सामने एक सोने का और एक चांदी का सिक्का रखते और मुल्ला से उनमें से कोई एक सिक्का चुनने को कहते। मुल्ला हमेशा चांदी का सिक्का लेकर उनको दुआएं देता और वे मुल्ला की खिल्ली उड़ाते।

मुल्ला का एक चाहनेवाला यह देखकर बहुत हैरान भी होता और दुखी भी। उसने एक दिन मौका पाकर मुल्ला से उसके अजीब व्यवहार का कारण पूछा– 'मुल्ला, आप जानते हैं कि सोने के एक सिक्के की कीमत चांदी के कई सिक्कों के बराबर है फिर भी आप अहमकों की तरह हर बार चांदी का सिक्का लेकर अपने दुश्मनों को अपने ऊपर हंसने का मौका क्यों देते हैं।'

'मेरे अज़ीज़ दोस्त'– मुल्ला ने कहा– 'मैंने तुम्हें सदा ही समझाया है कि चीज़ें हमेशा वैसी नहीं होतीं जैसी वो दिखती हैं। क्या तुम्हें वाकई ये लगता है कि वे लोग मुझे बेवकूफ़ साबित कर देते हैं? सोचो, अगर एक बार मैंने उनका सोने का सिक्का कबूल कर लिया तो अगली बार वे मुझे चांदी का सिक्का भी नहीं देंगे। हर बार उन्हें अपने ऊपर हंसने का मौका देकर मैंने चांदी के इतने सिक्के जमा कर लिए हैं कि मुझे अब दो साल तक खाने–पीने की फ़िक्र करने की कोई ज़रुरत नहीं है। अगर एक बार सोने का सिक्का उठा लिया होता, तो वह आखिरी सिक्का होता। समझे भाईजान!'

एक और किस्सा सुनो–

मुल्ला के एक दोस्त ने उससे पूछा– 'मुल्ला, तुम्हारी उम्र क्या है?'

मुल्ला ने कहा– 'पचास साल।'

'लेकिन तीन साल पहले भी तुमने मुझे अपनी उम्र पचास साल बताई थी!'– दोस्त ने हैरत से कहा।

'हाँ'– मुल्ला बोला– 'मैं हमेशा अपनी बात पर कायम रहता हूँ। हिन्दू नहीं हूं तो क्या हुआ, सिद्धांत का पक्का हूं। रघुकुल रीति सदा चली आई, प्राण जाए पर वचन न जाई।'

अंतिम सवाल– एक शिष्य अपने सदगुरु के लिए क्या कर सकता है?

ध्यान में जागो, प्रेम से भरो। नाचो, गाओ, गुनगुनाओ। उत्सव मनाओ। गुरु–शरण में, समर्पण भाव में जियो। ओशो नीलांचल द्वारा रचित इस प्यारे गीत के संग आओ, हम नाचें, मस्ती में डोलें। मा ओशो प्रिया ने अत्यंत मधुर धुन में संगीतबद्ध किया है। विचारों से दूर हटाकर फीलिंग में चलें। हमारी खुशी, हमारा नर्तन–गायन–उत्सव पर्याप्त है। आओ, सदगुरु के चरणों में अर्पित करें अपने भाव–सुमन।

लो डगमगाती ये दिल की कश्ती, हवाले कर दी तुम्हारे ओशो,
हमारे मांझी तुम्हीं हो ओशो, तुम्हीं हमारे किनारे ओशो।
तुम्हीं से गुलशन में चाँदनी है, तुम्हीं से यादों में रौशनी है,
हमारे दामन में भर रहे हो, तुम्हीं तो झिलमिल सितारे ओशो।
जो ज़ख्म थे फूल बन गये हैं, जो संग थे धूल बन गये हैं,
है मौज ही मौज ज़िंदगी में, हुए हैं जब से हमारे ओशो।
हमारे अंदर छुपा कहीं था, ख़ज़ाना इतना पता नहीं था,
ये गहरे सागर में डूबे मोती, जतन से तुमने उतारे ओशो।
लो रूह के आईने में हमको, दिखाई देता है अक्स अपना,
करम है चेहरे से मेरे तुमने, मुखौटे झूठे उतारे ओशो।
तुम्हें मोहब्बत का वास्ता है, फिर आज जल्वा दिखाना होगा,
ये दिल भी तुमको पुकारे ओशो, ये जाँ भी तुमको पुकारे ओशो।

15

ज्योतिष पर भरोसा करें या नहीं?

एक मित्र ने ज्योतिष संबंधी अति–लंबा सवाल पूछा है। मैं विस्तार में पूरा प्रश्न नहीं पढ़ रहा हूं। लेकिन उनके सभी बिंदुओं के जवाब दूंगा।

हम किसी चीज की जिम्मेवारी नहीं लेना चाहते, हम अपने आलस्य को छिपाना चाहते हैं और इसलिए यह मानना हमें बहुत सुविधाजनक लगता है कि चीजें सब पहले से तय हैं। फिर हमारी तो जिम्मेवारी खत्म ही हो गई। इसलिए हम ऐसी हर धारणा को तुरंत स्वीकार करने को तैयार हैं जिससे हमारे सिर पर बोझ न आए। किसी जमाने में लोग मानते थे कि विधाता ने सबकुछ लिखकर भेजा है। क्यों इस प्रकार की धारणाएं चलती रहती हैं, इसके मनोविज्ञान को भी समझें।

ईश्वर के हाथ में सबकुछ है, सर्वशक्तिमान है, उसकी मर्जी के बिना पत्ता नहीं हिलता। सुनने में बड़ा ऊंचा सिद्धांत लगता है, कुल मिलाकर हम ये कह रहे हैं कि हम जिम्मेवार नहीं हैं। अगर जीवन में कुछ दुख, चिंताएं, कष्ट आ रहे हैं तो हम तो कुछ कर ही नहीं सकते क्योंकि भगवान की मर्जी के बिना पत्ता नहीं हिल सकता, हमारी क्या औकात, विधाता ने जैसे लिख दिया सो लिख दिया। कह रहे हैं एक–एक सांस तक गिनी हुई है। हिरोशिमा और नागासाकी में सबकी जन्म कुण्डली एक सी थीं क्या, सबकी ग्रह नक्षत्र दशा एक सी थी, सबकी हस्तरेखाएं उसी दिन खत्म हो रही थीं जिस दिन एटम बम गिरा। क्या ये संभव है कि एक शहर के सारे लोगों की हस्तरेखाएं उसी दिन कट रही थीं? जीवन के कोई भी तथ्य इस बात के पक्ष में नहीं हैं।

तो जीवन में जो चारों तरफ हो रहा है उसको देखकर तो ऐसा लगता है कि विधाता

पागल है। इतनी दुखद घटनाएं, इतनी चिंता वाली चीजें, इतनी परेशानियां, इतनी तकलीफें। निश्चित ही अगर ऐसा कोई भगवान है जिसने ये सब तय किया है तब तो वह पागल ही होगा। धीरे–धीरे लोगों को भगवान पर भरोसा कम होने लगा। और फिर आ गए ग्रह नक्षत्र पर और उनके नाम पर शोषण करने वाले ज्योतिषी। बड़ी मजे की बात है, दोनों चीजें बता रहे हैं, वही बता रहे हैं कि फलां–फलां ग्रह की दशा ऐसी है इसलिए आपकी दुर्दशा है और फिर वही उपाय बता रहे हैं कि सवा सौ रुपए दे दो तो मंत्रजाप कर देंगे।

क्या ग्रह की दशा बदल देंगे वह, क्या उनके पूजा–पाठ में इतनी ताकत है, फिर अन्य लोगों का क्या होगा? उनकी दुर्दशा शुरू हो जाएगी और ये ज्योतिषी वगैरह बेचारे जो सड़क पर बैठे है पांच–दस रुपए में हाथ देख रहे हैं इनकी क्यों दुर्दशा है, ये अपना ग्रह नक्षत्र दशा क्यों नहीं सुधार लेते? कोई तथ्य पक्ष में नहीं है लेकिन फिर भी जनमानस मानना चाहता है कि काश ऐसा हो कि हमारी तकलीफें हमारे कारण नहीं हैं। ऐसा कोई कह दे हम उसको करने को तैयार हैं, हम इस बात से राजी हो जाएंगे। कितनी किताबें छपती हैं हस्तरेखाओं पर और उनको पढ़ने वाले मूर्ख। पढ़ने वाले तो सब पढ़े–लिखे लोग हैं, सब बुद्धिजीवी कहे जाने वाले।

अब तो कंप्यूटराइज्ड हो गई हैं हस्तरेखाएं, जन्मकुण्डलियां और शादी–ब्याह के समय कुण्डली मिलाई जा रही हैं और अगर सबकी कुण्डली मिलाकर शादी हो रही है तो वह सुखी दाम्पत्य जीवन कहीं नजर क्यों नहीं आता? और ये पंडित जी जो मिला रहे हैं इनकी खुद की जिंदगी क्या है। दूसरों की तो छोड़ो, पहले अपनी तो मिला लो। इनके घर में भी वही नौटंकी चल रही है जो दुनिया में सब तरफ चल रही है। वही कलह, वही तनाव, वही संघर्ष आपसी, सबकुछ वैसा का वैसा। धीरे–धीरे कुण्डलियां आउट आफ़ डेट हो गईं, ज्योतिषी आउट ऑफ डेट हो गए। एक से एक विचित्र कहानी आ जाती हैं।

फुटपाथ के नीचे तोता लेकर बैठे रहते हैं, तोता कार्ड उठाएगा, पहले उसका जो मालिक है पंडित वह तोता था जो कि अब महातोता हो गया है, अब वह एक छोटा तोता ले आया। हमें आदमी पर भरोसा न रहा तो अब हम तोते पर भरोसा कर रहे हैं, अब वही कार्ड उठाएगा और वही किस्मत बताएगा। वजन नापने की मशीन में वजन के साथ–साथ एक लाइन भाग्य भी लिखा हुआ है। सबको पता है कि इस मशीन में पहले से प्रिंटेड टिकटें पड़ी हैं लेकिन नालायकों की कोई कमी ही नहीं है। वह वजन नापने के लिए उस पर चढ़े भी नहीं थे कि भाग्य आ गया। वह तो जहां मशीन दिखी नहीं कि तुरंत ही चढ़ कर एक रुपए का सिक्का डाल देंगे और किस्मत लिखकर आ गई अब वह खुश हैं।

हमेशा अच्छी बातें ही निकलेंगी उस मशीन में से। वह जो ज्योतिषी बैठा है वह तो थोड़ा मिक्स करके बताएगा क्योंकि उसको और भी शोषण करना है तो एक–दो डरावनी बातें भी बता देगा वह। फिर आप पूछोगे कि पंडित जी विधि–विधान क्या है इससे बचने का? फिर वह बताएगा कि ऐसा–ऐसा करो और इतने रुपए दान करो तो सब ठीक हो जाएगा। मशीन को तो कुछ करना नहीं है इसलिए उसमें से अच्छी–अच्छी बातें निकलती हैं। कई लोग मुझसे कहते हैं कि ओशो टुडे पत्रिका में एक पेज तो कम से कम राशिफल का हो। दिल तो ऐसा होता है कि उनकी समाधि प्रोग्राम आगे के लिए कैंसल करके डायरी फाड़ के फेंक दें कि तुम दुबारा लौट के न आना। राशिफल पढ़ना है उनको!

कितने लोग हैं जो सबसे पहला पन्ना राशिफल का खोलते हैं किसी भी पत्रिका में और सुबह उठते ही अखबार। अब कुल बारह प्रकार की राशियां हैं और दुनिया में सात अरब इंसान हैं तो आधा–आधा अरब लोगों का कम से कम एक ही एवरेज में आएंगे, करीब साठ करोड़ लोग एक ही राशि में आएंगे। साठ करोड़ लोगों की किस्मत एक सी है आज। अब इतने सारे मित्र हैं इसमें से ढूंढ़ लो तीन चार लोग तो मिल ही जाएंगे आपको जिनकी जन्म तारीख एक ही होगी। तो एक सप्ताह एक साथ रहकर देख लो क्या आपकी किस्मत एक सी ही चल रही है। पता चल जाएगा जो कूट–कूट के भरा है दिमाग में वह बाहर निकल आएगा, जरा आंख खोल के चारों तरफ देखो तो सही।

जब ओशो टाइम्स पत्रिका पूना से छपती थी तो उसमें राशिफल भी छपता था। उस समय ओशो की सचिव थीं मा नीलम। एक बार मैं उनसे मिलने गया तो मैंने कहा कि यह क्या नालायकी है, राशिफल क्यों छापते हैं? ओशो की फिलास्फी के साथ यह कहीं भी मैच नहीं करता। नीलम ने कहा अच्छा! मैं तो खुद पहला पेज उसी को खोल के पढ़ती हूं। मैंने अपना माथा ठोंक लिया, यह अपने आपको ओशो का सचिव मानती हैं। बाकी तो मैगजीन में कुछ देखती ही नहीं वह, सिर्फ एक ही पेज पढ़ती हैं। मैंने कहा कि ऐसा करो कि अब मैं लिखा करूंगा, करीब साल भर फिर मैं लिखता रहा उसमें। कम से कम कोई ऐसी बात लिखो उसमें जो किसी के काम आए, ओशो का कुछ संदेश उस बहाने जाए, लगभग साल भर तक फिर मैं ही लिखता रहा। मुझे तो बारह राशियों के नाम भी नहीं पता तो भी मैं साल भर राशिफल लिखता रहा। लोगों के बड़े पत्र आते थे तारीफ में, हास्यास्पद दृश्य है पूरा। मैं तो बारह लिख के भेज देता था और यह भी लिख देता था कि आपको जहां फिट करना हो कर लेना क्योंकि मुझे राशियों के नाम ही नहीं पता, उससे राशि का कुछ लेना–देना नहीं, उसमें जो बातें मैंने लिखी हैं उसमें ओशो के कुछ कोट हैं, कुछ संदेश हैं, ध्यान करने की प्रेरणा है, प्रेम के प्रति इशारा है।

एक सज्जन नेपाल में आए हुए थे, बड़े चिंतित और दुखी जो कि जर्मनी के रहने वाले थे। मैंने उनसे कहा कि आप बहुत परेशान नजर आ रहे हैं, वे बोले कि हां, परेशान हूं। मैं कुछ ध्यान वगैरह के बारे में उनसे बात करने लगा कि उससे शांति होगी। वह कहने लगे कि नहीं, शांति नहीं हो सकती, मेरे माता और पिता दोनों ही बहुत क्रोधी थे, मेरी मां के माता–पिता, मेरे नाना–नानी और मेरे दादा–दादी भी बहुत ही चिंतित किस्म के और परेशान लोग रहे हैं। मैं जेनेटिक इंजीनियर हूं इस बात को भलीभांति जानता हूं कि मेरे जीन्स में आनुवांशिकी रूप से ही ऐसा है कि मैं क्रोधी रहूंगा, बेचैन रहूंगा, इसमें कुछ हेर–फेर हो ही नहीं सकता।

इस आदमी की बात को सुनकर लगेगा कि बड़े साइंटिफिक टर्मिनोलॉजी का उपयोग कर रहा है, खुद जेनेटिक इंजीनियर है लेकिन यह पढ़ा–लिखा जेनेटिक इंजीनियर भी एक नए शब्द की आड़ में अपने आपको छिपा रहा है। पहले वह शब्द अलग थे, भाग्य था, किस्मत थी, विधाता थे, ग्रह–नक्षत्र थे, अब यह नया शब्द आ गया जेनेटिक इंजीनियरिंग। कुल मिलाकर बात वह वहीं कह रहा है कि मेरे हाथ में कुछ नहीं है, अगर मैं क्रोधी हूं, बेचैन हूं, ऐसा होना सुनिश्चित है, मेरी मजबूरी है, इससे बचने का कोई उपाय ही नहीं, इसमें कोई मेरी जिम्मेवारी नहीं है। अब दादा–दादी, नाना–नानी मर गए अब मैं क्या कर सकता हूं।

उल्लू मर गए औलाद छोड़ गए, उनकी औलादों का विवाह हो गया, फिर हम उल्लू के पट्ठे पैदा हुए, अब तो कुछ हो नहीं सकता। वह तो पीढ़ी दर पीढ़ी चीज चली ही आ रही है। अब वह दादा–दादी, नाना–नानी जिम्मेवार थोड़ी हैं, उनके मां–बाप भी हुए थे, उसके पहले कब बंदरों से शुरूआत हुई थीं करोड़ों साल पहले यह लंबा सिलसिला है। हम तो उसका फायनल प्रोडक्ट हैं चिंतित, दुखी, परेशान, चिड़चिड़े, हम तो ऐसे होने को मजबूर हैं। करोड़ों साल में यह जीन्स और डीएनए तय हुए हैं।

नए–नए शब्द सुनकर लगेगा बड़ा वैज्ञानिक चित्त का व्यक्ति है। क्यों इस बात से राजी हैं, क्योंकि अब अपने करने को कुछ बचा ही नहीं, अगर मैं क्रोधी हूं तो बस हूं, ऐसा होना मजबूरी है। पिछले सौ–दो सौ सालो में और नए–नए प्रकार के एक्सप्लानेशन आए जो यही बात कहते हैं और इसलिए उनकी बात एकदम से अपील करती है। कालमार्क्स ने जब साम्यवाद की धारणा दी कि जब तक वर्ग भेद है दुनिया में दुख मिट नहीं सकता, सारी दुनिया राजी हो गई। आधी दुनिया तो साम्यवादी हो ही गई और बाकी जो नहीं हो पाए हैं साम्यवादी वे भी सहमत हैं इस बात से।

भारत में तो साम्यवाद नहीं है, आप साम्यवादी ढंग से नहीं सोचते होंगे अन्य सब चीजों को किन्तु इस बात से आप भी इंकार नहीं कर सकते। कूट–कूट के यह बात सबके मन में भर दी गई है और सब सहमत हो गए हैं कि होना तो चाहिए। आदर्श स्थिति तो वही है, ठीक है हम नहीं कर पा रहे हैं अलग बात है लेकिन होना ऐसा ही चाहिए। अब वर्गभेद में शांति कैसे होगी समाज में? रूस, चीन, चेकेस्लोवाकिया, जर्मनी, कोरिया करोड़ों–करोड़ों लोगों का खून बहा के ले आए साम्यवाद और दुख किसी का मिटा ही नहीं, आश्चर्य! वर्गभेद तो मिट गया लेकिन दुख जहां के तहां बरकरार हैं। साठ–सत्तर साल बाद फिर उन लोगों को वापिस लौटना पड़ा पूंजीवाद की तरफ। नहीं चला पाए वह व्यवस्था, लोग अब भी बहुत दुखी हैं।

अभी मैं कजाकिस्तान गया था दो महीने पहले, उनकी हालत भारत से भी गई–बीती है। क्या हुआ, इन लोगों ने खून बहाया, शहीद हुए, बड़ी भारी क्रांति हो गई लेकिन फिर भी कुछ नहीं हुआ, फिर वापिस वहीं पहुंच गए जहां पहुंचना था। औद्योगिक क्रांति हो गई सारी दुनिया में, अब आदमी को काम न करना पड़े, मशीन काम करें, करने भी लगीं जो कि आदमियों से हजार गुना काम करने लगीं लेकिन आदमी का दुख न मिटा। पहले बेचारा बैलगाड़ी चलाता था अब वह पायलट बन गया है हवाई जहाज का। देखने में लगता है काफी उन्नति हो गई लेकिन जहां तक आंतरिक दुख–कष्टों का सवाल है वह बिल्कुल ज्यों के त्यों हैं।

सीट बदल गई है पहले से क्योंकि पहले बैलगाड़ी में बैठा था और अब हवाई जहाज में बैठा है लेकिन आदमी वही का वही है। वैसा ही चिंतित, वैसा ही दुखी, वैसा ही अहंकारी, वही मूर्छा, वही ईर्ष्या, सबकुछ वही। औद्योगिक क्रांति हो गई, साम्यवादी क्रांति हो गई, सामाजिक क्रांतियां होती रहती हैं। हमारे देश में तो और अद्भुत क्रांतियां हुईं। जय प्रकाश नारायण संपूर्ण क्रांति कर गए। वह कहां गए, क्या हुआ, कैसी क्रांति हुई किसी को खबर ही नहीं, बस अखबारों में छपता है कि संपूर्ण क्रांति हो गई। तो हुआ क्या फिर, होता कुछ भी नहीं बस ऐसा लगता है कि कुछ होने वाला है, कुछ होने वाला है।

एक सिद्धांत आता है कि इन–इन कारणों से तकलीफ है और सब लोग सहमत हो जाते

हैं क्योंकि इस बात में हमारा जागरण जरूरी नहीं है, हम जैसे सोए थे वैसे ही सोए रहते हैं। बस हमारे ऊपर बात नहीं आनी चाहिए कि हम जिम्मेवार हैं इस बात के लिए, यह हम मानने के लिए तैयार नहीं हैं। अन्य किसी चीज को दोषी ठहरा दो। समाज की कोई व्यवस्था दोषी है, राजनैतिक व्यवस्था दोषी है, भगवान की व्यवस्था में दोष है, अस्तित्वगत रूप से ही कुछ गलती है, भूलचूक हो गई है, ग्रह–नक्षत्रों में दोष है।

हम सब जगह दोष मानने के लिए तैयार हैं, एक बात बस कोई न कहे कि तुम दोषी हो। इसका मतलब अगर अपने दुख के लिए हम ही जिम्मेवार हैं तो हम विक्षिप्त हैं क्या, क्या हम अपना दुख खुद निर्मित कर रहे और अगर हम दोषी हैं तो हमको कुछ बदलाहट करनी पड़ेगी अपनी जिंदगी में, यह बात हमें हजम नहीं होती। इसलिए हम कोई भी मूढ़तापूर्ण सिद्धांत मानने को बिल्कुल तत्पर बैठे हैं। अगर पुराने सिद्धांतों में से भरोसा उठ गया है तो नए रंग–ढंग में फिर वही बात आ जाएगी जिससे यह पक्का हो जाए कि मैं जिम्मेवार नहीं हूं। किसी अन्य चीज में गलती है, वहां भूलचूक हो रही है, उसको बदलना पड़ेगा।

एक तो उसको बदलना मुश्किल क्योंकि वह आपके हाथ में है नहीं, लंबे समय में बड़ा उपद्रव मचा के वह बदलाहट हो भी जाएगी लेकिन हो जाने के बाद फिर पता चलता है कि हमारे दुख–दर्द नहीं मिटे। कई लोग कुर्बान हो गए, शहीद हो गए लेकिन मिटा कुछ भी नहीं। तब तक कोई नया सिद्धांत आ जाएगा और लोग फिर उसको मानने लगेंगे। मनोवैज्ञानिकों ने भी यही काम किया। आज से लगभग सवा सौ साल पहले मनोविज्ञान की शुरूआत हुई। कुल मिलाकर वह भी ऐसा सिद्धांत ले आए कि बचपन में तुम्हारा लालन–पालन जैसा हुआ है तुम्हारे माता–पिता से, परिवार के अन्य लोगों से जैसा तुम्हारा संबंध रहा, जिन परिस्थितियों में तुम बड़े हुए, जिन परिस्थितियों में शिक्षा ग्रहण की, तुम्हारे मन की कंडीशनिंग हो चुकी है।

तुम्हारा सबकांसस माइंड उस समय बन चुका है अब तो उसके परिणाम भुगतने ही होंगे। सारी दुनिया मनोवैज्ञानिकों से राजी हो गई। अब तो कुछ कर ही नहीं सकते, क्योंकि पालन–पोषण हो चुका, अब उसमें कोई हेर–फेर तो हो नहीं सकता कि दुबारा फिर से अब माता–पिता को जन्म दो, ऐसा महान काम तो रजनीकांत ही कर सकता है, अपने माता–पिता को जन्म दे दे। सामान्य आदमी के तो वश के बाहर है, माता–पिता जन्म देकर जा भी चुके। बस अब एक ही बात हो सकती है कि माता–पिता के प्रति क्रोध से भरे रहो और उनको गालियां देते रहो कि खुद तो चले गए और हमको छोड़ गए। अब वापिस तो कुछ हो नहीं सकता, दुबारा बचपन नहीं हो सकता, दुबारा वह स्थितियां हो नहीं सकतीं, अब तो बस भुगतते रहो कष्ट, गालियां देते रहो अतीत को।

फ्रायड ने घुमा–फिरा के फिर वही बात कर दी। पहले वह परमात्मा, परमपिता जिम्मेवार था अब लोगों को इसी जीवन के पिता से दुख मिला क्योंकि लोगों को परमपिता से भरोसा उठ गया, खासकर पश्चिम में जो मनोविज्ञान पैदा हुआ, क्योंकि वहां धर्म की जड़ें खिसक गई थीं, गॉड द फादर फैशन के बाहर हो गए थे। अब एक वैक्यूम खड़ा हो गया कि फिर कौन जिम्मेवार, ईश्वर नहीं है। अब तो जल्दी से उस जगह को भरना पड़ा, अब अभी के माता–पिता को पकड़ो, यह जिम्मेवार हैं। इन्होंने संस्कार डाल दिए, लेकिन मामला तो कुछ हल नहीं हुआ। शब्द बदल गए, ईश्वर की जगह माता–पिता आ गए।

न ईश्वर के बारे में हम कुछ कर सकते थे, न अब माता–पिता के बारे में कुछ कर सकते, न बचपन के बारे में कुछ कर सकते, वह अतीत जिम्मेवार है। इस बीच में कर्म के सिद्धांत वाले आ चुके, पिछले जन्म वाले लोग आ चुके, उनकी फिलास्फी भी एकदम से अपीलिंग लगती है। वे कहते हैं इस जिंदगी में जो कुछ भी हो रहा है पिछले जन्मों की वजह से है। पहले कुछ–कुछ हो चुका है उससे कर्मबंध निर्मित हो गए और अब जो हो रहा है यह तो होना ही था। इन नालायकों से कोई पूछे कि फिर पिछले जन्म में वैसा क्यों हुआ? वह कहेंगे और उसके पिछले जन्म के कारण, वह रिग्रेशन होता जाएगा पीछे के पीछे का।

कुल मिलाकर इस सिद्धांत से एक बात तय हो जाती है कि इस जन्म में तो कुछ हो नहीं सकता। पीछे वह घटनाएं घट चुकी हैं जिनके परिणाम अब आने को हैं, प्रारब्ध लिखा जा चुका है। कितना अच्छा शब्द लगता है प्रारब्ध। सिद्धांत बनाने के लिए बड़ी–बड़ी चीजें चाहिए, छोटी–मोटी चीजों में लोग राजी नहीं होते। तो जो नहीं मानते उनके लिए बड़ा कठिन, क्लिष्ट सिद्धांत बताना पड़ता है, प्रारब्ध। संचित कर्म, एक तो किसी को समझ में नहीं आएगा कि यह क्या होता है, अगर तोता से राजी नहीं होंगे तो फिर संचित कर्म हैं जिससे तुम जरूर राजी हो जाओगे।

यह सब तोता के ही विविध रूप हैं, वह जो परमात्मा था वह अदृश्य तोता था। अब उसको कहां ढूंढ़ोगे कि वह मिल जाए, क्यों उसने ऐसी किस्मत लिख दिया, भाग्य। अब उसका हृदय परिर्वतन कैसे किया जाए। एक तो उसको खोजना मुश्किल, ज्यादा से ज्यादा इतना ही कर सकते हो कि तुम गाना गाते रहो, दुनिया बनाने वाले क्या तेरे मन में समाई, काहे को दुनिया बनाई। न वह मिलने वाला न वह बताने वाला कि क्या उसके दिल में समाई, काहे को दुनिया बनाई। गाना गाकर तसल्ली कर लो कि चलो उसकी मर्जी, क्या कर सकते हैं।

कोई भी बुद्ध पुरुष इन सब मूढ़तापूर्ण बातों से राजी नहीं होगा क्योंकि इन सबकी आड़ में हम अपनी मूढ़ता को छिपाते हैं। बड़े सिद्धांत हैं, बड़ी क्लिष्ट फिलॉसफी है, बड़े तर्कपूर्ण ढंग से बनाई गई बातें हैं, सब बिल्कुल काल्पनिक बातें। अगर फ्रायड की बात सही है तो एक परिवार में कम से कम एक माता–पिता को तो वह बता दे कि कैसे बच्चे पालने हैं, एक प्रयोग तो हो जाए सही ढंग से पालने का, देखें फिर क्या होता है। छोड़ो सारी दुनिया की, तुम एक परिवार को सिखा दो बस। निष्चित ही मनोवैज्ञानिक परिवार को चुनो माता–पिता दोनों को, जो तुम्हारे सिद्धांत को मानते हों उनसे कहो अब देखते हैं तुम्हारी संतान कैसी होगी। शायद अन्य लोगों से ज्यादा सिरफिरी और पगली संतान होगी उनकी। क्योंकि साइकैट्रिस्ट खुद ही सिरफिरा होता है अगर नहीं होता तो साइकैट्रिस्ट बनता ही क्यों। उनका मनोविज्ञान में इतना आकर्शण क्यों था, जरूर दिमाग गड़बड़ रहा होगा। विशय तो कोई आकर्शण लायक नहीं है, दिमाग गड़बड़ होना चाहिए तभी आकर्शण होता है, तभी उस क्षेत्र में आएगा। और अगर शुरूआत में नहीं भी थे सिरफिरे तो बाद में पगलों से डील करते–करते यह पगले हो जाएंगे, पक्का बता रहा हूं मैं।

मेडिकल कालेज में मेरे साइकिएट्री के जो प्रोफेसर थे वह पागल–से थे। और हो ही जाएंगे, पच्चीस साल से ऐसे लोगों के साथ में हैं, दिन–रात पगलों से घिरे हैं, उन्हीं का इलाज कर रहे हैं, पूरा वार्ड भरा हुआ है। अब जिनके बीच में रहोगे, सत्संग का कुछ तो असर

होगा। साइकिएट्रिस्ट का असर मरीजों पर पड़ता हो ऐसा तो देखने में नहीं आया लेकिन असर तो जरूर होता होगा तो फिर उल्टा ही होता है। अच्छा, गिनती भी पागलों की ज्यादा है, एक वार्ड में पचास मरीज भर्ती हैं और एक बेचारा डॉक्टर। अब सोचो किस तरफ से असर बहेगा। वह एक डॉक्टर प्रभावित करेगा कि सौ मरीज प्रभावित करेंगे। ज्यादा असर तो मरीजों का ही है। जैसे बिजली 'हाई वोल्टेज से 'लो वोल्टेज' की तरफ बहती है।

यह एक डॉक्टर अगर शुरू में थोड़ा-बहुत भला-चंगा होगा भी तो दस-पांच साल पागलों का इलाज करते-करते वह भी सिरफिरा हो जाएगा। यह अपने संतान की कंडीशनिंग करके बता दे कि ठीक कैसे होना चाहिए तब जानें। चलो कर्म का सिद्धांत, किस्मत की मर्जी और विधाता वह तो अपने हाथ के बाहर की बात थी, यह प्रयोग तो करके बता दो। अब तो सवा सौ साल हो गए मनोविज्ञान को आए, बीस-बीस साल में एक-एक पीढ़ी गुजरती है, लगभग पांच पीढ़ियां गुजर चुकीं, छः पीढ़ियां गुजर चुकीं लेकिन परिणाम तो कुछ भी दिखाई नहीं देता। पागलखाने बढ़ते जा रहे हैं, कारागृह बढ़ते जा रहे हैं, आतंकवादी घटनाएं बढ़ती जा रही हैं।

क्या आपको पता है कि प्रथम और द्वितीय विश्वयुद्ध में जितने लोग मारे गए थे तब से लेकर उतने ही लोग कार एक्सीडेंट में मारे जा चुके हैं। निश्चित ही बहुत ही तनावग्रस्त और अशांत लोग होंगे जो गाड़ियां चला रहे हैं। जितनी हिंसा पिछले सौ सालों में हुई है उतनी कभी न हुई थी। इतने सामाजिक उलट-फेर हो गए, इतनी क्रांतियां हो गईं, इतने मनोविज्ञान का विकास हो गया, इतनी शिक्षा फैल गई। एक सपना देखा था लोगों ने आज से डेढ़ सौ साल पहले कि सब लोग शिक्षित हो जाएं तो अद्भुत शांति हो जाएगी। करीब-करीब वह सपना पूरा होने के करीब है लेकिन शांति और आनंद का कहीं पता भी नहीं चल रहा।

पिछले सौ साल का इतिहास उठाकर देखो जितना खून-खराबा इन सौ सालों में हुआ है, जितने लोग पागल हुए हैं, जितने अपराधी हुए हैं, जितना आतंक हुआ है, जितने युद्ध हुए हैं इतना तो पूरे इतिहास में नहीं हुआ। और यह हैं पढ़े-लिखे शिक्षित लोग। यह हैं मनोविज्ञान को समझने वाले लोग। कई बार तो मन होता है कि फिर से आदिवासी हो जाएं, इतनी खराब हालत तो उन लोगों की नहीं थी।

किसी ने एक बार आकर ओशो से बताया कि मैं समाजसेवी हूं, आदिवासी इलाकों में जाकर वहां शिक्षा का प्रचार-प्रसार कर रहा हूं। ओशो ने कहा कि पहले एक बार सोच तो लो कि यह सेवा जो कर रहे हो यह क्या करने योग्य है? तुम उनको भी अपने जैसा बना लोगे। सबको अगर शिक्षित कर लिया तो क्या होगा? आज महानगर में जिस प्रकार के लोग रह रहे हैं वह इसी प्रकार के हो जाएंगे न, वे चैन से रह रहे हैं तो उनको रहने दो, क्यों उनके पीछे पड़े हो। दिनभर कामधाम करते हैं, रात को आग जला के चारों तरफ खड़े होकर नाचते हैं, ढोल बजाते हैं, गाते हैं और चैन की नींद सो जाते हैं।

लगता है तुम्हें कुछ ईर्ष्या है उनसे, उनकी यह सुख-शांति देखी नहीं जाती। भाई, एक बार सोच लो कि यह समाज सेवा है कि नहीं। पता नहीं किसने आपके भीतर कूट-कूट कर भर दिया है कि चीजें पूर्वनिधारित हैं, एक-एक सांस गिनी हुई है। भूल के भी सक्रिय ध्यान या संजीवनी ध्यान नहीं करना, जल्दी-जल्दी सांस ली कि मारे गए। भाई सांस का कोटा तो

फिक्स है, बिल्कुल धीरे-धीरे सांस लेना। भूल के भी प्राणायाम मत करना, हो सके तो सांस ही मत लेना, अगर सांस रोक लो तो अनंत काल तक जीवित रहोगे क्योंकि सांसें तो गिनी हुई हैं। अगर जल्दी-जल्दी ली, भस्त्रिका प्राणायाम, कपालभाति वगैरह की तो बस, अभी निपट जाओगे।

अभी बहुत पुरानी बात नहीं है, 1975 में जब मैं मेडिकल कालेज में पढ़ता था तब भारत की औसत उम्र 27 साल थी। 1975 का सरकारी आंकड़ा बता रहा हूं। सरकारी आंकड़ा कुछ अच्छा ही होता है। 18-19 होगी तो उन्होंने 27 कर दी होगी जिससे लोग भड़क न उठें, अब क्या हुआ। अब मेडिकल साइंस के विकास से लोगों की उम्र बढ़ गई, तीस-पैंतीस साल में उम्र डबल हो गई। अब क्या हुआ सांसों की गिनती का, अब कैसे लोग इतनी सारी सांसें लिए जा रहे हैं। और तो और, अस्पताल में जो लोग भर्ती हैं उनको आक्सीजन भी लगी हुई है, नकली सांस ले रहे हैं।

मैंने सुना है सेठ चंदूलाल के बेटे का ऐक्सीडेंट हो गया, भारी चोंट आई, सीने में भी चोट लगी थी इसलिए फेफड़ों ने काम करना बंद कर दिया था इसलिए आईसीयू में भर्ती था। किसी को मिलने नहीं दिया जा रहा था। जब डॉक्टर बाहर आए तो चंदूलाल ने पूछा कि मेरा बेटा ठीक तो है? डॉक्टर ने कहा कि उसको नकली सांस दे रहे हैं। चंदूलाल तो भड़क गया। उसने कहा कि आप जानते हैं कि मैं इस शहर का सबसे बड़ा सेठ हूं, अरे जब फीस असली चुका रहा हूं तो उसको आप नकली सांस क्यों दे रहे हैं। मैं असली नोट दे रहा हूं और अगर आप नकली सांस देंगे तो फिर याद रखना, मेरे पास नकली नोटों के बंडल भी हैं।

अगर सांसें गिनी हुई थीं तो यह भला कैसे हो सकता है। और जरा याद करो जब कोई आतंकवादी बम फोड़ता है, सौ-पचास आदमी की सांस अचानक बंद हो जाती है। यह आदमी जो बस में जा रहे थे और आतंकवादियों ने पूरी बस ही उड़ा दी इन सबकी सांसों की गिनती उसी क्षण समाप्त हो रही थी। यह अलग-अलग गांव-शहर के लोग थे, एक-दूसरे को जानते भी नहीं थे, इनकी कुण्डली भी अलग थी, जन्म तारीख भी अलग थी, पंडित जी ने और तोता जी ने इनकी अलग-अलग भविष्यवाणी भी बताई थी यह तो संयोगवश उस बस में जा रहे थे और आतंकवादी को भी पता नहीं था कि कौन कहां जा रहा है, उसको तो कहीं भी बम फोड़ना था। उसका मूड़ आ गया इस बस को देखकर और फोड़ दिया, सबकी सांसें बंद हो गईं।

अब क्या हुआ सांसों की गिनती का। कोई भी तथ्य आपके सिद्धांतों के पक्ष में नहीं है कि सांसें गिनी हुई हैं, कि अन्य चीजें सुनिश्चित हैं। फिर भी आप मान रहे हैं। क्यों मान रहे हैं उसका मैं आपको कारण बताना चाह रहा हूं। हो सकता है आप यह वाला सिद्धांत छोड़ दें फिर आप तुरंत एक नया सिद्धांत कहीं न कहीं से खोज लेंगे। उस सिद्धांत की मूल वृत्ति क्या होगी, उसकी मूल बात यही होगी कि मैं जिम्मेवार नहीं हूं। इससे बहुत शांति मिलती है। लेकिन जब तक आप ऐसे सिद्धांत खोजते रहेंगे तब तक आपके जीवन में रूपांतरण नहीं होगा, आपके दुख-संताप नहीं मिटेंगे।

जिस क्षण आप अपनी जिंदगी की परेशानी का जिम्मा ले लेंगे कि मैं जिम्मेवार हूं, मेरी मूर्छा जिम्मेवार है तब समाधान बिल्कुल स्पष्ट है कि मैं जागूं, चेतूं, ज्यादा विवेकपूर्ण बनूं, होश

से भरकर जीवन जिऊं तब आंतरिक रूपांतरण होगा। और जब तक आप इस प्रकार के सिद्धांत मानते रहोगे तब तक आंतरिक रूपांतरण होने की कोई गुंजाइश नहीं। उससे ही बचने के लिए हम सारा बौद्धिक जाल खड़ा करते हैं, अब आपकी मर्जी। मैंने तो कोशिश की है कि कूट–कूट के आपकी खोपड़ी से वह सिद्धांत निकाल दूं। अगर आप उनकी रक्षा करने की कोशिश करेंगे तो मैं भी कुछ नहीं कर पाऊंगा और आपको आपकी धारणा के पक्ष में काफी प्रमाण मिल जाएंगे याद रखना। मैंने इतने प्रमाण दिए उसके विपक्ष में लेकिन अगर आप खोजोगे तो पक्ष में मिल जाएंगे।

मैंने सुना है कि एक गांव में बाढ़ आ गई। घरों में पानी भरने लगा तो गांव के लोग जान बचाने के लिए सुरक्षित स्थानों की तरफ चले गये। केवल एक आदमी, जो भगवान का बड़ा भक्त था, अपने घर में फंसा रह गया। जब पानी ज्यादा बढ़ने लगा तो वह छत पर चढ़ गया और भगवान से प्रार्थना करने लगा। तभी एक नाव उसके घर के पास से गुजरी। नाव पर सवार आदमी ने चिल्लाकर उसे नाव पर आने के लिए कहा पर आदमी ने मना कर दिया। बोला– मुझे अपने भगवान पर पूरा विश्वास है। वे मुझे जरूर बचा लेंगे। तुम जाओ।

नाव वाला नाव लेकर चला गया। आदमी फिर प्रार्थना करने लगा। करीब एक घंटे बाद एक मोटरबोट उसकी तरफ आई। मोटरबोट सवार ने भी उस आदमी से चलने का अनुरोध किया पर उस आदमी ने उसे भी मना कर दिया– नहीं भाई। तुम जाओ। मेरे प्रभु मुझे बचाने अवश्य आएंगे। और फिर प्रार्थना में तल्लीन हो गया।

कुछ देर बाद एक हेलिकॉप्टर वहां से गुजरा। छत पर खड़े अकेले आदमी को देखकर उन्होंने रस्सी उसकी ओर फेंकी और हेलिकॉप्टर पर आने का इशारा किया। पर उस आदमी ने उनकी भी मदद लेने से इनकार कर दिया। बोला– 'आप लोग चिन्ता न करें। मेरे भगवान मुझे बचा लेंगे।'

अंततः पानी छत पर आ गया और उस आदमी की डूबकर मौत हो गई।

परलोक पहुंचने पर वह सीधा भगवान के सामने जा खड़ा हुआ और फट पड़ा– भगवान! ये आपने ठीक नहीं किया! मैंने सच्चे मन से आपकी प्रार्थना की! आप पर भरोसा किया, इसके बावजूद आपने मुझे नहीं बचाया! आखिर क्यों?

भगवान आवेश में आकर बोले– 'अरे मूर्ख! मैंने तुझे बचाने के लिए एक नाव, एक मोटरबोट और एक हेलिकॉप्टर भेजा! और तुझे क्या चाहिए था।?'

परमात्मा कोई व्यक्ति नहीं है। सभी व्यक्तियों के भीतर से कार्य कर रही शक्ति है। ओशो कहते हैं कि 'भगवान' शब्द की जगह 'भगवत्ता' शब्द का प्रयोग करना बेहतर है। सारा जगत भगवत्ता से, भागवत् गुणवत्ता से ओत–प्रोत है। भगवान को पूजना नहीं, भगवत्ता को जीना है। देवी–देवताओं से प्रार्थना नहीं करनी, रोम–रोम से दिव्यता को पीना है। दिव्य गुण हमारी चेतना में मौजूद हैं, अधिक संवेदनशील बनकर उनमें डूबना है। आनन्दमग्न होना है। यही सच्ची धर्म–साधना है।

जिंदगी बहुत अद्भुत है, यहां तुम जो खोजो वही मिल जाता है, जिन खोजा तिन पाइयां। अगर तुमने पहले से तय कर लिया है कि इस–इस चीज के पक्ष में खोजना है तब पच्चीसों प्रमाण मिल जाएंगे और आपको लगेगा कि आपकी बात बिल्कुल सही है।

मैंने सुना है मुल्ला नसरुद्दीन मुंबई के भींड़–भाड़ वाले इलाके में रहता था। रोज घर के बाहर सड़क पर पानी छिड़कते हुए एक मंत्र बुदबुदाता। वर्षों से यह क्रम चल रहा था। एक दिन किसी ने पूछा कि श्रीमान क्या कर रहे हैं? मुल्ला ने कहा कि मैं एक मंत्र उच्चार कर रहा हूं जिससे जंगली जानवर हाथी, शेर, चीते इत्यादि यहां नहीं आते। उस आदमी ने कहा कि हद हो गई, मैं भी महानगर का वासी हूं, यहीं आपके पड़ोस में ही रहता हूं, हाथी, गेंड़ा इत्यादि, यहां आदमी को चलने–फिरने की जगह नहीं है हाथी आना भी चाहे तो नहीं आ सकता। जगह तो हो इतने बड़े प्राणी को घुसने के लिए।

उस आदमी ने कहा कि मैंने तो सुना है कि एक बार दूर–दराज से एक कुत्ता बंबई पहुंच गया। क्योंकि सभी को सनक सवार है कि जाना है तो बंबई ही जाना है। उस कुत्ते को भी पता नहीं कहां से सूझ गई कि बंबई पहुंचना चाहिए। हो सकता है किसी फिल्म में काम करने को मिल जाए, अरे कुत्तों की जरूरत तो पड़ती ही है किसी–किसी दृश्य में। रहा होगा कोई सनकी कुत्ता रेबीज का बीमार जो कि पहुंच गया बंबई। बंबई के कुत्ते उस पर बहुत भौंके, उसको कहा कि भागो यहां से, तुम गांव के गंवार कुत्ते। उसने कहा कि ठीक है चला जाऊंगा लेकिन यह तो बताओ कि तुम पहचाने कैसे कि मैं ग्रामीण कुत्ता हूं।

बंबई के कुत्तों ने कहा कि तुम्हारी पूंछ देखकर। तुम जो बाएं–दाएं पूंछ हिला रहे हो यह गांव के अनपढ़ गंवार कुत्ते ही कर सकते हैं, यहां के जो मराठी कुत्ते हैं बंबई वाले हम लोग बाएं–दाएं पूंछ नहीं हिलाते, ऊपर नीचे हिलाते हैं क्योंकि बंबई में बाएं–दाएं पूंछ हिलाने के लिए जगह ही नहीं है तो हम शहरी कुत्तों की अलग ही पहचान है। हमारे बाप–दादों तक को बाएं–दाएं हिलाने की जगह नहीं थी। हम लोगों ने सुना है कि बहुत पहले कभी पूर्वज बाएं–दाएं पूंछ हिलाया करते थे, हमारा तो पालन–पोषण ही ऐसे हुआ है कि हम ऊपर–नीचे पूंछ हिलाएं, तो पक्का है कि तुम कहीं बाहर से आए हो, भागो यहां से। उसको दौड़ा दिया बेचारे को।

तो वह आदमी कहने लगा मुल्ला से कि कुत्तों को पूंछ हिलाने की जगह नहीं है और तुम कह रहे हो कि हाथी, शेर, चीता, गेंड़ा, मैंने तो आज तक कभी सुना नहीं। मैं भी तो पच्चीस साल से बंबई में रह रहा हूं कि कभी यह जानवर यहां आए हों। नसीरुद्दीन ने कहा कि देखा न, तुमने प्रमाणित कर दिया मेरे सिद्धांत को, मैं पिछले तीस सालों से यह नियमित रूप से कर रहा हूं। अब तुमने खुद कहा न पच्चीस साल से आज तक मैंने कभी नहीं सुना कि यहां कोई हाथी, शेर इत्यादि आए हों। आ ही नहीं सकते इस मंत्र का ऐसा प्रताप है।

यह बड़ी मुसीबत है अगर तुमने पहले से एक फिक्स धारणा बना ली है तो तुमको उसके पक्ष में सबूत मिल जाएंगे, अब तुमको कोई हरा नहीं सकता।

16

सम्मोहन और ध्यान का संयोग

मां हरि संगीता ने पूछा है कि जब मैं अकेले बैठती हूं तो ओंकार सुनाई देने लगता है, उसके प्रति ध्यान दूं अथवा नहीं।

जब आप सम्मोहन प्रज्ञा कर रहे हैं तो उस समय ओंकार श्रवण में ध्यान न दीजिए। हमारी चेतना से दो दिशाएं जातीं हैं, एक सबकॉन्शस की तरफ गहराई में और दूसरी सुपरकॉन्शस की तरफ समाधि में। जब आप ओंकार श्रवण करेंगी तो आप सुपरकॉन्शसनेस में, समाधि में स्थित हो जाएंगी और सम्मोहन प्रज्ञा में हमारा प्रयास है गहराई की तरफ, अवचेतन की तरफ जाने का। इसलिए हमारा आपसे निवेदन है कि ओंकार सुनाई भी दे तो उस तरफ अभी ध्यान मत दीजिए, आप गहराई की तरफ ध्यान लगाइए।

अगला प्रश्न है कि क्या सम्मोहन और ध्यान को आपस में जोड़ सकते हैं?

निश्चित ही जोड़ सकते हैं, सच पूछो तो जुड़े हुए हैं। ऐसा समझें कि हम एक सात मंजिला इमारत की चौथी मंजिल में रहते हैं। वह हमारा चेतन मन है बीच में। उसके नीचे तीन मंजिलें हैं सबकॉन्शस माइण्ड की, पहली मंजिल है इंडीविजुअल सबकॉन्शस, व्यक्तिगत अवचेतन। दूसरी है कलेक्टिव सबकॉन्शस, सामूहिक अवचेतन। तीसरी है कॉस्मिक सबकॉन्शस, ब्रह्म अवचेतन। ठीक इसी प्रकार इस चौथी मंजिल के ऊपर तीन मंजिलें हैं, पांचवी, छठवीं, सातवीं। उनको हम क्रमशः व्यक्तिगत अतिचेतन, सामूहिक अतिचेतन और ब्रह्म अतिचेतन

कह सकते हैं। इंडीविजुअल सुपरकॉन्शसनेस, कलेक्टिव सुपरकॉन्शसनेस और कॉस्मिक सुपरकॉन्शसनेस।

ऊपर की तरफ जाने की यात्रा का नाम ध्यान है, समाधि है और नीचे तरफ जाने की यात्रा का नाम सम्मोहन है। ये सातों मंजिलें एक ही भवन के हिस्से हैं, एक–दूसरे से जुड़े ही हुए हैं। हमको जोड़ना नहीं है, वहां आपस में जोड़ है ही। किन्तु एक बात तय है कि एक बार में हम एक ही दिशा में जा सकते हैं। अगर आप नीचे की सीढ़ियों से उतर रहे हैं तो नीचे तक जाएं, पहले नीचे का पूरा घूम लें, उससे परिचित हो जाएं। दोनों को इकट्ठा नहीं कर सकते कि एक पैर नीचे वाली सीढ़ी पर रखो और एक पैर ऊपर की सीढ़ी पर रखो। क्रमशः जा सकते हैं, पहले पूरा नीचे घूम आएं फिर वापस लौटकर ऊपर की तरफ जाएं, ऐसा आप कर सकते हैं। और वही प्रयोग हम यहां पर सिखा भी रहे हैं।

इस संबंध में ओशो से भी बार–बार सवाल पूछा गया है। ओशो ने कहा है कि इन दोनों का आपस में जोड़ है ही और साधक को इन दोनों का प्रयोग बारी–बारी से करना चाहिए। यह पूरी चेतना की सात जो मंजिलें हैं वे पूरी हमारी हैं, क्यों न हम संपूर्णता से परिचित हों। ये पूरा मकान हमारा है, हम इसके मालिक हैं। हम किसी चीज को खाली अंजाना क्यों छोड़ें। तो चीजें जुड़ी हुई हैं अस्तित्व में। हम चीजों को खण्ड–खण्ड कर लेते हैं, तोड़ लेते हैं। वस्तुतः कहीं टूटा हुआ है नहीं!

ओशो ने जो ध्यान विधियां बनाई हैं उनमें से अक्सर प्रथम हिस्सा सम्मोहन वाला है, सबकॉन्शस में ले जाने वाला है जैसे कि शिथिलीकरण का प्रयोग, सांस पर ध्यान देने का प्रयोग, यह सुझाव कि मन शांत हो रहा है, मन शांत हो रहा है, शरीर शिथिल हो रहा है, सांस धीमी हो रही है, ये सुझाव सम्मोहन के सुझाव हैं लेकिन फिर यहां से मुड़ जाते हैं कि अब भीतर खूब गहन होश सध गया। तो दोनों का उपयोग कर लिया, पहले सबकॉन्शस की तरफ गए सम्मोहक सुझाव के द्वारा, उस सुझाव ने मंत्र जैसा कार्य किया, हमारी उस भावना के साथ शरीर रिलैक्स हो गया, सांस धीमी हो गई, मन शांत हो गया और तब हम अतिचैतन्य की तरफ मुड़ गए। यहां जो प्रयोग हम आपको करवाते हैं उसमें शुरुआत में सम्मोहन का प्रयोग है और अंत में वापस ध्यान में ले जाने का प्रयोग है।

एक मित्र का और ऐसा ही सवाल है कि ओशो का इस संबंध में क्या सुझाव है?

ओशो के लगभए 26 घंटों के प्रवचन एक ही एम.पी.थ्री. में संकलित किए गए हैं उस एम.पी.थ्री. का नाम है सम्मोहन और पुनर्जीवन। आपसे निवेदन है कि आप इस सी.डी. को जरूर ले जाइएगा। लगभग दो–तीन महीने में आप समझ पाएंगे कि सम्मोहन के बारे में

ओशो की पूरी दृष्टि क्या है, पिछले जन्मों के ज्ञान के बारे में क्या है और इसको समझकर बहुत सी बातें क्लियर होंगी। ये जो डाउट पैदा हुआ है सम्मोहन और ध्यान का वह भी खूब–खूब क्लियर हो जाएगा।

एक जगह तो ओशो ने उसमें ये भी कहा है, ओशो जब वर्ल्ड टूर पर थे तो किसी पत्रकार ने ओशो से पूछा था ट्रिनिटी के बारे में, कहीं ईसाई मुल्क में थे उस समय, ओशो ने कहा कि ईसाई जिसको ट्रिनिटी कहते हैं वह तो बकवास है। ईश्वर और ईश्वर पुत्र, और पवित्रात्मा लेकिन एक दूसरी ट्रिनिटी है जो अध्यात्म में थी, है और सदा–सदा रहेगी। भविष्य में अध्यात्म के नाम पर वही तीन बातें बचेंगी। ओशो ने कहा, उसको मैं वास्तविक ट्रिनिटी कहता हूं। वे हैं रेचन वाली विधियां, सम्मोहन की विधियां और ध्यान की विधियां– ये तीन चीजें। ये अध्यात्म के अनिवार्य अंग हैं, इनमें से एक को भी कम नहीं किया जा सकता। ये है असली त्रिवेणी, असली त्रिमूर्ति।

रेचन की विधियां अपने चेतन मन की सफाई के लिए हैं, चौथी मंजिल को झाड़ू–बुहारी लगानी होगी क्योंकि वहां बहुत गंदगी है, कूड़ा–कचरा जमा है उसको हटाना होगा। जिस मंजिल पर हम रहते हैं, कॉन्शस माइण्ड पर, उसको साफ–सफाई की जरूरत है। तो रेचन के लिए मनोवैज्ञानिकों ने बहुत सारी थेरेपी बनाई हैं उनका मुख्य काम रेचन है, कैथार्सिस है। ओशो ने बहुत सारी विधियां बनाई हैं जो रेचन से संबंधित हैं। उदाहरण के लिए डाइनैमिक मेडिटेशन, बॉर्न अगेन मेडिटेशन, मिस्टिक रोज मेडिटेशन, ओशोधारा की लीला ध्यान की विधि, जिबरिश मेडिटेशन, हिन्दी में जिसको देववाणी ध्यान कहा है ये सब सफाई की विधियां हैं, ये बिल्कुल जरूरी हैं।

जैसे हम अपने तन को स्नान करके साफ करते हैं वैसे ही मन को साफ करने की जरूरत है ताकि हमारा चेतन मन साफ–सुथरा हो, विवेकपूर्ण हो। फिर हमारे नीचे भी तीन खण्ड हैं, उनमें जाना भी जरूरी है। उसको जानना, पहचानना वहां क्या है किस ढंग की मेकैनिज्म से हम संचालित होते हैं उससे परिचित हो जाएं तो सम्मोहन की विधियां काम आएंगी। और फिर ऊपर की तीन मंजिलों में जाएं ब्रह्म अचेतन तक, अपने वास्तविक ब्रह्म स्वरूप को जानें। वह भी हमारे होने का हिस्सा है। तो तीन चीजें ओशो कहते हैं सदा–सदा अध्यात्म में रहेंगी यही असली ट्रिनिटी है, ईसाइयों की ट्रिनिटी तो बचकानी बातें हैं। असली ट्रिनिटी है कैथार्सिस वाली विधियां, सम्मोहन की विधियां और ध्यान समाधि की विधियां।

अगला प्रश्न– ध्यान समाधि और सुरति समाधि में मैं आई थी, तब सिर पर पटका बांधना अनिवार्य था। क्या इसके पीछे कोई आध्यात्मिक कारण है?

आध्यात्मिक कारण नहीं है, सामाजिक कारण है। क्योंकि अन्य समाधि कार्यक्रमों में हम

गुरुग्रंथ साहिब से लिए गए शब्द का प्रयोग करते हैं, गुरुनानक देव जी की वाणी, अर्जुन देव जी की वाणी, सिक्खों की जिद है कि जब शब्द सुना जाए तो सिर पर पटका होना चाहिए, इससे गुरु साहबों का सम्मान होता है। अगर पटका नहीं बांधा तो आप उनका अपमान कर रहे हैं। विशेषकर जब माधोपुर में, पंजाब में आश्रम बनाया वहां इस प्रकार की बात झगड़े का कारण बन सकती थी। अगर किसी को पता लग जाए कि बिना सिर ढांके शबद गा रहे थे या सुन रहे थे, वह धड़ से सिर ही अलग करने आ जाएंगे।

लोग सनकी हैं, किसी भी बात पर झगड़ने को तैयार रहते हैं इसलिए पटका बांधना अनिवार्य किया जब शबद बज रहा है तब। उसके आगे–पीछे आप उतार सकते हैं, समाधि कार्यक्रम में भी आप पटका उतार सकते हैं लेकिन कम से कम शबद बजते समय बांधे रखिए। फिर दिल्ली में आश्रम बना, कर्मा में बना वहां हमने इस चीज को अनिवार्य नहीं रखा है, लेकिन पंजाब में और माधोपुर में विशेषरूप से अनिवार्य किया है ताकि व्यर्थ के झगड़े–झंझट न हों। हमारी जिंदगी थोड़ी सी है, छोटा सा समय है, थोड़ी सी ऊर्जा है उसको हम विधायक दिशा में लगाएं, व्यर्थ की बातों में, संघर्ष करने में गंवाएं नहीं।

इतना समय नहीं कि हम छोटी–छोटी बातों में समय गंवाएं। चाहे वह मूढ़तापूर्ण ही क्यों न हो, उसको चुपचाप मान लो ताकि फिजूल का संघर्ष न हो। जो काम हमें करना है वह हम कर पाएं, हमको क्या फर्क पड़ता है सिर पर पटका बांध लिया तो। तो नेपाल में, कर्मा में, दिल्ली में, मुरथल में यहां अनिवार्य तो नहीं है किन्तु हम रेकमेण्ड करते हैं, लेकिन माधोपुर में निश्चित ही अनिवार्य है। तो इसका कोई आध्यात्मिक कारण नहीं है, यह बिल्कुल सामाजिक कारण है और कुछ नहीं।

अगला सवाल है कि जब से मैंने होश संभाला है तो मैं महसूस करता हूं कि जब मैं अच्छा सोचूं तो बुरा होता है और बुरा सोचूं तो अच्छा होता है, अब क्या करूं?

कृपा करके बुरा ही सोचो। ऐसा लगता है कि परमात्मा आपका दुश्मन है इसलिए जो आप सोचते हो उसका उल्टा कर देता है। अब आप इस विधि को समझ गए हो तो फिर बुरा ही सोचते रहो। रोज सुबह उठते ही प्रार्थना कर लिया करो कि हे प्रभु आज मेरी जिंदगी का आखिरी दिन हो, आज मुझे खाना–पीना भी नसीब न हो, आज मैं बीमार पड़ जाऊं, दुनिया भर की बीमारियां मुझको हो जाएं, मेरा ऐक्सीडेंट हो जाए और मेरा ही क्यों, कोई आतंकवादी आकर इस पूरे गांव को ही नष्ट कर दे और अंतर्राष्ट्रीय युद्ध शुरू हो जाए। गांव ही क्यों पूरा देश और विश्व ही बर्बाद हो जाए।

हे प्रभु! ब्लैकहोल इस पूरी पृथ्वी को खींच ले, गायब कर दे या कोई तारा आकर टकरा जाए, विस्फोट कर जाए, धज्जियां उड़ जाएं सबकी और हे परमात्मा, प्रलय कब होगी, कब से

इंतजार कर रहे हैं कि कयामत का दिन आयेगा। आज ही क्यों नहीं आ जाता, काल करे सो आज कर, आज करे सो अब, पल में प्रलय होयेगी, बहुरि करेगा कब। थोड़ा कबीर साहब का वचन प्रभु को बताना कि बहुत देर हो रही है, जब आपको पता चल ही गया तो फिर इस ट्रिक का प्रयोग करें। फिर पक्का है कि ये सारी बातें नहीं होंगी।

मैंने सुना है एक युवक मंदिर में प्रार्थना कर रहा था कुछ इसी प्रकार की, कह रहा था कि हे प्रभु मुझे कष्ट दे, मुझे संतापग्रस्त कर दे, मेरा इतना खर्च बढ़ा दे कि मैं लुट जाऊं, मैं दीवालिया हो जाऊं, मेरे बैंक बैलेंस में एक पैसा न बचे, बैंक वाले मेरा एकाउण्ट क्लोज कर दें, हे प्रभु मुझे तड़पा, परेशान कर, मेरी जिंदगी चिंताओं ही चिंताओं से भर जाए, लोग तो मरने के बाद चिता पर जलते हैं, मैं जीते जी चिंता में जल जाऊं। तभी परमात्मा की आवाज मंदिर में गूंजी। पहले तो किसी ने सुनी ही नहीं थी प्रभु की आवाज। हजारों लोग रोज प्रार्थना करते थे लेकिन कभी किसी को उत्तर नहीं मिला था लेकिन जब इस युवक ने प्रार्थना की तो ईश्वर जोर से चिल्लाया कि बेवकूफ! कितनी लंबी प्रार्थना कर रहा है, अरे संक्षिप्त में बोल न कि मेरी शादी करवा दे। तो लगता है कि तुम्हारे साथ कुछ ऐसा ही हो रहा है।

अंतिम सवाल– आज से लगभग सात वर्ष पूर्व मेरी मुलाकात एक फकीर बाबा से हुई थी, मैंने उनका मजाक उड़ाया। उन्होंने मेरे पास्ट के बारे में जो बताया सबकुछ सच था और मेरे भविष्य के बारे में भी उन्होंने जो बताया वह सही–सही होता जा रहा है। उन्होंने यह भी कहा था कि अट्ठाइस से तीस वर्ष के बीच तुम्हारी मृत्यु हो जाएगी, इसी बात से मुझे बहुत भय लगता है, अब क्या करूं?

अब इसमें तुम्हारे करने को बचा क्या है, अभी भी वही कर्ताभाव। देखते हैं हमारा मन कैसा अजीब है? जब उनकी बताई सारी बातें सही निकल रही हैं, इसका मतलब जो तुम्हारे जीवन में घट रहा है उसके कर्ता तुम नहीं हो, ये कहानी पहले से ही रची हुई लग रही है। आप सिर्फ एक पात्र हो, कहानीकार कोई और है, डायरेक्टर कोई और है और उसी के निर्देश पर सारा खेल चल रहा है। तभी तो कोई बता सकता है आपका भविष्य, नहीं तो कैसे बताएगा।

अगर पहले से ही वह निर्धारित नहीं है फिर कैसे बता सकेंगे। जो चीज आप तक को नहीं पता वह फकीर बाबा ने आपको बता दी और आप कह रहे हो कि वे सारी बातें सही निकल रही हैं। और अब अंत में कह रहे हो कि उन्होंने कहा था कि अट्ठाइस से तीस साल में मरोगे तो अब डर लग रहा है। तो डरो, और क्या कर सकते हो, जी भर के डरो। घड़ी रोक लो, कैलेंडर चेंज ही मत करो, पुराना ही लटका रहने दो, तारीख बदलो ही नहीं, घड़ी का सेल ही निकाल लो... और क्या कर सकते हो तुम?

अभी–अभी मैं जो कर्ताभाव और द्रष्टाभाव की बात कर रहा था वापस उसी पर आता हूं। ओशो की दो किताबें हैं एक का नाम है 'ज्योतिष अर्थात् अध्यात्म' और दूसरी है 'ज्योतिष–अद्वैत का विज्ञान'। निश्चित ही ज्योतिष का उपयोग हो सकता है अध्यात्म की दिशा में क्योंकि अगर एक बार ये बात हमारी समझ में आ गई कि चीजें अपने आप हो रही हैं, मैं करने वाला नहीं हूं तब अचानक हम साक्षी चैतन्य में रम जाएंगे। अब करने को कुछ नहीं रह गया।

इसलिए मैं कह रहा हूं कि डर लग रहा है तो डरो। तुम्हारी किस्मत में डरना ही लिखा है तो डरते रहो, कांपते रहो और सबको बताते रहो कि इतने दिन और बचे, उल्टी गिनती शुरू कर दो। नहीं!... अगर समझ विकसित हो जाएगी तो सारा भय समाप्त हो जाएगा। इतनी घटनाएं घट चुकीं उस फकीर बाबा के कहे अनुसार, अब स्वीकारभाव में आ जाओ, इसका मजा लेना शुरू करो। गंभीरता का सवाल ही नहीं, जब चीजें तय ही हैं। और इससे क्या फर्क पड़ेगा कि तीस साल में मरे, कि साठ साल में मरे, कि नब्बे साल में!

तुम क्या सोचते हो, क्या लंबा जीने से कुछ विशेष लाभ हो जाएगा? जीसस क्राइस्ट तीस साल में मर गए थे, विवेकानंद छत्तीस साल में मर गए थे, शंकराचार्य तैंतीस साल में मर गए थे लेकिन अपना जीवन पूर्णता से जीकर मरे। साक्षीभाव में, पूरे आनंद के साथ, शांति के साथ जिये और उसी आनंद के साथ विदा हुए। लंबा जीने से क्या हो जाएगा, मोरारजी देसाई सौ साल जिए स्वमूत्रपान करते हुए, क्या आपको वैसा जीवन जीना है? जब स्वमूत्रपान करके सौ साल जी गए तो परमूत्रपान करते तो शायद दो सौ साल हो जाते। पानी पीना छोड़ ही देते। ऐसे जीवन से क्या मिलेगा, क्या अर्थ है, किसलिए जीना?

मैं आपका मुख्य प्वाइंट बदलना चाह रहा हूं, जीवन की लंबाई अर्थ नहीं रखती, जीवन की गहराई अर्थ रखती है। कितना जिए ये महत्त्वपूर्ण नहीं है, कैसे जिए ये महत्त्वपूर्ण है। चार दिन जिए लेकिन सजग होकर, प्रेमपूर्वक, आनंदपूर्वक, तथाताभाव में, उत्सव मनाते हुए... ये महत्त्वपूर्ण है। और चार सौ साल जिए रोते–बिलखते हुए, मोटे–मोटे चश्मे लगाकर, कान में मशीन लगाकर, सारे नकली दांत होंगे, रोज डेंटिस्ट के पास जाना पड़ रहा होगा, रोज डायलिसिस चल रही होगी।

आखिरी तीन सौ साल तो अस्पताल में ही गुजरेंगे, दिन–रात इंजेक्शन लग रहे होंगे, मुट्ठियां भर कैपसूल खा रहे होगे, नकली ऑक्सीजन लगी होगी, पेसमेकर लगा होगा जो कि हृदय धड़का रहा होगा। और आस–पास के सारे डॉक्टर और नर्स दुआ कर रहे होंगे कि हे भगवान इनको उठा ले, यह आदमी मरता ही नहीं। उनको क्या पता कि स्वमूत्रपान कर रहे हैं, ये नहीं मरने वाले।

मैंने सुना है एक बूढ़ा–बुढ़िया रामदेव बाबा के शिष्य थे, खूब अनुलोम–विलोम करते थे। बुढ़ापे में और कुछ करने को तो रह ही नहीं जाता इसलिए अनुलोम–विलोम बैठे–बैठे करते रहो, रिटायरमेंट के बाद करोगे क्या, अच्छा गोरख धंधा है। तो उनकी लंबी उम्र हो गई, बड़ी

प्रसिद्धि फैल गई, सौ साल पार कर गए, एक सौ तीन, एक सौ चार, जब बूढ़ा एक सौ दस साल का हो गया तब उसकी मृत्यु हुई। तब उसकी पत्नी एक सौ आठ साल की थी। बेचारी विधवा हो गई। वह बुढ़ऊ पहुंचे परलोक, निश्चित ही ऐसे आदमी को तो स्वर्ग मिलना ही था। चालीस–पचास साल से जो व्यक्ति अनुलोम–विलोम कर रहा है उसको अगर स्वर्ग नहीं मिलेगा तो किसको मिलेगा। बैंड–बाजे से वहां उसका स्वागत किया गया, उर्वशी खड़ी हुई थीं अर्धनग्न, दौड़ के आई और गले लग गई और कहा कि आइए स्वर्ग में आपका स्वागत है। मेनका भागी–भागी आई कि महायोगी आए हुए हैं और अप्सराएं चारों तरफ आकर नृत्य करने लगीं। वह बूढ़ा आदमी एकदम से गालियां देने लगा। वे अप्सराएं हैरान हुईं कि क्या हो गया, क्या हमसे कोई भूलचूक हो गई, आप गालियां क्यों दे रहे हैं? बूढ़े ने कहा कि नहीं–नहीं, आप लोगों को नहीं दे रहा हूं, बाबा रामदेव को दे रहा हूं। उन लोगों ने पूछा कि उन्होंने क्या बिगाड़ा है?

बूढ़े आदमी ने कहा कि अगर उसके चक्कर में न पड़े होते तो हम कम से कम तीस–चालीस साल पहले यहां आ गए होते। पिछले तीस साल उस बुढ़िया के साथ बिताए और यहां मेनका और उर्वशी से चूक गए और हम वहां बेवकूफ की तरह अनुलोम–विलोम कर रहे थे। और खुश हो रहे थे कि एक सौ दस साल जिए, नहीं तो सत्तर–पचहत्तर में मामला खत्म हो जाता और स्वर्गवासी हो जाते और यहां कल्पवृक्ष के नीचे बैठकर मजा करते।

तो ऐसा नहीं सोचना कि जो लंबी उम्र जी रहे हैं वे मरने के बाद प्रसन्न होंगे। वे वहां जाकर खून के आंसू रोएंगे कि हमने बेकार में इतना समय गंवाया, कष्ट ही कष्ट भुगतते रहे बुढ़ापे में। बेटा–बहू, नाती–पोते और नाती–पोतों की बहुएं भी आ गईं थीं, वह तीसरी–चौथी पीढ़ी और सब रोज भगवान से प्रार्थना करते थे कि हे प्रभु! सबको उठा रहा है इनको क्यों नहीं उठाता। प्रभु ने सुनी मगर देर से सुनी। तो ये नहीं सोचना कि जिनको लंबी उम्र मिल गई है उनको कुछ वरदान हासिल हो गया है। उम्र का सवाल नहीं है कि तुम कितना जिए, कैसे जिए, कितनी त्वरा से जिए ये महत्त्वपूर्ण है।

कर्ताभाव में जिए कि साक्षीभाव में जिए, यह बिन्दु महत्त्वपूर्ण है। और अच्छा है कि ज्योतिषी की भविष्यवाणी सही हो रही है तो तुम्हें जागने का एक अवसर है कि जो थोड़ा–बहुत समय बचा है कम से कम इसको तो अध्यात्म में लगा दो। अब इसको वैसा न गंवाओ जैसा कि अन्य लोग गंवा रहे हैं। उन लोगों को तो पता नहीं है कि कब मरेंगे, तुमको तो पता है, कम से कम तुम तो होशोहवास में आ जाओ। याद रखना, मृत्यु बड़ा जगाने वाला तत्व है। मृत्यु दुश्मन नहीं है, अगर जगत में मृत्यु न होती तो याद रखना, फिर कोई अध्यात्म भी नहीं होता।

गौतम बुद्ध जागे एक अर्थी को देखकर, मीराबाई जागीं अपने मायके और ससुराल के सारे लोगों की मृत्यु देखकर। चीन के संत लाओत्से को जागरण घटित हुआ वृक्ष के नीचे बैठे

हुए। उन्होंने देखा कि ऊपर से एक पीला पत्ता, सूखा हुआ गिरा और स्मरण दिला गया कि एक दिन ऐसे ही मैं भी गिर जाऊंगा। याद आ गई मौत की, गिरते हुए पत्ते को देखकर अपना गिरना याद आ गया कि आज जीवन के वृक्ष से लगा हूं तो हरा हूं, ऐसा सदा नहीं रहेगा, अभी पतझड़ आएगा और मैं भी गिर जाऊंगा। लाओत्से इतने महान संत हो सके उस पीले पत्ते की वजह से।

दुनिया में आज तक जो भी जागा है उसे मृत्यु ने ही झकझोरा और जगाया है। तो मृत्यु को शत्रु जैसा मत समझना। शंकराचार्य की कहानी तो सुनी होगी, मगरमच्छ ने पैर पकड़ लिया, बारह साल की उम्र थी नदी में स्नान कर रहे थे। उन्होंने अपनी मां से कहा कि अगर तू मुझे अनुमति देगी कि मैं भी संन्यासी हो जाऊं तो ही ये मगरमच्छ मुझे छोड़ेगा वरना नहीं। बोल क्या कहती है? एक तरफ बेटे की मौत और दूसरी तरफ बेटा संन्यासी होना चाह रहा है! मां ने भले ही बेमन से चुना लेकिन यही चुना कि संन्यासी हो जाओ। शंकराचार्य ने कहा कि ठीक, मैं इस शर्त पर मगरमच्छ से विनती कर सकता हूं कि छोड़ दे वरना जीकर भी क्या करूंगा।

अभी थोड़े दिनों पहले एक महिला गाना सुना रही थी कि हमें तुमसे प्यार कितना ये हम नहीं जानते, मगर जी नहीं सकते तुम्हारे बिना। मैंने पूछा कि ये गाना तुमने पहली बार कब गाया था? उसने बताया कि उसका एक प्रेमी था जो कि उससे बहुत प्रेम करता था। एक बार दोनों किसी नदी के किनारे गए हुए थे। वहां पर जो गाइड था उसने बताया कि यहां के जो मगरमच्छ हैं इनकी गिनती काफी कम होती जा रही है नदी में क्योंकि इनको अब भोजन नहीं मिलता। पहले यहां से लोग गुजरा करते थे, जानवर भी आते–जाते थे। अब यहां कोई आता–जाता नहीं इसलिए मगर भूखे मर रहे हैं। तभी उसके प्रेमी ने उससे पूछा कि मैं भी तुम्हारे बिना मरा जा रहा हूं, बताओ तुम मुझे कितना प्यार करती हो? तब उसने ये गीत गाया कि हमें तुमसे प्यार कितना ये हम नहीं जानते, हमको तो नहीं पता कि हम प्यार करते हैं, ये हम नहीं जानते मगर जी नहीं सकते तुम्हारे बिना। ये बेचारे भूखे मर रहे हैं, अरे कुछ काम आ जाओ! जिंदगी में तो किसी के काम न आए और उसने कहा कि अब कूद जाओ इस नदी में, कम से कम इनके काम आ जाओगे! मगर जी नहीं सकते तुम्हारे बिना। हमें तुमसे प्यार कितना ये हम नहीं जानते, इसका तो कुछ पक्का नहीं पता है। तो शंकराचार्य ने अपनी मां से कहा कि मगर से छूटने का निवेदन तो कर सकता हूं लेकिन शर्त ये है। मां ने कहा ठीक, बेटा कम से कम जीवित तो रहेगा। बारह साल की उम्र में शंकराचार्य संन्यासी हो गए। ये भी कोई उम्र थी संन्यास की? हिन्दुओं की तो परंपरा है पचहत्तर के बाद संन्यस्त होने की। लेकिन किसने देखा है कि पचहत्तर साल तक कोई बचेगा कि नहीं, एक घड़ी का भी तो भरोसा नहीं!

क्या आपको पता है कि हमारे और आपके जैसे ही ढाई लाख मनुष्य प्रतिदिन मरते हैं, अगर कोई युद्ध, प्राकृतिक घटनाएं और आतंकवाद की घटनाएं न हों तो। बिल्कुल सब कुछ सामान्य चल रहा हो तो ढाई लाख आदमी रोज धरती पर मरते हैं। किस क्षण हमारी बारी

होगी, क्योंकि वे जो लोग मर गए उनको भी एक क्षण पहले पता नहीं था कि उनकी बारी आ गई है। जो जीवन के इस तथ्य को देखेगा वह चौंकेगा, जागेगा। अगर मृत्यु नहीं होती तो जगाने वाला यह माध्यम ही नहीं होता, ये बहाना ही नहीं होता और तब इस जीवन में वह जो सुपरकॉन्शसनेस, परम साक्षी चैतन्य है, वह कभी भी न घटता।

उस फकीर बाबा को धन्यवाद देना जिसने बता दिया, उसकी भविष्यवाणी सही हो या न हो इससे कोई लेना-देना नहीं है, पर एक बात तो पक्की है कि मरोगे। अट्ठाइस में नहीं मरोगे तो उनतीस में मरोगे या तीस में, या इकतीस में, बत्तीस में, फाइनली तो मरना ही होगा, इससे क्या फर्क पड़ता है कि किस दिन मरे! कुल मिलाकर सात ऑप्शन हैं, संडे से लेकर मंडे तक, कुल सात ही दिन हैं- इसी में से किसी दिन मरना पड़ेगा। कोई बहुत ज्यादा चुनाव नहीं है कि सोमवार को, कि मंगलवार को, तो कुछ खास फर्क नहीं पड़ता।

एक बात पक्की है कि मरना होगा और इस बात को अगर स्वीकार लो तो तुम्हारे जीने का तरीका बदल जाए। जो पहले प्रश्न में बात आई थी कि जीवन को पकड़कर जिएं कि साक्षीभाव से, तब मामला एकदम से सुलझ ही गया, पकड़ने को यहां कुछ है ही नहीं। तो जो व्यर्थ मेहनत हम कर रहे थे पकड़ने की वह बात ही खत्म हो जाएगी। फिर तो एक ही ऑप्शन रह गया। अब तो इस तमाशे को देखो साक्षीभाव से और इसका मजा लो, अध्यात्म में प्रवेश हो जाएगा।

सुनो यह किस्सा- शाम मुल्ला अपनी रसोई में कुछ बना रहा था। जरूरत पड़ने पर वह अपने पड़ोसी के पास गया और उससे एक बरतन माँगा और वादा किया कि अगली सुबह उसे वह बरतन लौटा देगा।

अगले दिन मुल्ला पड़ोसी के घर बरतन लौटाने के लिए गया। पड़ोसी ने मुल्ला से अपना बरतन ले लिया और देखा कि उसके बरतन के भीतर वैसा ही एक छोटा बरतन रखा हुआ था। पड़ोसी ने मुल्ला से पूछा- 'मुल्ला! यह छोटा बरतन किसलिए?' मुल्ला ने कहा- 'तुम्हारे बरतन ने रात को इस बच्चे बरतन को जन्म दिया इसलिए मैं तुम्हें दोनों वापस कर रहा हूँ।'

पड़ोसी को यह सुनकर बहुत खुशी हुई और उसने वे दोनों बरतन मुल्ला से ले लिए। अगले ही दिन मुल्ला दोबारा पड़ोसी के घर गया और उससे पहलेवाले बरतन से भी बड़ा बरतन माँगा। पड़ोसी ने खुशी-खुशी उसे बड़ा बरतन दे दिया और अगले दिन का इंतज़ार करने लगा।

एक हफ्ता गुज़र गया लेकिन मुल्ला बरतन वापस करने नहीं आया। मुल्ला और पड़ोसी बाज़ार में खरीदारी करते टकरा गए। पड़ोसी ने मुल्ला से पूछा- 'मुल्ला! मेरा बरतन कहाँ है?' मुल्ला ने कहा- 'वो तो मर गया!' पड़ोसी ने हैरत से पूछा- 'ऐसा कैसे हो सकता है? बरतन भी कभी मरते हैं!' मुल्ला बोला- 'क्यों भाई, अगर बरतन जन्म दे सकते हैं तो मर क्यों नहीं सकते?'

बरतन तक मर जाते हैं, बेचारे आदमियों का क्या! औरों की तो छोड़ो, ज्योतिषी भी मर जाते हैं, डॉक्टर तक मर जाते हैं!

जब तक जीवन है, मौज से जियो। आओ, अब हम ओशो नीलांचल के प्यारे गीत के संग उत्सव मनाकर यहां से विदा हों। कौन जाने कल हम हों, कि न हों! आज का जश्न मनाएं। ओशो की यही देशना है कि क्षण–क्षण जियो। अभी और यहीं! अतीत जा चुका, अब है नहीं। भविष्य आया नहीं। केवल यह पल हमारे पास है। इस पल की जीवंतता का जश्न मनाएं। अस्तित्व की इस भेंट के लिए शुक्रगुजार हों। सभी मित्र खड़े होकर नाचें, गाएं।

फूलों के साथ जश्न मनाने का शुक्रिया, ओशो जमीं पे आपके आने का शुक्रिया।
आगाज़ कर दिया है महारास आपने, ये रस्मे–इश्क आज निभाने का शुक्रिया।
चश्मे–करम पे आपकी कुर्बान जाईये, कदमों में अपने लाके बिठाने का शुक्रिया।
ये आसमाने–हक के मुसाफिर की है दुआ, गिरता हुआ जहाज बचाने का शुक्रिया।
थिरकन है सबके पांव में, होंठों पे गीत हैं, मस्ती के साथ जीना सिखाने का शुक्रिया।
वो कमली वाला एक है कमली भी एक है, परदा दुई का पल में गिराने का शुक्रिया।
फूलों के साथ जश्न मनाने का शुक्रिया, ओशो जमीं पे आपके आने का शुक्रिया।

17

प्रेम का अनुभव इतना विरल क्यों?

आज पहला प्रश्न पूछा गया है कि साधक के सम्मुख सबसे बड़ी बात कौन सी है?

सर्वप्रथम एक यथार्थ कथा सुनो– एक बार दो महिलाओं को किसी अपराध में बीस साल की सजा मिली थी। दोनों जेल में एक ही कोठरी में बंद थीं बीस साल तक, खूब बातचीत होती रही दोनों की। जब बीस साल बाद वो छोड़ी गईं तो एक–दूसरे से विदा होते हुए अपने घर को जाते हुए उन्होंने कहा कि अच्छा बहन, बाकी बातें फोन पर करेंगे।

प्यारे मित्रों, अपने भीतर ये जो हमेशा बात करने वाला मन है, यही हमारी चेतना को आच्छादित कर लेता है और चेतना का अनुभव नहीं होने देता। किस प्रकार यह विचारों का जाल कटे, यही सबसे बड़ी बात है साधक के सम्मुख। यही सबसे बड़ी बात भी है, एक प्रकार से कठिन भी और दूसरे प्रकार से सरल भी है। अगर हमारा जो विचारों के साथ तादात्म्य बना है, उनको महत्त्व देने की वजाय हम इस बात का ख्याल करें कि हमने इनको बहुत महत्त्वपूर्ण माना है इसलिए हम उनसे मुक्त नहीं हो पाते। हमारी मान्यता ऐसी है कि हमारे लिए वे बहुत महत्त्वपूर्ण हैं और हम उनसे मुक्त नहीं हो पाते और जहां तक संसार का सवाल है यह बात सच है।

निश्चित ही मन महत्त्वपूर्ण है, विचार महत्त्वपूर्ण हैं, स्मृति महत्त्वपूर्ण है, हमारी संसार की सारी सफलताएं इन्हीं पर आधारित हैं। जिस व्यक्ति का मन जितना कुशल होगा, तर्कशील होगा, स्मृतिवान होगा, लॉजिकल होगा वह जगत में उतनी ही सफलता अर्जित कर सकेगा।

तो संसार की सारी सफलता, मन की शिक्षा और इसकी विचारशीलता पर निर्भर है, विज्ञान का विकास इसी मन की वजह से संभव हुआ। तो निश्चित ही आदमी को जानवरों से भिन्न बनाने वाला यह मन ही है। इसी से मनुष्यता है, अन्यथा हम एक जानवर की तरह ही होंगे अगर मन न हो तो। यही हमारा सौभाग्य है और यही हमारा दुर्भाग्य भी। क्योंकि हमें मानवता से भी ऊपर उठना है।

पशुता से तो हम ऊपर उठ गए मानव होकर, अब मनुष्यता से और ऊपर उठना है, दिव्यता के लोक में, चैतन्य के लोक में। विकास क्रम में हमेशा याद रखना जैसे सीढ़ियां होती हैं ऐसे ही सारा इवॉल्युशनरी प्रोसेस है, हम एक सोपान पर कदम रखते हैं, फिर दूसरे सोपान पर कदम रखते हैं तो पिछले सोपान से पैर उठाना पड़ता है। फिर और ऊपर वाली सीढ़ी पर पैर रखते ही नीचे वाली सीढ़ी से पैर उठाना पड़ता है। तो जिस चीज को हमने एक बार पकड़ा है उसको फिर छोड़ना भी पड़ता है ताकि और उससे आगे बढ़ सकें। ठीक ऐसे ही हमारे विकास क्रम में पशुओं से यहां तक की यात्रा में यह मन है।

हमने इसका उपयोग सीखा, इसको विकसित किया, अब एक समय ऐसा आता है कि हम इसके भी पार जा सकें, भगवत्ता के लोक में प्रवेश कर सकें, साक्षी बन सकें, चैतन्य का आनंद ले सकें। वहां ये विचार बाधा हैं। तो दोनों पक्ष हैं मन के बारे में, यह हमारा सहयोगी है, हमारा मित्र है, इसी के कारण हम पशुओं से भिन्न और विकसित हो सके, तो इसने बड़ा सपोर्ट किया है। जगत की सारी सफलताएं इसी मन पर आधारित हैं इसलिए हमारे मन में धारणा बन गई कि बहुत ही महत्त्वपूर्ण है और यह बात काफी हद तक सच है। लेकिन जहां हम एक हद को पार करते हैं, जहां हम अपने आत्मरमण में डूबने का प्रयास कर रहे वहां पर यही चीज बाधा हो गई। क्योंकि यह बहिर्मुखी जगत के बारे में ही हैं सारे विचार, भीतर का तो कोई विचार होता नहीं।

तो साक्षी चैतन्य की साधना में अगर हम एक छोटी सी बात ख्याल में ले लें कि मेरे भीतर डुबकी लगाने के लिए इन विचारों का कोई महत्त्व नहीं है, तो हमने उनके महत्त्व को भी स्वीकारा एक जगह पर और दूसरी जगह हमने उनकी महत्त्वहीनता को भी जाना और यह बात समझकर हम बिल्कुल आसानी से दूर हो जाते हैं। ये ठीक वैसे ही है जैसे कि कोई आदमी बाहर धूप में जा रहा है, छाता लगा के जा रहा है कि बरसात हो रही है, कीचड़ है तो जूते पहनकर जा रहा है, कि ठंडी हवा चल रही है कोट पहना है, टाई पहनी है... बिल्कुल उचित। लेकिन जब वो अपने घर में आया बेडरूम में पहुंचा विश्राम करने के लिए तब अगर वो टाई और कोट पहनकर, छाता हाथ में पकड़कर अगर बिस्तर पर लेटे तो हम उसको पागल ही कहेंगे कि इस सबकी क्या जरूरत, ये तो बाहर छोड़ आना था। ये तो रिलैक्स होने की जगह है। इसका ये मतलब नहीं कि जूता जरूरी नहीं है और छाता जरूरी नहीं है, ये सब उपयोगी हैं लेकिन कहां?... वहीं हम उनका उपयोग करते हैं। हम ऐसा पागलपन तो नहीं करते जैसा मैंने

अभी कहा। विचारों के बारे में बस यही भूल हो गई। विचार भी बहुत उपयोगी है, तर्क भी बहुत उपयोगी है तो जब उनके उपयोग का समय है तो उस समय उनका सदुपयोग करें... बिल्कुल ठीक।

हम कोई मन के दुश्मन नहीं हैं। जब उनके उपयोग की जरूरत नहीं है तब हम उनको नमस्कार करें कि अभी थोड़ी देर के लिए छुट्टी, तुम भी आराम करो, हम भी आराम करें। इतनी सीधी–साधी सी बात है, जैसे जूता उतार देते हैं, छाता बाहर रख देते हैं और जरूरत पड़ने पर उसका उपयोग करते हैं, वो हमेशा के लिए थोड़ी हैं कि घर के अंदर छाता लगाकर घूम रहे हैं। इतनी सी समझदारी होनी चाहिए। कुछ साधक मन के खिलाफ हो जाते हैं यही समझदारी न होने की वजह से। एक संसारी हैं जो बिल्कुल मन के दीवाने हैं... खासकर आधुनिक जगत में जहां शिक्षा का खूब प्रचार–प्रसार हुआ और स्मृति की बड़ी वैल्यू हो गई वहां सभी लोग मन के पीछे पागल हैं।

एक पागलपन वह है और इसकी ठीक दूसरी अति साधकों में पैदा हो जाती है, वे मन को शत्रु समझने लगते हैं, उससे लड़ने की कोशिश करने लगते हैं, वे अपनी विचारशीलता को नष्ट करने का प्रयास करते हैं। अतार्किक, अवैज्ञानिक, बुद्धिहीन कामों में लग जाते हैं और सोचते हैं कि इससे वो पार हो जाएंगे। नहीं, इससे पार नहीं होंगे, ये तो मन से नीचे गिरना हो गया, ये तो फिर वापस पशुता में पहुंच जाएंगे। ऐसे तो हम हजारों साल पहले थे ही। इसमें कोई खूबी की बात नहीं है अगर हम विचारहीन हो गए तो।

तो तीन स्थितियां हैं, एक अविचार की, दूसरी विचार की और तीसरी निर्विचार की। पशु अविचार में है, मनुष्यता में विचार पैदा हुआ और भगवत्ता के लोक में निर्विचार अवस्था हो जाती है। तो हमने विचार की सीढ़ी पर कदम भी रखा, उसका उपयोग भी किया और हम निर्विचार में फिर और ऊपर उठे। वापस इस सीढ़ी में आएंगे जब जरूरत होगी उस तल पर काम करने की, दुश्मनी का कोई सवाल नहीं है। उस सीढ़ी के दुश्मन थोड़ी हैं जिससे हम चढ़कर आए हैं। उसी ने तो सहयोग दिया हमें ऊपर आने में। तो खूब मित्रभाव से अपने मन को जानें। कहीं कोई शत्रुता की रेखा छूट गई हो अपने भीतर तो समझदारीपूर्वक उस रेखा को मिटा दें, उसकी कोई जरूरत नहीं है।

अपने शरीर का भी सम्यक् सदुपयोग करना है, अपने मन का भी सम्यक् उपयोग करना है और उसे विश्राम भी देना है। विश्राम भी उपयोगी है। अगर हम लगातार चलते ही रहें अपने पैरों का उपयोग करते ही रहें, बंद ही न हों तो फिर तो हमारे पैर के चलने की क्षमता नष्ट हो जाएगी, पैर थक जाएंगे। और अगर हमें कभी जरूरत पड़ी अचानक भागने की तो शायद हम भाग भी न पाएंगे। पैर ऑलरेडी थके होंगे उस समय। तो चलना भी है और पैरों को विश्राम भी देना है, एक सम्यकता बनी रहनी चाहिए श्रम और विश्राम के बीच में, उससे हमारे पैरों की मसल्स मजबूत रहती हैं। ठीक ऐसे ही हमारी विचार क्षमता है मन की, इसका उपयोग करें

जरूरत पड़ने पर, जरूरत न हो तो इसको विश्राम दें। तब यह मन और सुंदर, शक्तिशाली, विवेकपूर्ण हो जाता है।

यह विवेक की क्षमता वही विचार की क्षमता है जो पहले चंचलता में व्यस्त थी। याद रखना, चंचलता भी वही चीज है, विचार ही विचार लेकिन बिना किसी दिशा के, यहां–वहां तितर–बितर, बिना काम के अनर्गल कुछ भी और जब विवेक उत्पन्न हुआ तो वही विचार हैं लेकिन अब एक दिशा में, किसी समस्या के समाधान में। जब जरूरत पड़ी तब हमने विचारशक्ति का उपयोग किया, तब बड़ा विवेक पैदा हो जाता है। इसका नाम है विज़डम। ये वही चंचलता है जो बेचैनी पैदा करती थी, इसकी शक्ति अब सुनियोजित हो गई।

एक उदाहरण से समझें जैसे एक बाजार की भीड़ है जिसमें कोई अनुशासन नहीं है, कोई यहां जा रहा है, कोई वहां जा रहा है, कोई कुछ कह रहा है, कोई कुछ कह रहा है, शोरगुल हो रहा है। और फिर वही मनुष्य जो बाजार की भीड़ में हैं उन्हें ही सुनियोजित करके आर्मी की सेना में लोग खड़े हैं एक आदेश पर सब काम करने वाले, अब उन्हीं लोगों से बड़ी शक्ति पैदा हो गई। ये वही मनुष्य हैं जो बाजार में थे लेकिन अब शक्तिशाली हो गए। ठीक ऐसे ही हमारे विचार हैं। जब वे चंचल हैं, बिखरे हुए हैं, अनर्गल हैं, दिशाहीन हैं तब वे हमारे जीवन में बेचैनी पैदा करते हैं, जब हम समझदारी से अपने मन को आराम भी देते हैं फिर यही विचार बड़े अच्छे तरीके से सुनियोजित हो जाते हैं और शक्तिशाली हो जाते हैं।

तो प्यारे मित्रों, यदि कहीं कोई ऐसी धारणा बन गई हो कि साक्षी चैतन्य के लिए मन से दुश्मनी हो तो उस भाव को छोड़ना। मन हमारा मित्र है, बस अलग–अलग समय की बात है। जीवन में दोनों ही चीजें होंगी, हम मन का उपयोग भी करेंगे और मन को विश्राम भी देंगे। जैसे हम अपने पैरों का उपयोग करते हैं, चलते हैं और फिर पैरों को विश्राम भी देते हैं। श्रम और विश्राम का संतुलन बन जाता है। तो शरीर के साथ तो हम इस काम को कर लेते हैं, मन के साथ ये वाली बात नहीं हो पाती। तो थोड़ा सा ख्याल करेंगे और इस बात पर आएंगे कि इन विचारों की महत्ता अपने भीतर डूबने में ही है, बस इतनी सी बात अगर ख्याल में आ जाए तो मन चुप हो जाता है। वो जानता है कि यहां उसका कोई काम नहीं, जब काम होगा तो उससे काम लिया जाएगा। इस बात को थोड़ा ख्याल करें अपने भीतर।

एक मित्र का सवाल है, कैवल्य उपनिषद् में गुरुदेव ओशो कहते हैं कि ओंकार मन की आखिरी ध्वनि है, तो क्या ओंकार मन का आखिरी हिस्सा अहंकार है और वे कहते हैं कि अंतःकरण और ओंकार की रगड़ से जो अग्नि पैदा होती है वह मुक्तिदायी है?

कैवल्य उपनिषद् का यह सूत्र आपने सुना होगा यही बात अन्यत्र प्रवचनों में भी ओशो ने भांति–भांति से कही है कि शून्य से जब सृष्टि निर्मित हुई तो जो पहली उत्पत्ति है वह ओंकार

है। संत दादू दयाल वाले पांचवे प्रवचन में, पिव–पिव लागी प्यास में भी यही बात कही है जो कैवल्य उपनिषद् में कही है कि शून्य से जब सृष्टि आई तो इसका होने वाला प्रथम रूप ओंकार है। फिर ओंकार से सबकुछ निर्मित हुआ।

आज के विज्ञान की शब्दावली में इसको कहें तो कहना होगा वह शून्य, परमचैतन्य जिसको हम अप्रगट ब्रह्म कहें, गौतम बुद्ध का महाशून्य। वह जब प्रगट हुआ तो प्रगट होने में सबसे पहले ओंकार, उसके बाद ऊर्जा, ऊर्जा के बाद फिर पदार्थ, फिर परमाणु, अणु और अणु के फिर भांति–भांति के उनसे निर्मित ग्रह–नक्षत्र इत्यादि। इस प्रकार क्रमशः सूक्ष्म से स्थूल की ओर यात्रा हुई। इस संसार में आगमन हुआ परमात्मा का।

अगर हम प्रतिक्रमण करते हैं पीछे की तरफ तो पदार्थ भाव छूट जाएगा, देह भाव विलीन होने लगेगा, निराकार का एहसास होने लगेगा। ज्यादा सजग और चैतन्य होने लगेंगे, ओंकार सुनाई देने लगेगा। जब गहन समाधि में डूबेंगे तो वह भी विलीन हो जाएगा जिसको शून्य समाधि कहें, वह भी नहीं रहा। वापस शून्य में पहुंच गए। इसी को सूफियों ने फना हो जाना कहा, मिट जाना कहा। बुद्ध ने शून्य कहा। फिर वापसी होगी तो फिर ओंकार से शुरुआत होगी।

एक ओंकार सतनाम में भी एक बहुत प्यारी कहानी के माध्यम से ओशो इसी बात को समझाते हैं कि एक मुसलमान फकीर गुरुनानक के पास पहुंचा सुबह–सुबह और उसने कहा कि मैंने सुना है कि तुम चाहो तो प्रलय हो जाए और तुम चाहो तो सृष्टि हो जाए, क्या यह बात सच है? नानक ने कहा हां, यह बात सच है। बाला मर्दाना थोड़े हैरान हुए कि नानक क्या कह रहे हैं। उस मुसलमान फकीर ने कहा कि फिर मुझे करके ही दिखा दें। नानक ने कहा कि आंख बंद करके बैठो और शांत हो जाओ, फिर नानक ने ओम की ध्वनि कही और कथा कहती है कि वह मुसलमान फकीर राख हो गया, खाक हो गया। थोड़ी देर बाद फिर नानक ने ओम कहा और फिर वापस जैसा था वह वैसे ही प्रगट हो गया।

ओशो कहते हैं, यह कहानी तथ्यात्मक नहीं किन्तु प्रतीकात्मक बिल्कुल सच है। ऐसा नहीं है कि सचमुच में उसकी देह राख हो गई लेकिन वह मुसलमान फकीर बड़ा साधक रहा होगा, नानक के जरा से इशारे से ही वह भीतर शून्य में पहुंच गया। इसी बात को कहा जा रहा है कि वह खाक हो गया, मिट गया, प्रलय हो गई। और थोड़ी देर बाद दुबारा फिर ओम कहा गया, फिर शून्य से ब्रह्म प्रगट हो गया, फिर मन आ गया, फिर तन आ गया।

वह मुसलमान फकीर नानक के चरणों में झुका और उसने कहा कि आश्चर्य! मुझे तो लगता था कि यह असंभव है लेकिन आपने कर दिखाया। बड़े अहोभाव से भरकर वह विदा हुआ। कथा के भीतरी भाव को पकड़ना तब यह बात स्पष्ट हो जाएगी कि शून्य से जो प्रथम उत्पत्ति है वह ओंकार की है।

आधुनिक वैज्ञानिक बिगबैंग की थ्योरी को जो मानते हैं वे भी लगभग इसी से मिलती–जुलती बात कहते हैं। फिर सर्वप्रथम ध्वनि का विस्फोट हुआ। निश्चित ही जो

सर्वप्रथम है वही अंतिम होगा, जब प्रलय होगी वही अंतिम होगा। तो बड़ी प्रलय के बारे में हम अनुमान लगा सकते हैं अपने आंतरिक अनुभव से, जब हम भीतर मिटते हैं तो अंत में ओंकार सुनते–सुनते गायब हो जाते हैं।

कई मित्र शून्य समाधि में पहुंच जाते हैं और अक्सर उनका सवाल होता है कि हमें समझ में नहीं आया कि हम समाधि में गए कि नहीं गए। कुछ अनुभव ही नहीं बताने को, कहने को और लगता है कि शायद समाधि ही नहीं हुई। क्या हुआ कुछ भी नहीं कह सकते। भ्रम होता है कि गहन नींद में तो नहीं चले गए। निश्चित ही शून्य का अनुभव वैसा अनुभव नहीं है जैसा किसी और चीज का, तुम मिट ही गए, खो ही गए। अनुभव करने वाला भी नहीं है वहां और अनुभव करने को भी कुछ न रहा। यह स्थिति तो प्रगाढ़ निद्रा जैसे ही हो गई।

पतंजलि ने अपने योगसूत्र में भी यही बात कही है कि सुषुप्ति और समाधि समान है कि जब तक हम ओंकार सुन रहे हैं हम आखिरी कगार पर पहुंच गए जहां से शून्य में छलांग लगती है। कभी–कभी वह लग जाती है। आप यहां इतने सारे लोग बैठे हैं जिसमें से अधिकांश लोगों की कई–कई बार लग चुकी होगी। लेकिन चूंकि वह ऐसा कोई अनुभव नहीं है जिसकी तुलना किसी अन्य अनुभव से की जा सके, कि उसके बारे में आप कुछ कह सकें कि बता सकें क्योंकि वहां आप भी नहीं हैं। अगर आप बच गए तब तो आप अभी फना नहीं हुए, मिटे नहीं। अनुभव करने के लिए कम से कम आपका होना तो जरूरी है।

तो जहां आप भी नहीं हो जाते हैं वह शून्य समाधि है। उसी तरफ इस कैवल्य उपनिषद् के ऋषि का इशारा है... नानक का भी, संत दादू का भी और ओशो का भी कि ओंकार आखिरी ध्वनि है, उसके बाद फिर महाशून्य। वापस लौटेंगे तो फिर प्रथम ध्वनि वही होगी, फिर सारे जगत का विस्तार।

अगला प्रश्न– वास्तव में प्रेम क्या है? विरले ही इसे क्यों जान पाते हैं?

भावना को प्रेम समझ लेना बड़ी से बड़ी भूल है। ओशो कहते हैं कि– 'हम जब भी भाव–विह्वल होते हैं, हम उसे ही अपना स्वभाव मानकर उसमें जीने लगते हैं, फिर वह प्रेम हो, गुस्सा हो या नफरत हो। लेकिन भाव–विह्वलता का कोई मूल्य नहीं है। यह सिर्फ हमारी भावुकता को दर्शाता है। हम किसी भाव में अभिभूत होकर जो भी कार्य करते हैं उसका नतीजा गलत होता है। भाव–विह्वलता एक अंधापन है जो कभी सही मार्ग नहीं चुन सकता। अगर हम प्रेम में अभिभूत होकर भी कोई कार्य करते हैं, वह भी गलत ही होगा। भाव–विह्वलता एक असम्यक् स्थिति है। प्रेम भावुकता की अभिव्यक्ति नहीं है। प्रेम एक सागर है और भाव उसकी लहरों की तरह हैं, जो आती जाती रहती हैं। लहरें कभी सागर की अभिव्यक्ति नहीं हो सकतीं। भाव क्षणभंगुर होते हैं और भावुकता अपने पीछे खालीपन,

बिखराव, उदासी और दुःख छोड़ जाती है।

हम या तो दिमाग से प्रेम करते हैं या दिल से। जैसे कि हम अपनी वस्तुओं को बुद्धि से और संबंधों को हृदय से चाहते हैं, लेकिन यह प्रेम बदलाव चाहता है क्योंकि हम एक ही घर से, एक ही पति से, एक ही पत्नी से ऊब जाते हैं। यह प्रेम संवेदनशीलता को कम करता है, आनंद की संभावना को कम करता है। क्रमशः आपकी हँसी खो जाती है, और जीवन एक कार्य जैसा लगने लगता है। बुद्धि का प्रेम आसान है, क्योंकि आप वस्तुओं को बदल सकते हैं और वस्तुएँ बदले जाने पर कोई विरोध नहीं करतीं, इंसानों की तरह आपसे झगड़ा नहीं करतीं, गुस्सा नहीं होतीं। इसलिए आज हम इंसानों के बजाए वस्तुओं से ज्यादा प्रेम करने लगे हैं। पश्चिम में लोग, पालतू जानवरों से अधिक प्रेम करने लगे हैं।

वस्तुतः प्रेम हमारे होने की अभिव्यक्ति है, केवल हमारे भावों का संग्रह नहीं। प्रेम अभिभूत होना नहीं है, बल्कि एक अभूतपूर्व प्रज्ञा, संवेदना और होशपूर्ण अहसास है। लेकिन ऐसा प्रेम शायद ही कभी होता है, क्योंकि हम कभी अपने स्वयं में स्थित नहीं हो पाते। हमें भावनाओं की जकड़ से बाहर निकलना होगा और स्वयं तक जाने का मार्ग ढूँढना होगा। भावनाएँ इन अर्थों में खतरनाक हैं कि वे हमें अभिभूत कर देती हैं और हम मदहोश हो जाते हैं। होशपूर्वक होने पर हमें अभिभूत करने वाली चीजें विदा होने लगती हैं। जब हम होश में और स्वयं में होते हैं तो बहुत स्वच्छ और निर्मल होते हैं और किसी भावुकता में नहीं बहते, चाहे वह प्रेम की भावनाएँ हों, गुस्से की या किसी और तरह की।'

जब तक ध्यान और प्रेम का संगम नहीं होगा, प्रेम वास्तव में घटित ही नहीं हो पाएगा। यही कारण है कि विरले लोग ही सच्चे प्रेम को जान पाते हैं, जी पाते हैं।

आज का आखिरी प्रश्न है कि सम्मोहन के सत्र में मैं सो जाता हूं, क्या करूं?

पहला महान कार्य यह करिए कि रात को ठीक से नींद लीजिए। अगर आपकी नींद रात को पूरी नहीं हुई है तो जैसे ही आप शिथिल होंगे तुरंत नींद घेर लेगी क्योंकि नींद शरीर की प्राथमिक जरूरत है। सम्मोहन अथवा ध्यान के बिना भी जिंदगी चल रही है मजे से, वह हमारी एसेंशियल जरूरत नहीं है, इस बात को समझना। कुछ चीजें ऐसी हैं जो चाहिए ही चाहिए। जैसे भोजन जरूरी है पोषण के लिए, रोटी, दाल, दाल, सब्जी तो होने ही चाहिए। हां, आइस्क्रीम, चॉकलेट, केक यह कोई अनिवार्य तत्व नहीं हैं भोजन के, इनके बिना भी काम चल जाएगा, यह लग्जरी की बातें हैं।

जब हमारे पास अतिरिक्त धन होता है, जब पूरा पेट भर चुका होता है तो हम सोचते हैं कि कुछ स्वीट डिश हो जाए, गुलाबजामुन खाएं या आइसक्रीम हो जाए, यह लग्जरी है। जब हमारे पास अतिरिक्त ऊर्जा होगी तब हम चेतना की गहराइयों में अथवा ऊंचाइयों में जा सकेंगे। अगर हमारे पास अतिरिक्त ऊर्जा नहीं है हम थके-थके हैं, हमारी नींद पूरी नहीं हुई है तो फिर

हम जैसे ही रिलैक्स होंगे हम नींद में चले जाएंगे। शरीर के लिए नींद रोटी, दाल, चावल की तरह है। बिना आइसक्रीम के चल जाएगा, बिना नींद के नहीं चलेगा।

ध्यान और सम्मोहन की अवस्थाएं आइसक्रीम जैसी हैं। उसके लिए सरप्लस एनर्जी, अतिरिक्त ऊर्जा चाहिए। तो सबसे पहला काम यह करें कि रात को आपकी नींद पूरी हो, सम्यक् भोजन करें। अगर आपने अधिक भोजन ले लिया है तो भी नींद घेरती है, वह उपयोगी नहीं होगा। कम से कम ब्रेकफास्ट और लंच में नॉर्मल भोजन यानी पचहत्तर परसेंट भोजन लीजिए बस। रात को डिनर में आप क्षतिपूर्ति कर सकते हैं क्योंकि रात को तो आपको सोना ही है लेकिन दिन के समय कम लीजिए ताकि वह हिप्नोसिस की अवस्था बन पाए।

कल मैं देख रहा था कि बहुत से लोगों ने खर्राटे भरना शुरू कर दिया। चलो पहले दिन मैं मानकर चलता हूं कि कुछ लोग लंबी यात्रा करके आए हैं तो थके होंगे, नए स्थान पर नया कमरा, नया बिस्तर, नया तकिया उतनी अच्छी नींद नहीं आती तो पहली रात उतनी अच्छी नींद आपको नहीं आती इसलिए यह एक्सपेक्टेड है कि पहले दिन आप खूब गहरे हिप्नोसिस में नहीं जा पा रहे। लेकिन आज दूसरा दिन है। अब तो आपकी थकान मिट गई होगी, नींद भी पूरी हो गई होगी मुझे उम्मीद है। आज ज्यादा गहराई में आप डूब पाएंगे इसकी पूरी–पूरी आशा है।

अनेक बार लोग पूछते हैं कि मैं मुल्ला के किस्से क्यों सुनाता हूं? आप जैसे महान श्रोताओं को जगाने के लिए। लो सुनो–

मुल्ला नसरुद्दीन का भाषण

एक बार शहर के लोगों ने मुल्ला नसरुद्दीन को किसी विषय पर भाषण देने के लिए आमंत्रित किया। मुल्ला जब बोलने के लिए मंच पर गया तो उसने देखा कि वहां उसे सुनने के लिए आये लोग उत्साह में नहीं दिख रहे थे।

मुल्ला ने उनसे पूछा– 'क्या आप लोग जानते हैं कि मैं आपको किस विषय पर बताने जा रहा हूँ?'

श्रोताओं ने कहा– 'नहीं।'

मुल्ला चिढ़ते हुए बोला– 'मैं उन लोगों को कुछ भी नहीं सुनाना चाहता जो ये तक नहीं जानते कि मैं किस विषय पर बात करनेवाला हूँ।'– यह कहकर मुल्ला वहां से चलता बना।

भीड़ में मौजूद लोग यह सुनकर शर्मिंदा हुए और अगले हफ्ते मुल्ला को एक बार और भाषण देने के लिए बुलाया। मुल्ला ने उनसे दुबारा वही सवाल पूछा– 'क्या आप लोग जानते हैं कि मैं आपको किस विषय पर बताने जा रहा हूँ?'

लोग इस बार कोई गलती नहीं करना चाहते थे। सबने एक स्वर में कहा– 'हाँ।'

मुल्ला फिर से चिढ़कर बोला– 'यदि आप लोग इतने ही जानकार हैं तो मैं यहाँ आप

सबका और अपना व़क्त बर्बाद नहीं करना चाहता।' मुल्ला वापस चला गया।

लोगों ने आपस में बातचीत की और मुल्ला को तीसरी बार भाषण देने के लिए बुलाया। मुल्ला ने तीसरी बार उनसे वही सवाल पूछा। भीड़ में मौजूद लोग पहले ही तय कर चुके थे कि वे क्या जवाब देंगे। इस बार आधे लोगों ने 'हां' कहा और आधे लोगों ने 'नहीं' कहा।

मुल्ला ने उनका जवाब सुनकर कहा– 'ऐसा है तो जो लोग जानते हैं वे बाकी लोगों को बता दें कि मैं किस बारे में बात करनेवाला था।' यह कहकर मुल्ला अपने घर चला गया।

नसरुद्दीन की बीवी का नाम

एक दिन मुल्ला नसरुद्दीन और उसका एक दोस्त साथ में टहलते हुए अपनी–अपनी बीवी के बारे में बातचीत कर रहे थे। मुल्ला के दोस्त का ध्यान इस बात की ओर गया कि मुल्ला ने कभी भी अपनी बीवी का नाम नहीं लिया।

'तुम्हारी बीवी का नाम क्या है, मुल्ला?'– दोस्त ने पूछा।

'मुझे उसका नाम नहीं मालूम– मुल्ला ने कहा।

'क्या!'– दोस्त अचम्भे से बोला– 'तुम्हारी शादी को कितने साल हो गए?'

'अट्ठाईस साल'– मुल्ला ने जवाब दिया, फिर कहा– 'मुझे शुरुआत से ही ये लगता रहा कि हमारी शादी ज्यादा नहीं टिकेगी इसलिए मैंने उसका नाम जानने की कभी ज़हमत नहीं उठाई'।

मुल्ला नसरुद्दीन और भिखारी

एक दिन एक भिखारी ने मुल्ला नसरुद्दीन का दरवाज़ा खटखटाया। मुल्ला उस समय अपने घर की ऊपरी मंजिल पर था। उसने खिड़की खोली और भिखारी से कहा– 'क्या चाहिए?'

'आप नीचे आइये तो मैं आपको बताऊँगा'– भिखारी ने कहा।

मुल्ला नीचे उतरकर आया और दरवाज़ा खोलकर बोला– 'अब बताओ क्या चाहते हो।'

'एक सिक्का दे दो, बड़ी मेहरबानी होगी'– भिखारी ने फरियाद की। मुल्ला को बड़ी खीझ हुई। वह घर में ऊपर गया और खिड़की से झाँककर भिखारी से बोला– 'यहाँ ऊपर आओ'।

भिखारी सीढियाँ चढ़कर ऊपर गया और मुल्ला के सामने जा खड़ा हुआ। मुल्ला ने कहा– 'माफ़ करना भाई, अभी मेरे पास खुले पैसे नहीं हैं।'

'आपने ये बात मुझे नीचे ही क्यों नहीं बता दी? मुझे बेवज़ह इतनी सारी सीढ़ियाँ चढ़नी पड़ गईं!'– भिखारी चिढ़कर बोला।

'तो फिर तुमने मुझे पहले क्यों नहीं बताया'– मुल्ला ने पूछा– 'जब मैंने ऊपर से तुमसे पूछा था कि तुम्हें क्या चाहिए!?'

ओशो प्रथम बुद्धपुरुष हैं जिन्होंने हंसाकर जगाने का प्रयोग किया। चुटकुलों को भी ध्यान की विधि बना लिया। किसी ओशो–प्रेमी शायर ने फेसबुक पर एक बहुत प्यारा गीत भेजा है।

उस गीत के संग मस्ती में झूमते हुए हम विदा लेंगे–

मै जहां कहीं भटक गया गिरते–गिरते संभल गया
मेरा हाथ है तेरे हाथ में ठोंकरों से पता चल गया।
अरे हां, महकी बहार झूमी, मौसम खुशी के छाये
मेरी जिन्दगी में ओशो जिस दिन से आप आये।।
अरे हां, महकी बहार झूमी.....!
मेरी जिन्दगी थी प्यासी हर पल थी एक उदासी
तुम जो करीब आये दिल में खुशी सी नाची।
बेचैन मेरा दिल अब तुझ से ही चैन पाए
मेरी जिन्दगी में ओशो जिस दिन से आप आये।।
अरे हां, महकी बहार झूमी.....!
सूनी थी मेरी राहें प्यासी थीं हर निगाहें
मुझे मिल गया सहारा थामीं जो तुमने बाहें।
मेरे ये दिलो–जाँ पर बस आप–आप छाए
मेरी जिन्दगी में ओशो जिस दिन से आप आये।।
अरे हां, महकी बहार झूमी.....!

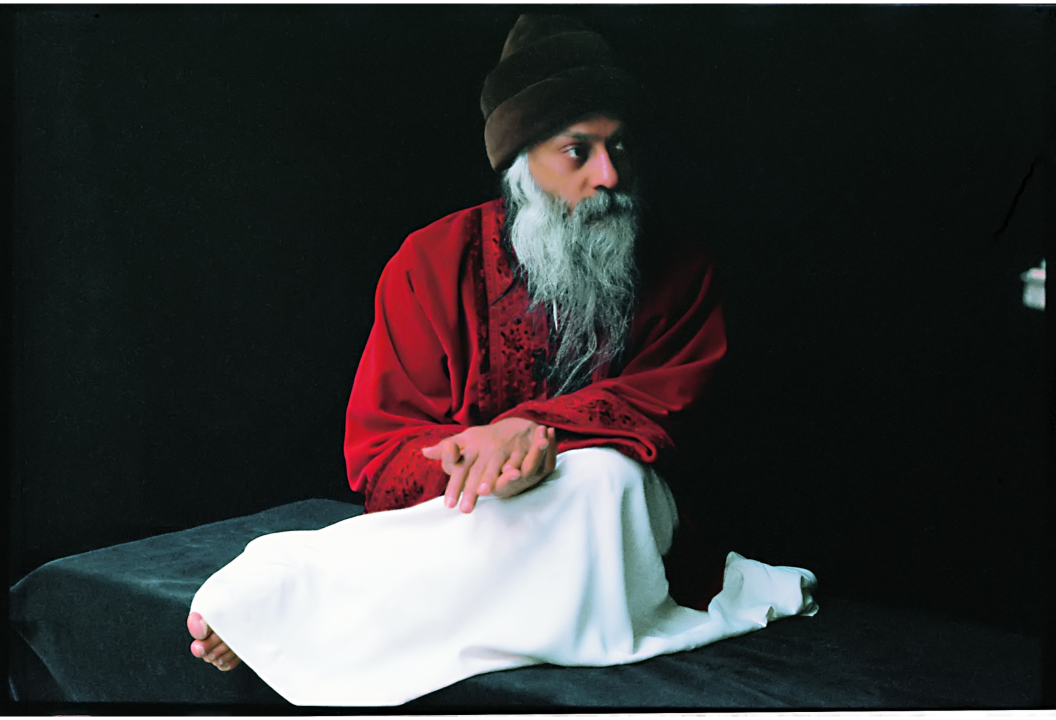

18

सम्मोहन से संपूर्ण स्वास्थ्य

एक मित्र ने पूछा है कि क्या सम्मोहन के द्वारा संपूर्ण स्वास्थ्य के विचार अवचेतन मन तक पहुंचाए जा सकते हैं?

निश्चित ही पहुंचाए जा सकते हैं। हमारी सभी बीमारियों को हम दो तलों पर बांट सकते हैं। कुछ बीमारियां हैं जो बाहर से भीतर की ओर जाती हैं और कुछ हैं जो भीतर से बाहर की ओर आती हैं। नॉर्मली मेडिकल साइंस में या अन्य किसी पैथी में इस बात पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता, सभी बीमारियों को एक समान मानकर एक समान इलाज किया जाता है और इसी से समस्या पैदा होती है। कुछ हद तक उसी बीमारी के रोग ठीक हो जाते हैं जिन दवाइयों से, उन्हीं दवाइयों से अन्य कुछ प्रतिशत रोगी ठीक नहीं होते। अगर वह बीमारी एक जैसी ही थी तब तो सभी पर असर होना था या किसी पर नहीं होना था, लेकिन ऐसा नहीं है।

हम देखते हैं कि कुछ प्रतिशत रोगियों पर दवा काम करती है और कुछ प्रतिशत पर काम नहीं करती। उसका कारण यही है। समझो एलोपैथी में जिस प्रकार का इलाज किया जाता है वह है बाहर से भीतर प्रवेश करने वाली बीमारियों पर ज्यादा प्रभावशाली। चोट लग गई, घाव हो गया इसकी हीलिंग करनी है तो निश्चितरूप से एलोपैथिक दवाई बड़ी कारगर सिद्ध होगी। कीटाणु प्रवेश कर गए भीतर, टी.बी. की बीमारी हो गई कि निमोनिया हो गया तो एंटीबायोटिक्स बहुत प्रभावशाली हैं जो कि इनको ठीक कर देंगे। टाइफॉइड का कीटाणु पहुंच गया पेट में, बुखार आ गया तो निश्चित ही दवाई से ये ठीक हो जाएगा।

टीकाकरण के द्वारा कितनी ही बीमारियों से बचाया जा सकता है। विज्ञान ने इसमें काफी सफलता हासिल की है। समझो किसी को विटामिन-सी की कमी से हड्डी की बीमारी

हो गई या किसी को विटामिन–ए कि कमी हो गई तो इसको विटामिन 'ए' और 'सी' का इंजेक्शन लगाकर एक ही डोज में ठीक किया जा सकता है क्योंकि ये बाहर की चीज से संबंधित थी, भोजन में कुछ कमी थी और उस कमी को दूर कर दिया जाए तो बीमारी ठीक हो जाएगी। लेकिन सारी बीमारियां इसी कैटेगरी में नहीं आतीं। कुछ रोग हैं जिनमें मन बहुत प्रभावी है, पहले मन रुग्ण हो गया है फिर उसके परिणाम बाहर शरीर पर नजर आ रहे हैं।

समझो एक व्यक्ति चिंताग्रस्त रहता है, हमेशा चिंतित होता रहता है, अब इस चिंता की वजह से उसका ब्लडप्रेशर बढ़ गया। शुरुआत में तो केवल चिंता ने पकड़ा, चिंतित रहते–रहते बीच–बीच में उसका ब्लडप्रेशर कभी–कभी बढ़ने लगा, फिर धीरे–धीरे लगातार ब्लडप्रेशर हाई रहने लगा, अब ब्लडप्रेशर की वजह से इसकी किडनी खराब हो सकती है, हृदय पर असर पड़ने लगा। अगर हम किडनी और हृदय का सीधा–सीधा इलाज करेंगे तो टेंप्ररी आराम मिल जाएगा लेकिन कुछ समय के बाद वही बीमारी फिर प्रगट हो जाएगी क्योंकि उसका जो बुनियादी कारण है उसको तो हमने दूर किया ही नहीं।

एक दूसरा उदाहरण समझें, जैसे मान लो कोई व्यक्ति बहुत भयभीत है, अनावश्यक रूप से छोटी–छोटी बात पर डर जाता है। अब बचपन से ही उसको किस प्रकार से डराया गया, किस प्रकार से पालन–पोषण किया गया, क्या भूल–चूक हो गई कि बिना कारण के ही भयभीत रहता है। अब इस भय की वजह से इसके पेट में एसीडिटी बढ़ती है, एसीडिटी के कारण इसके पेट में पेप्टिक अल्सर बन गया। अब इस पेप्टिक अल्सर का हम इलाज कर सकते हैं ऊपर–ऊपर से, एसीडिटी को महीने भर में ठीक कर सकते हैं।

छः महीने बाद फिर से वही प्रॉब्लम शुरू हो जाएगी। ये प्रॉब्लम बीच–बीच में इसको होती ही रहेगी क्योंकि जो बुनियादी कारण है वह मन में है और उसके लिए हम कुछ भी नहीं कर सके। ऐल्कलाइन चीज देने से एसिड तो न्यूट्रलाइज हो गया, एक–दो महीने में घाव तो ठीक हो गया फिर बन जाएगा कुछ समय के बाद। एसिड का बनना जो उसके मन के कारण हो रहा है वह तो ज्यों का त्यों है, उस पर तो किसी का ध्यान गया ही नहीं। तो बहुत सी बीमारियां भीतर से आ रही हैं। डिप्रेशन की बीमारी है, ये भी कहीं भीतर से आ रही है।

जो व्यक्ति निराश होकर जीने लगा है, जिसके जीवन में उमंग और उत्साह नहीं रह जाता तो पहले उसका मन प्रभावित हुआ। फिर जब मन प्रभावित हो गया तो उसे किसी चीज में इंट्रेस्ट नहीं रहा, उत्सुकता नहीं रही, उसका खाना खाने का मन नहीं होता, किसी से मिलने का मन नहीं होता, किसी काम को करने में मन नहीं लगता, उसके मन ने ही साथ छोड़ दिया अब उसके लिए कोई चीज काम की नहीं है। अब वह खाना भी क्यों खाए ठीक से, उसको कुछ रस ही नहीं है जीवन में, एक धारणा पकड़ ली कि सब बेकार है।

अब जब सब बेकार है तो फिर क्या किसी मित्र से मिलना, घर में मेहमान आए हैं तो उनसे क्या बातचीत करना, मेहमान बाहर बैठे हैं और वह जाकर भीतर बैठ गया। खाना खाने का समय है वह कहेगा कि भूख ही नहीं है। उसका किसी चीज में मन ही नहीं लग रहा है, वास्तव में वह मर जाना चाह रहा है। ये स्लो सुसाइड की प्रोसेस है। उसके जीवन में प्रेम नहीं है, कोई उमंग नहीं है, कोई उत्साह नहीं है, अब यह शरीर में किसी बाहर की चीज के कारण ऐसा नहीं हो रहा है, भीतर से मन ने ही उसका साथ छोड़ दिया है। और तन उसका फॉलो

कर रहा है मन को।

एक–दो उदाहरण और देता हूं कि किस प्रकार से हमारा मन हमारे शरीर को प्रभावित कर सकता है। एक बीमारी होती है हिस्टीरिया जो कि अक्सर महिलाओं को होती है। अचानक बेहोश होकर गिर जाती हैं और हाथ–पैर अकड़ जाते हैं, दांत बैठ जाते हैं। इसके होने के कारण को पता लगाने के लिए खूब खोजबीन की गई लेकिन पता चलता है कि शरीर में कोई रोग नहीं है इसलिए इसका इलाज भी नहीं हो पाता। अगर कोई बीमारी निकले तो उसका कोई इलाज किया जाए। मिर्गी के मरीज में ऐक्चुअल बीमारी होती है, तो उसको ठीक करने का उपाय है।

अब हिस्टीरिया के मरीज को किसी भी विधि ठीक नहीं किया जा सकता। शरीर में कोई परेशानी नहीं है, सब नॉर्मल है। मन में कुछ तकलीफ है, वह तकलीफ है कि इसको लग रहा है कि कोई मुझे प्रेम नहीं करता है, कोई मेरी तरफ ध्यान नहीं देता, मुझे इग्नोर किया जा रहा है और उसकी भीतर से इच्छा है कि लोग मुझे प्यार करें, मुझपर ध्यान दें, मेरी तरफ देखें, ये बात मन में छुपी हुई है लेकिन इसको स्पष्ट रूप से नहीं पता। अब उसने उसका एक उपाय खोज लिया कि अचानक धड़ाम से गिर जाओ, बेहोश हो जाओ तो अभी सारे लोग भागे–भागे आएंगे, सब सेवा करेंगे, हालचाल पूछेंगे।

जो लोग ऐसे कभी देखते भी नहीं थे वे सब लोग एकदम से चिंताग्रस्त हो जाएंगे। जो सास हमेशा झगड़ती रहती थी वह भी पंखा चला रही है, मुंह में पानी के छींटे मार रही है; वरना तो सास से उम्मीद ही नहीं थी कि वह कभी बहू की सेवा करेगी। पतिदेव जो हमेशा कहते थे कि ऑफिस में बहुत काम है आज देर से आऊंगा आज बीच में ही छुट्टी लेकर आ गए। ऐसे कभी नहीं आए थे, इतना प्रेम कभी जाहिर नहीं किया था लेकिन अब बिल्कुल मजबूरी में हैं। क्या करोगे, खबर पहुंची कि पत्नी बेहोश पड़ी है तो आना ही पड़ेगा।

अब इस महिला ने इंतजाम किया है कि जबरदस्ती सबका प्रेम आकर्षित करे, लोग ध्यान दें। जब पता लगा कि बेहोश हैं तो मोहल्ले के लोग भी आ गए। गाड़ी का इंतजाम किया जा रहा है, एंबुलेंस बुलाई जा रही है, अस्पताल ले जाया जा रहा है, दस–पंद्रह लोग पहुंच गए हैं परिवार के लोग, मुहल्ले के लोग, अब ये देवी बिल्कुल हिरोइन बन गई हैं, अब सबकी नजर उन्हीं पर है। लोग अच्छी महत्वपूर्ण बातों को भूल गए और इन्हीं पर ध्यान दे रहे हैं कि इनको क्या हो गया और डॉक्टर, नर्स लगे हुए हैं, सबका अटेंशन मिल रहा है।

अब एक ट्रिक समझ में आ गई कि स्वस्थ रहने पर तो इन दुष्टों से कोई प्रेम मिल नहीं सकता। एक बहुत रुग्ण तरीका खोज लिया है प्रेम पाने का। प्रेम पाने की चाहत मन की चाहत है जो कि हर व्यक्ति के भीतर है। अब और कोई उपाय ही नहीं है प्रेम पाने का नहीं तो सास हमेशा लड़ती ही रहेगी, हमेशा कहेगी कि ये काम क्यों नहीं किया, वह काम क्यों नहीं किया, ये काम तुमने गलत कर दिया लेकिन अभी कोई भी कुछ भी नहीं कह रहा है। अभी किसी को कुछ उम्मीद नहीं है कि बहू बेचारी काम करेगी, डॉक्टर ने कहा कि घर जाकर इनको आराम की जरूरत है। और यही वह महिला चाह रही थी।

अभी पति बार–बार आएगा, सिरहाने बैठकर सिर दबाएगा, पूछेगा अब कैसी हो। पहले तो कभी नहीं पूछता था कि कैसी हो, हमेशा शिकायत ही करता था कि तुमने ऐसा नहीं

किया, तुमने वैसा नहीं किया। उसकी ड्यूटी ही गिनाई जाती थी कि तुम्हें ऐसा करना चाहिए, वैसा करना चाहिए। बच्चों की हमेशा डिमाण्ड रहती कि मम्मी यह कर दो, वह कर दो लेकिन अब बच्चा भी पैर दबा रहा है। वैसे तो कभी नहीं दबाता था, आज कुछ एक्सपेक्टेशन नहीं किया जा रहा है इससे कि ये किसी के लिए कुछ करे, लोग इसके लिए कुछ कर रहे हैं, सहानुभूति मिल रही है।

यह सहानुभूति प्रेम का रूप बन गई इसके लिए। वैसे तो प्रेम नहीं मिलता था चलो सहानुभूति ही सही। असली नहीं तो नकली सिक्का ही सही, सिक्के जैसा लगता तो है। याद रखना, सहानुभूति प्रेम नहीं है, इससे कोई तसल्ली नहीं होने वाली फाइनली, कभी भी। लेकिन चलो, कुछ नहीं से कुछ तो बेहतर ही है। अब ये महिला एक मुसीबत में फंस गई, जब–जब इसको इस प्रकार लगेगा कि कोई मुझ पर ध्यान नहीं देता तब–तब ये बेहोश होकर गिर जाएगी। कहने को लगेगा कि मिर्गी जैसी ही बीमारी है किन्तु मिर्गी जैसी नहीं है, बिल्कुल अलग बीमारी है।

इसका कारण ही बिल्कुल अलग है और हम किसी भी प्रकार के बाहरी उपाय के द्वारा, किसी भी दवाई के द्वारा हम इसको ठीक नहीं कर सकते। सच पूछो तो यह एक व्यक्तिगत रोग नहीं है, यह एक सोशल बीमारी है। समाज व्यवस्था ने, परिवार व्यवस्था ने यह बीमारी पैदा की है। इसमें दोष इस अकेली स्त्री का नहीं है। जिस प्रकार की परिवार व्यवस्था है यहां सब लोग उससे डिमाण्ड ही कर रहे हैं, सब इसकी ड्यूटी ही बता रहे हैं, कोई भी इसको अनकंडीशनल लव नहीं करता, सबको अपने–अपने स्वार्थ से मतलब है। बेचारी इतनी निरीह दशा में है कि क्या करे।

तो दोष इसका नहीं है। दोष समाज और परिवार व्यवस्था का है जहां लोगों को प्रेम नहीं मिल रहा है वहां बड़ी कमी महसूस हो रही है और उस कमी की वजह से फिर वह एक प्रकार की बीमारी पैदा कर ले रहे हैं। कुछ महिलाओं को हमेशा क्रॉनिक प्रॉब्लम रहता है, वह ठीक ही नहीं होता। न कोई डॉक्टर उसकी डायग्नोसिस कर पाता है, न वह किसी इलाज से ठीक होती है या होती भी है तो टेम्प्ररी, दो–चार दिन को ठीक हुई फिर वापस शुरू। सारी पैथी वालों के पास घुमा चुके लेकिन कुछ फायदा नहीं। महिलाओं को बताने में भी मजा आता है कि हम इस डॉक्टर के पास गए थे जिसका बड़ा नाम सुना था लेकिन वह कुछ नहीं कर पाए। अरे सबको परास्त कर दिया इस दुबली–पतली महिला ने। बड़े नामी–गिरामी डॉक्टरों की प्रतिष्ठा धूल में मिला दी। इसकी बीमारी ही कोई नहीं पकड़ पा रहे। इसको पेट दर्द होता है आज तक पता ही नहीं चला कि किस वजह से होता है। बड़ी मोटी सी फाइल बनाकर रखे हुए हैं कि ये जांच हुई लेकिन पेट दर्द का कारण ही समझ में नहीं आता। इस प्रकार की बीमारियां मन से उत्पन्न बीमारियां हैं। इसलिए बाहर से हम इसका कोई समाधान नहीं कर पाएंगे।

अगर हमारा अवचेतन मन एक पॉजिटिव धारणा अपने भीतर ले जाए, समझो वह हिस्टीरिया वाली जो मरीज है जब तक उसके भीतर यह एहसास नहीं हो जाएगा कि लोग मुझे प्रेम करते हैं, परिवार के लोग मुझपर ध्यान देते हैं, जितना जरूरी है उतना देते हैं और मैं बिल्कुल ठीक हूं इतने के साथ, संतुष्ट हूं, खुश हूं, जब तक ऐसी धारणा उसके भीतर नहीं बैठ जाएगी पॉजिटिवली तब तक हिस्टीरिया से मुक्ति नहीं मिलेगी। तो दुनिया में करीब–करीब

पचास प्रतिशत लोग, विशेषकर आज की दुनिया में जबकि शक्ति–संपन्नता काफी बढ़ गई है, भरण–पोषण सबको मिल रहा है, विशेषकर उन्नत देशों में जहां न कोई भोजन की कमी है, न विटामिन की कमी है, न प्रोटीन की कमी है, मन की बीमारी से पीड़ित हैं।

पुराने जमाने में जो बीमारियां थीं आज से पचास साल पहले वह बहुत ही कम हो गईं, नगण्य ही हो गई हैं। आज से पचास साल पहले लोग छोटी–छोटी बीमारी में मर जाते थे। हैजा, चेचक, मलेरिया और टाइफॉइड से लोग मर जाते थे। पहले एंटीबायटिक्स ही नहीं थे इसलिए सर्दी–जुकाम हुआ, निमोनिया हुआ और खतम। लूजमोशन से डिहाइड्रेशन हो गया और खतम। कोई इलाज ही नहीं था, उपाय ही नहीं था। पचास साल पहले जो बीमारियों का पैटर्न था, प्लेग हुआ और गांव का गांव चौपट, चार दिन में हजारों आदमी मर जाते थे। उस समय मानसिक रोग हो ही नहीं पाते थे, उसके पहले ही लोग मर जाते थे।

हमारे देश में हर साल चेचक की बीमारी फैलती थी। आज भारत में एक करोड़ लोग अंधे हैं अभी भी। हैजा में गांव के गांव खतम हो जाते थे। कारण भी नहीं पता था और इलाज भी नहीं पता था। पुराने जमाने में वास्तविक शारीरिक बीमारियां थीं बहुत ज्यादा। भोजन के बारे में नहीं पता था कि क्या खाना चाहिए और क्या नहीं खाना चाहिए। संपन्न से संपन्न लोगों को भी नहीं पता था, कुछ भी खाए जा रहे हैं और समझ रहे हैं कि यही उचित है। समझ रहे हैं कि दूध से बने पकवान खाना ही ठीक है, घी–तेल खाना ठीक है।

अब ये बिल्कुल ही भ्रांत बात थी, इसमें कोई सच्चाई नहीं है लेकिन जिनके पास पैसा था वह समझ रहे थे कि जो चीज मंहगी है वही अच्छी होगी। खाओ समोसा, कचौड़ी और गुलाब जामुन और खोये की मिठाइयां। घी में डुबो–डुबोकर हरियाणा में रोटी खाते हैं। उस समय बहुत गरीबी थी और घी किसी–किसी के पास उपलब्ध होता था तो यही समझते थे कि यही अच्छी चीज होगी। अब धीरे–धीरे साफ हो गया और पता चल गया कि क्या खाने योग्य है और क्या खाने योग्य नहीं है। निश्चित ही न तो उतने घी की जरूरत है और न ही उतनी मलाई की जरूरत है, अब वे वाली बीमारियों के दिन गए। अब हमें पता है कि कहां मिनरल्स हैं, कहां विटामिन्स हैं अब उन्हीं चीजों का सेवन हम करते हैं जो जरूरी और सम्यक् आहार हैं। अब आदमी सम्यक् भोजन कर रहा है। तो अब सुनने में नहीं आता कि किसी को विटामिन की कमी हो गई। यदा–कदा होता भी है तो जल्दी से ठीक हो जाता है, पहले तो इन्हीं बीमारियों में लोग मर जाते थे। आधी महिलाएं तो डिलेवरी के समय मर जाती थीं। पता ही नहीं था कि कैसे डिलेवरी होनी चाहिए, अब तो कभी–कभार सुनने में आता है कि डिलेवरी के समय किसी की मृत्यु हो गई।

बीमारियों का पैटर्न पिछले पचास–साठ सालों में बिल्कुल चेंज हो गया है। अब न इन्फेक्शन वाली और न ही मालन्यूट्रीशियन वाली बीमारियां बचीं। टीका का प्रचलन आ गया। कितनी बीमारियां हैं जिनके नाम ही खत्म हो गए। अब कम उम्र के बच्चे यहां बैठे हुए हैं इनको तो पता ही नहीं कि प्लेग क्या होता है, हैजा क्या होता है, चेचक क्या होता है। हो सकता है ये अपनी जिंदगी में कभी भी न सुनें कि ये बीमारियां होती थीं। टेटनस का मरीज क्या होता है, रेबीज का क्या होता है, सब भूल ही गए।

मै सन 1979 से डॉक्टर हूं लेकिन अपनी जिंदगी में नहीं देखा कि टेटनस का मरीज

कैसा होता है, मैंने रेबीज का मरीज भी नहीं देखा। किसी को कुत्ते ने काटा तो वह तुरंत ही इंजेक्शन लगवा लेता है, अब रेबीज कभी हो ही नहीं सकती। मैंने अपनी जिंदगी में रेबीज का मरीज देखा ही नहीं। लोगों के बीच में अब काफी प्रचार–प्रसार हो गया है कि थोड़ा घाव लग जाए तो टेटनस की सूई लगवा लो इसलिए अब टेटनस का रोग होता ही नहीं। बीमारियों का पैटर्न एकदम से बदल गया लेकिन मनुष्य जाति स्वस्थ नहीं हुई। नए प्रकार की बीमारियों ने धर–दबोचा। जो मानसिक बीमारियां थीं अब लंबी उम्र उसके पास है, कुछ करने को है नहीं और दिमाग बहुत चल रहा है। शरीर भला–चंगा है लेकिन अब उसका दिमाग गड़बड़ होने लगा। मुसीबतें अभी भी बरकरार हैं। आपको जानकर हैरानी होगी कि अमेरिका जैसे देश में अब शरीर के डॉक्टरों की गिनती कम है, साइकोथेरेपिस्ट की गिनती ज्यादा है। वहां सबसे मंहगा धंधा जो है वह साइकोलॉजी का है। लगभग तीन चौथाई लोग अपनी जिंदगी में कभी न कभी साइकैट्रिस्ट का इलाज करवाते हैं।

कितनी विचित्र सी बात लग रही है, शरीर को ठीक करने की कोशिश की तो मन गड़बड़ा गया और मन को ठीक करना काफी कठिन हो रहा है। ऐसा नहीं है कि एक इंजेक्शन लगा दो और ठीक हो जाएगा कि एक टीका लगा दिया और प्रिवेंशन हो गया कि खाने के लिए बता दिया कि आयरन खा लो तो एनीमिया दूर हो जाएगा। अब इतना आसान मामला नहीं है मन को चंगा करना। इसकी बीमारी क्यों है यही पकड़ना आसान नहीं है और फिर पकड़ भी आ जाए कि तकलीफ क्या है, कारण क्या है तो उसको दूर करना बहुत कठिन है। क्योंकि ये जो मानसिक बीमारियां हैं ये एक खास परिवेश में, एक खास परिवार के पैटर्न में जन्मी है वह पैटर्न दोषी है। हम एक व्यक्ति का इलाज करके कैसे ठीक कर सकते हैं जब पैटर्न दोषी है तो। और इसका जो परिवार है वह अकेला थोड़ी है, वह एक बड़े समाज का हिस्सा है, समाज का एक पैटर्न है, उस पैटर्न का हिस्सा वह परिवार है। अगर पूरा समाज ही एक मानसिक रुग्णता में जी रहा है तो यह परिवार भी जिएगा, उनकी भी मजबूरी है। उस परिवार के अंदर यह व्यक्ति भी उसी प्रकार के रोग से ग्रस्त होगा, यह उसकी भी मजबूरी है। अब ये बात समझ में आने लगी कि जब तक हम पूरे समाज की मेंटलिटी को दूर न करें तब तक हम कुछ खास नहीं कर पाएंगे।

समझो पूरा समाज महत्त्वाकांक्षी है। बचपन से हर बच्चे को सिखा दिया कि तुमको फर्स्ट आना है, भागो, दौड़ो, आगे निकलो, सबको पीछे पछाड़ दो ये तो पूरे समाज में चल रहा है, किसी एक–दो व्यक्ति का सवाल नहीं है। हर परिवार में यही सिखाया जा रहा है कि आगे निकलो, कुछ करके दिखाना है, नाम कमाना है, कुल की प्रतिष्ठा का ख्याल रखना है, बदनामी न हो जाए। बच्चे के मन में अब ये धारणाएं गहरी जड़ें जमा लीं। अब ये एक सामाजिक बीमारी है, डिसीज है, डिसीज का मतलब डिस–ईज, यू कैन नॉट फील ईज एण्ड ईज का उल्टा डिस–ईज।

अब जो भी व्यक्ति इससे प्रभावित हो गया है आज तो लगभग सभी हो गए हैं अब कोई भी रिलैक्स नहीं हो सकता, हमेशा एक बेचैनी बनी रहेगी कि मुझे आगे निकलना है। और ऐसा नहीं है कि किसी एक चीज में आगे निकल गए तो बढ़िया है। लाइफ तो मल्टीडायमेंशनल है। आप एक दिशा में आगे निकल भी गए तो तुरंत पता चलता है कि अन्य

पच्चीसों दिशाओं में आप बिल्कुल पिछड़ गए।

समझो धन कमाने की दिशा में कोई लगा है और समझो कि वह गांव का सबसे धनी आदमी बन भी गया और इसमें उसने पचास–साठ साल बर्बाद कर दिए। उस पचास–साठ साल में पता चला कि फलाना लड़का जिसने धन नहीं कमाया था क्रिकेट प्लेयर था उसने खूब क्रिकेट में नाम कमा लिया, अब वह ओलम्पिक में खेलने गया है। जिसने पढ़ाई–लिखाई में खूब ध्यान दिया था वह आई.ए.एस. अफसर बन गया, वह ज्यादा पावरफुल है और ये धनी आदमी परेशान है। यह सोच रहा था कि मैं सबसे आगे निकल जाऊंगा।

यह छोटेपन से ही पढ़ाई–लिखाई छोड़कर पिताजी के व्यवसाय में लग गया था, धन कमाने के चक्कर में और इसने खूब धन कमा भी लिया। इसी के संग पढ़ने वाला इनकम टैक्स ऑफीसर है इसलिए धन वाले को इससे डरना पड़ता है। कभी भी छापा मार सकता है, ताकत उसके हाथ में है। अब तो इसको फिर निर्बलता महसूस होने लगी। एक तरफ से वह बलवान हुआ और दूसरी तरफ से निर्बल महसूस करने लगा। सड़क पर गुजरते किसी सुंदर व्यक्ति को देखा और ईर्ष्या से जल–भुन गया। ठीक है पैसा तुम्हारे पास है लेकिन सुंदरता कहां से लाओगे।

क्योंकि साहित्यिक प्रोग्राम हो रहा था, कवि उसमें गीत गा रहे थे और लोग तालियां बजा रहे थे, कि संगीत के प्रोग्राम में लोग वाहवाही कर रहे थे संगीतकार की और इसको भीतर ही भीतर बड़ी ईर्ष्या हो गई कि गरीब संगीतकार और इसके लिए लोग तालियां बजा रहे हैं, बैठे हैं चार घंटे उसको सुनने के लिए और कोई भी मेरी सुनने के लिए पांच मिनट भी तैयार नहीं। और ये गरीब कवि और इसकी इतनी इज्जत कि लोग दूर–दूर तक जानते हैं, पूरे देश के लोग जानते हैं। पत्रिकाओं में इसकी फोटो छपती है लेकिन है गरीब।

अब इस अमीर आदमी को बड़ी चिढ़ पैदा हो रही है कि मैं गांव का सबसे धनी आदमी तो हो गया लेकिन इज्जत नहीं है। लोग देखते भी हैं तो बुरी नजर से कि ये आदमी शोषण करता है, लोगों का खून चूसा है इसने। अच्छी नजर से इसको कोई देख भी नहीं रहा। जिंदगी मल्टीडायमेंशनल है और सभी दिशाओं में कोई आगे हो ही नहीं सकता। खूब मेहनत करके एक ही दिशा में आगे हो सकते हो, वह भी कोई जरूरी नहीं है कि हो पाओ। पूरी जिंदगी न्योछावर कर दो एक ही चीज में तब जाकर आप उसमें आगे निकल पाओगे लेकिन याद रखना, सबसे आगे कोई नहीं होता।

तुम जहां भी पहुंच जाओगे वहीं पाओगे कि तुमसे आगे कोई और है या होने ही वाला है। विश्व के सबसे अमीर आदमी भी बन गए तो भी डर बना हुआ है कि अगले साल कोई और न हो जाए। और अन्य सैकड़ों दिशाओं में तो बिल्कुल ही पिछड़ गए। कोई राजनीति में आगे निकल गया, कोई वैज्ञानिक हो गया उसको नोबल प्राइज मिल गई, कोई इंजीनियर बन गया। अब ये जो महत्त्वाकांक्षा की बीमारी है ये एक सोशल बीमारी है। हर परिवार इस शिकंजे में कसा हुआ है, अब इसमें एक व्यक्ति उस परिवार का रुग्ण हो गया क्योंकि वह महत्त्वाकांक्षा में बहुत पीछे रह गया।

स्कूल में उसके नंबर कम आए और उसने सुसाइड करने की कोशिश की। बचा लिया गया उसको लेकिन अब वह डिप्रेशन में चला गया। अब समझ रहे हैं कि इसका इलाज कितना

मुश्किल है क्योंकि वह भी यही मानता है कि अगर मैं सबसे आगे नहीं आ पाया तो मेरा जीना व्यर्थ है। ऐसा उसको सिखाया गया है, कहा गया है डायरेक्टी–इंडायरेक्टली उसके दिमाग में खोपड़ी में बात घुसा दी गई है कि अगर तुम आगे नहीं निकले तो तुम्हारा जीवन व्यर्थ है। ये भावना उसके भीतर बैठ गई है। अब वह दसवीं में फेल हो गया तो क्या करे।

उसके माता–पिता ने कहा था कि कुल की इज्जत का ख्याल रखना है, अब वह महसूस कर रहा है कि अब तो मैं कहीं मुंह दिखाने लायक भी नहीं हूं। अब तो एक ही उपाय है कि मर जाओ, आग लगा लो, कूद जाओ नदी में। जब मुंह दिखाने लायक नहीं बचे, मन ने जीवन का साथ छोड़ दिया, अब एक ही उपाय संभव है कि हम पुनः एक नई धारणा इसके अवचेतन मन में बैठा सकें कि तुम जैसे हो अच्छे हो, ठीक हो, स्वीकार योग्य हो। ये कोई जरूरी नहीं है कि तुम आगे निकलो और जीतो सबको, आप एक यूनीक व्यक्ति हो, परमात्मा ने एक सुंदर कृति बनाई है।

सबमें अलग–अलग गुण हैं, आपमें भी कुछ गुण हैं, दूसरे से तुलना छोड़ें और अपने प्रति सम्मान विकसित करें। अब ये बात अवचेतन मन में बैठानी होगी क्योंकि रोग वहां बैठा हुआ है। वह मान रहा है इनफीरियॉरिटी कॉम्पलेक्स है, अरे मैं कुछ भी नहीं हूं, मैं सिद्ध नहीं कर पाया कि मैं भी कुछ हूं। अब उसको इस मनोरोग से बाहर निकालने के लिए साधारण सा एक ही तरीका है कि उस छोटी लकीर के सामने एक बड़ी लकीर खींची जाए। अगर हम सेल्फ रेसपेक्ट की भावना उसके अंदर बैठा सकें तभी वह ठीक हो पाएगा।

निश्चित ही यह दो–चार दिन में नहीं होने वाला, दो–तीन महीने तो पक्का लगेंगे। और इसमें वह भी हमारा सपोर्ट करे तो ही हो पाएगा। ये ऐसी कोई चीज नहीं है जो जबरदस्ती कर दी जाए। रेबीज का इंजेक्शन तो जबरदस्ती भी लगाया जा सकता है कि कोई न लगवाए तो चार आदमी पकड़कर लगा देंगे लेकिन मन के बारे में जब तक वह व्यक्ति सहयोग नहीं करेगा ऐसा नहीं कर सकते। हम बाहर से दबाव देकर कुछ नहीं कर सकते, क्योंकि हिप्नोसिस ऐक्चुअली सेल्फ हिप्नोसिस है, अगर वह मानने को राजी नहीं है तो जबरदस्ती नहीं मनवा सकते, उसका कोऑपरेशन चाहिए।

ये प्रैक्टिकल कठिनाइयां हैं मन से संबंधित रोगों की। अगर वह कोआपरेट करने को तैयार हो गया फिर तो मामला बहुत आसान है। सेल्फ हिप्नोसिस की विधि तीन दिन में सीखकर वह अपने घर जाकर प्रयोग करता रहे रोज बीस मिनट रात को सोने के पहले तब दो–तीन महीने में बात बन जाएगी। वह नई धारणा बहुत मजबूत हो जाएगी जो कि पहले बैठी हुई थी कि लोगों के आगे निकलना है और सबको हराना है और विजय का झंडा गाड़ना है। अब वह कहेगा कि व्यर्थ की बातें छोड़ो, अपने जीवन को प्यार से जियो, मजे से जियो, एक नई धारणा उसके अंदर बैठ जाएगी।

किसी से तुलना करने की जरूरत नहीं, एक नई धारणा भीतर बैठा ली कि मैं जैसा हूं ठीक हूं। परमात्मा मुझे चाहता है तभी तो मैं ऐसा हूं। उसने मुझे ऐसा बनाया, मैं कौन होता हूं अपनी निंदा करने वाला, परमात्मा मुझे पसंद करता है, मैं स्वयं से क्यों घृणा करता हूं। ये नई धारणा अगर भीतर बैठ गई तो जो पुरानी प्रवृत्ति है वह ठीक हो जाएगी और इसका डिप्रेशन ठीक हो जाएगा। मामला कठिन है।

शरीर का इलाज करना आसान है लेकिन मन का इलाज करना मुश्किल। जैसे पैर में चोट लग गई और घाव हो गया, मरहम पट्टी की तो थोड़ी देर में ठीक हो जाएगी लेकिन मन के घाव इतनी आसानी से ठीक नहीं होते। एक तो पकड़ में नहीं आते कि हैं कहां और पकड़ में भी आ जाएं तो उस व्यक्ति का सहयोग चाहिए कि वह अपने को ठीक होने दे। अगर वह बार–बार उसी को कुरेदता रहता है कि मैं तो कुछ नहीं हूं, मैं तो किसी काम का नहीं, मैं तो किसी लायक नहीं, मेरे जीने से क्या फायदा। अगर वह घाव को बार–बार कुरेदता रहता है तो वह घाव कभी ठीक हो ही नहीं पाएगा।

तो प्यारे मित्रों, मन को समझना, उसको ठीक करना कठिन कार्य है लेकिन सेल्फ हिप्नोसिस के द्वारा बहुत आसानी से संभव है। लेकिन इसके लिए उस व्यक्ति का भी सपोर्ट चाहिए और परिवार वालों का भी सपोर्ट चाहिए। क्योंकि वह एक व्यक्ति अकेला जिम्मेवार नहीं है। अगर उसके परिवार में छः लोग और रहते हैं और सब लोग उसकी दिमाग में निगेटिव धारणा घुसाते ही रहते हैं, बार–बार निगेटिव कमेंट करते रहते हैं कि या याद दिलाते हैं कि तुम तो दसवीं में फेल हो गए, तुमने हमारी इज्जत डुबा दी, तुम किसी काम के नहीं हो, क्या कर पाओगे तुम दुनिया में, कैसे जियोगे हमको तो चिंता होती है।

अगर चारों तरफ से उसको यही कमेंट सुनने को बार–बार मिल रहे हैं तो मैं समझता हूं कि वह इस जाल से निकलना चाहेगा भी तो नहीं निकल पाएगा। चारों तरफ से हमला किए जा रहे हैं, उसी घाव को कुरदते जा रहे हैं। जिसको हम आत्महत्या कहते हैं सच पूछो तो वह आत्महत्या नहीं है, वह इंडायरेक्ट तरह से मर्डर ही है। हमने इस प्रकार का माहौल बनाकर रखा है कि आदमी को लगे कि जीने से अच्छा है कि मर ही जाओ। इसलिए मैं आत्महत्या को आत्महत्या नहीं समझता, वह हत्या ही है।

सूक्ष्म तरीके से हमने मारने की कोशिश की है कि तुम फांसी खुद लगाओ, हमारे हाथों के निशान भी न आएं तुम्हारे गले में। ये एक बहुत ही विचित्र षड्यंत्र है जो समाज ने किया है कि हम पर कोई दोष आएगा ही नहीं, ये आदमी तो खुद ही फांसी लगाकर मर गया। जबकि दोषी हम हैं। हम सबने ऐसा माहौल बनाया था कि वह फांसी लगाकर मर जाए। शायद मेरी बात सुनने में बुरी लगेगी, कि हम तो परिवार के लोग हैं, हम भला ऐसा क्यों चाहेंगे? प्रत्यक्ष तो नहीं, लेकिन हां, परोक्ष ढंग से आपने ही यह उपाय किया है। आदमी की ज्यादातर मुश्किलें, खासकर सामाजिक जटिलताएं उसकी उल्टी चाल से ही पैदा होती हैं।

इस्लाम में एक कहानी का जिक्र है। उसी से आज की बात का समाप्त करें। एक बूढ़ी औरत को चरखा चलाते देखकर एक पढ़े–लिखे युवक ने उससे पूछा कि जिंदगी भर चरखा ही चलाया है या उस परवरदिगार की कोई पहचान भी की है?

बुढ़िया ने जवाब दिया, 'बेटा, सब कुछ तो इस चरखे में ही देख लिया है।' पढ़ा–लिखा आदमी चौंका और उसने पूछा, 'कैसे?' बूढ़ी औरत ने जवाब दिया, 'जब मैं इस चरखे को चलाती हूँ तब यह चलता है। जब मैं इसे छोड़ देती हूँ तो बंद हो जाता है। चलाए बिना नहीं चलता। इस दुनिया में जमीन, आसमान, चांद, सूरज– ये जो बड़े–बड़े चरखे हैं, इनको भी चलाने के लिए कोई एक होना चाहिए।'

'जब तक वो चला रहा है, ये चल रहे हैं। मिसाल के तौर पर जब मैं इसे चलाती हूं तो

यह मेरे हिसाब से चलता रहता है। यदि मेरे सामने कोई बैठ जाए और इस चरखे को चलाने लगे तो यह चरखा ठीक से चलेगा जब सामने वाला मेरी चाल के मुताबिक इसको चलाए। यदि वो मेरे चलाने के विपरीत चलाएगा तो यह चलेगा नहीं, टूट जाएगा। बस, यही उसूल उस ऊपर वाले की दुनिया का है। उसने जिस ढंग से यह प्रकृति बनाई है, हमें नियमों का पालन करना चाहिए और यदि हम दूसरी तरफ चलने वाले बनकर उल्टा चलाएंगे यानी प्रकृति के नियमों को तोड़ेंगे, उस परवरदिगार के उसूलों को नहीं मानेंगे तो नुकसान उठाएंगे। इसी का नाम इबादत है।' बूढ़ी औरत की बात उस आदमी की समझ में आ गई।

वह बोली– 'बेटा, इस दुनिया को चलाने वाला कोई न कोई मालिक जरुर है। यूं भी समझा जा सकता है कि वह प्रकृति के रूप में उपस्थित है। उसके नियमों के साथ छेड़छाड़ करना गुनाह है और साथ चलने के मायने हैं इबादत। आदमी की ज्यादातर मुश्किलें उसकी उल्टी चाल से ही पैदा होती हैं।'

हो गईं अति–गंभीर बातें। कुछ लोग सो गए होंगे। उन्हें जगाने के लिए–

मुल्ला ने सड़क पर एक दुखी आदमी को देखा जो ऊपरवाले को अपने खोटे नसीब के लिए कोस रहा था। मुल्ला ने उसके करीब जाकर उससे पूछा– 'क्यों भाई, इतने दुखी क्यों हो?' वह आदमी मुल्ला को अपना फटा–पुराना झोला दिखाते हुए बोला– 'इस दुनिया में मेरे पास इतना कुछ भी नहीं है जो मेरे इस फटे–पुराने झोले में समा जाये।'

'बहुत बुरी बात है'– मुल्ला बोला और उस आदमी के हाथ से झोला झपटकर सरपट भाग लिया। अपना एकमात्र माल–असबाब छीन लिए जाने पर वह आदमी रो पड़ा। वह अब पहले से भी ज्यादा दुखी होकर अपनी राह चलता रहा। मुल्ला उसका झोला लेकर भागता हुआ सड़क के एक मोड़ पर आ गया और मोड़ के पीछे उसने वह झोला सड़क के बीचोंबीच रख दिया ताकि उस आदमी को ज़रा दूर चलने पर अपना झोला मिल जाए।

दुखी आदमी ने जब सड़क के मोड़ पर अपना झोला पड़ा पाया तो उसकी खुशी का ठिकाना न रहा। वह खुशी से रो पड़ा और उसने झोले को उठाकर अपने सीने से लगा लिया और बोला– 'मेरे झोले, मुझे लगा मैंने तुम्हें सदा के लिए खो दिया!'

झाड़ियों में छुपा मुल्ला यह नज़ारा देख रहा था। वह हंसते हुए बोला– 'ये भी किसी को खुश करने का शानदार तरीका है!'

19

प्रेम की कमी, मनो–शारीरिक रोग

आज एक साधिका ने पूछा है कि पत्नी की इच्छा के विरुद्ध, जब पति शारीरिक उपभोग करने के लिए बाध्य करते हैं, तो स्त्री की मानसिक हालत पागल सी हो जाती है। उस तनावपूर्ण स्थिति में औरत का क्या कर्तव्य हो सकता है?

सद्‌गुरु ओशो ने इसी प्रकार के एक प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा है– 'अगर पति जबरदस्ती ले जाता है काम–उपभोग में, तो ठीक काम–उपभोग के क्षण में, ठीक इंटरकोर्स के क्षण में अपने मन में पूरी प्रार्थना करें कि पति के जीवन में शांति हो, पति के जीवन में प्रेम हो। उस क्षण में पत्नी और पति की आत्माएँ अत्यंत निकट होती हैं, अत्यंत निकट होती हैं। उस क्षण में पत्नी के मन में जो भी उठेगा वह पति के मन तक संक्रमित हो जाता है।

और भी बहुत सी बहनें हैं मुझे निरंतर पूछती हैं, बहुत स्त्रियों के जीवन में प्रश्न होगा। लेकिन शायद इस बात को कभी भी नहीं सोचा होगा कि पति के मन में कामेच्छा की बहुत प्रवृत्ति का पैदा होना किस बात का सबूत है। वह इस बात का सबूत है कि पति को प्रेम नहीं मिल रहा है। यह सोचकर, शायद यह सुनकर हैरानी होगी जो पत्नी अपने पति को जितना ज्यादा प्रेम दे सकेगी, उस पति के जीवन में सेक्सुअल डिजायर उतनी ही कम हो जाएगी। शायद यह कभी आपके ख्याल में न आया हो। जिन लोगों के जीवन में जितना प्रेम कम होता है उतनी ही ज्यादा कामेषणा और सेक्सुअलिटी होती है। जिस व्यक्ति के जीवन में जितना ज्यादा प्रेम होता है उतना ही उसके जीवन में सेक्स नहीं होता, सेक्स धीरे–धीरे क्षीण होता

चला जाता है।

तो पत्नी के ऊपर एक अद्भुत कर्तव्य है, पति के ऊपर भी है। अगर पत्नी को लगता है कि पति बहुत कामातुर, कामेच्छा से पीड़ित होता है और उसे ऐसे उपभोग में ले जाता है, जहाँ उसका चित्त दुखी होता है, शांति नहीं पाता, कष्ट पाता है और विक्षिप्तता आती है, पागलपन आता है, घबड़ाहट आती है तो उसे जानना चाहिए कि पति के प्रति उसका प्रेम अधूरा होगा। वह पति को और गहरा प्रेम दे, वह इतना प्रेम दे कि प्रेम पति को शांत कर दे।

जिस पति को प्रेम नहीं मिलता उसके भीतर अशांति घनीभूत होती है। और उस अशांति के निकास के लिए, रिलीज के लिए सिवाय सेक्स के और कुछ भी नहीं रह जाता। दुनिया में जितना प्रेम कम होता जा रहा है उतना सेक्सुअलिटी बढ़ती जा रही है, उतनी कामोत्तेजना बढ़ती जा रही है।'

अगला सवाल है कि मेरे कंधे और घुटने में बहुत सालों से दर्द है जिसके कारण उठा-बैठा नहीं जाता, कृपया इसका समाधान सुझाएं?

बीमारी कई तलों पर हो सकती है, अगर फिजिकल बीमारी है, आर्थराइटिस है, ज्वाइंट की प्रॉब्लम है, हड्डी की समस्या है तो वह इलाज से ठीक होगी, दवाई से ठीक होगी। कोई मांसपेशियों की प्रॉब्लम है तो फिजियोथेरेपी से, योगाभ्यास से, एक्सरसाइज से ठीक होगी। अगर ये समस्या मानसिक घटना से उत्पन्न हुई है तब यह हिप्नोसिस के द्वारा दूर हो सकेगी। तो एक ही प्रकार की बीमारी के भिन्न-भिन्न कारण संभव हैं और उस कारण को ठीक करने से वह चिकित्सा हो पाएगी।

तो सभी बीमारियों में सम्मोहन कार्य नहीं करेगा और सभी बीमारियों में एलोपैथी काम नहीं करेगी, और सभी बीमारियों में होमियोपैथी काम नहीं करेगी, सभी बीमारियों में फिजियोथेरेपी काम नहीं करेगी। इसको ठीक से समझना होगा कि इसका मुख्य कारण क्या है? समझो पिछले जन्म में किसी का रोड ऐक्सीडेंट हो गया, घुटने से ट्रक निकल गया और घुटने के दर्द को लेकर ही उस व्यक्ति की मृत्यु हुई और मरते समय उसको केवल एक ही ख्याल था कि घुटना दर्द। फिर उसने पुनर्जन्म लिया उस स्मृति के संग, लास्ट इवेंट जो है वह हमारी जिंदगी पर छा जाता है।

वह इतने घुटने दर्द के साथ मरा है कि नए जन्म में वह स्मरण उसको ऐसा लगता है कि जैसे अभी उसके घुटने में दर्द हो रहा है। तो अब तो इसका शरीर बिल्कुल नया है, घुटना भी बिल्कुल ठीक है किन्तु वह याद इसके मन में बैठी हुई है। ये मन वही है जो पिछले जन्म के शरीर में था। वह गहरी याद समाई हुई है कि घुटने में दर्द है। और यह बचपन से ही लंगड़ा-लंगड़ा कर चल रहा है, ठीक से खड़े होते नहीं बनता। अब ये कोई वास्तविक फिजिकल प्रॉब्लम नहीं है किन्तु ये जो लंगड़ाकर चल रहा है, पैर ठीक से नहीं रख रहा है, वह

चलना ही नहीं चाहता, खड़ा होना ही नहीं चाहता, घुटने को मोड़कर रख रहा है, प्रोटेक्ट करना चाह रहा है।

अब इस वजह से वास्तव में उसके कुछ मसल्स और ज्वाइंट में खराबी आने लगी, ऐक्चुअली कोई प्रॉब्लम नहीं थी लेकिन अब प्रॉब्लम पैदा हो रही है। वह घुटने को एक खास पोजीशन में रखना चाह रहा है, हमेशा ही अंडरप्रेशर है, अब इसका हम किसी भी पैथी से इलाज न कर पाएंगे क्योंकि वास्तविक बीमारी यहां है ही नहीं। ये केवल एक मानसिक बीमारी का एक लक्षण है।

हिप्नोसिस के द्वारा और खासकर महाजीवन में अपने पिछले जन्म को याद करके जैसे ही इसको यह बात ख्याल में आ जाएगी कि यह घटना उस समय घटी थी, इस–इस प्रकार से हुआ था तब तुरंत ही इस जन्म में जो प्रॉब्लम थी वह गायब हो जाएगी क्योंकि फिर स्पष्ट हो जाएगा कि यह तो पिछले जन्म की बात है, वह शरीर तो जल चुका है चिंता पर, अब तो वह घुटना है ही नहीं, केवल उसका स्मरण बाकी है। तो इस प्रकार की जो तकलीफें हैं वे सम्मोहन के द्वारा दूर की जा सकती हैं।

दूसरी बात मैं कहना चाहूंगा कि हमारी प्रत्येक बीमारी में कुछ प्रतिशत साइकोलॉजिकल आसपेक्ट होता है और कुछ प्रतिशत फिजिकल आसपेक्ट होता है। यहां तक कि जो फिजिकल प्रॉब्लम्स हैं उनमें भी, सौ परसेंट फिजिकल प्रॉब्लम नहीं होती, कुछ प्रतिशत होता है जो कि हमारे मन से आता है। समझो कि किसी को रियल ज्वाइंट प्रॉब्लम है, एनाटॉमिकल कोई डिफेक्ट है या गठिया का कोई रोग हो गया है, ब्लड टेस्ट में भी आ रहा है कि हां, ये बीमारी है, अब इस बीमारी के साथ–साथ उसकी मानसिकता और साइकोलॉजी भी जुड़ जाएगी जो कि इस बीमारी को प्रभावित करती है।

इसलिए आपने देखा होगा कि एक सी बीमारी से ही परेशान लोग भी अलग–अलग ढंग से परेशान होते हैं। समझो दो रोगी हैं अलग–अलग लेकिन एक हेल्दी माइण्ड का है जो कि पॉजिटिव ढंग से सोचता है और दूसरा उसी चीज को निगेटिव ढंग से सोच रहा है, अब आप पाएंगे कि वही बीमारी जो कि बराबर तकलीफदायी होनी चाहिए लेकिन बराबर तकलीफदायी नहीं होती। निगेटिव सोच वाले को वही चीज ज्यादा कष्टदायी हो जाती है। हम बाहर के किसी भी उपकरण से पता लगाएंगे तो हमारे पता लगाने में आएगा कि यह बीमारी दोनों की समान डिग्री की है, समान डिफेक्ट है दोनों को।

मशीन से जांच करने पर पता चलेगा कि इन दोनों को बराबर दर्द होना चाहिए लेकिन ऐसा नहीं होता। जो मानसिक रूप से पॉजिटिव व्यक्ति है, जो इस बात को हल्के–फुल्के ढंग से ले रहा है कि ठीक है, हो गई तो हो गई कोई बात नहीं, अरे एक ही घुटने में तो है, दूसरा तो ठीक है, प्रभु की कृपा से सब ठीक है, एक ही ज्वाइंट तो इंफेक्ट हुआ है, शरीर के सारे ज्वाइंट तो नहीं हो गए।

तो जो पॉजिटिव है उसका दर्द उतना ज्यादा नहीं रहेगा और जो व्यक्ति निगेटिव ले रहा है कि हे भगवान मरे! ये घुटना गया, अब तो लंगड़ाकर चलना पड़ेगा। डॉक्टर कह रहे हैं कि इसका इलाज नहीं हो सकता, सर्जरी करानी पड़ेगी, कहीं दवाई का रिएक्शन न हो जाए। मैंने सुना है कि इस दवाई को खाने से पेप्टिक अल्सर हो जाता है, सर्जरी कराने से कोई नई बीमारी न खड़ी हो जाए और आज-कल के डॉक्टरों पर भरोसा कहां रहा, कलयुगी सर्जन।

जो इस प्रकार की निगेटिव सोच से ही भरा है और इस घुटने के दर्द को बहुत हाईलाइट कर रहा है, इसको बहुत बड़ी समस्या के रूप में देख रहा है, जितनी है नहीं उससे कई ज्यादा गुनी बड़ी। कुछ लोग इसमें बड़े कुशल होते हैं, निगेटिव चीजों को ज्यादा बताकर देखते हैं, चींटी को अगर लेंस लगाकर देखेंगे तो हाथी जैसी दिखाई देगी। कुछ लोग इस काम में बड़े एक्सपर्ट हैं और उनके पास प्रमाण भी हैं। वह कह रहे हैं नहीं, ये तो हाथी जैसी है और आप कह रहे थे छोटी सी चींटी है। अब उनके लेंस से देखो तो ठीक है, वे जो कह रहे हैं वह ठीक ही कह रहे हैं। मगर वे लेंस को छोड़ने के लिए तैयार नहीं होते।

निगेटिव लोग बड़े लॉजिकल होते हैं। तो अब वह एक सा ही घुटने का दर्द दोनों व्यक्तियों के लिए अलग-अलग प्रकार का हो गया। तो यहां पर सम्मोहन की विधि काम कर सकती है अगर आप को-ऑपरेट करें। अगर इस लेंस को हटाकर अलग रख दें और पॉजिटिव फीलिंग में आएं। बीमारी तो सबको होती है, इस दुनिया से सबको एक दिन जाना है तो कुछ न कुछ बीमारियां तो होती ही रहेंगी। शरीर मरने की एक प्रोसेस में है लेकिन जब तक जिंदा हैं तब तक तो मजे से जिंदा रहें।

जब आप एक पॉजिटिव फीलिंग में आ जाएंगे कि ठीक है, अब इस बीमारी के साथ ही हमको रहना है, डॉक्टरों ने कह दिया है कि यह जिंदगीभर रहेगी तो ठीक है, अब इसके साथ हमको कैसे जीना है इसकी विधि हम निकालेंगे। डॉक्टर अपना काम कर रहे हैं तो उनको करने दो, अब इसके साथ जीने का तरीका आप खुद निकालो। जब ऐसी पाजिटिव दृष्टि आपकी हो जाएगी तो आप पाएंगे कि जो बहुत ज्यादा दर्द महसूस हो रहा था अब वह नहीं रहा। आपकी सकारात्मक सोच ने सिचुएशन बदल दी। और काफी संभावना है कि एक्चुअल हीलिंग में भी मदद मिले।

एक डॉक्टर के रूप में मैं जानता हूं इस प्रकार के निगेटिव और पॉजिटिव थिंकिंग वाले लोगों को। किसी भी मरीज को दवाई दो तो सबसे पहले वह दवाई के कागज को निकालकर पढ़ने लगेगा कि इसके साइड इफेक्ट क्या-क्या हैं। जिसने वह कागज निकाला कि समझ लो अब उसके लिए मुसीबत खड़ी। नैचुरली उसमें तो सैकड़ों साइडइफेक्ट लिखे हैं और उसको जो पढ़ लेगा वह दवाई खा ही नहीं पाएगा। और इन सज्जन से कहा किसने था कि आप यह कागज निकालकर पढ़ो?

इनको डॉक्टर पर भरोसा नहीं है, ये इन्टरनेट पर खुद ही खोजेंगे कि इस दवाई के

क्या–क्या साइडइफेक्ट हैं। अब ये मरे। अब वह सारे साइडइफेक्ट इन्हीं लोगों को होते हैं इस बात को जान लो। ये पर्टीकुलर ग्रुप जो है यह साइडइफेक्ट को खींचता है। और जो साइडइफेक्ट की चिंता ही नहीं कर रहा है वह बिल्कुल ठीक है, वह तो मान रहा है कि डॉक्टर साहब ने दवाई दी है ठीक ही होगी, इस व्यक्ति को कोई साइडइफेक्ट नहीं होगा। तो जिसने भरोसे के संग दवाई खा ली थी उसको कुछ नहीं होगा।

तो इस प्रकार जो ऐक्चुअल फिजिकल बॉडिली प्रॉब्लम है उसमें भी हमारी साइकोलॉजी अपना प्रभाव दिखाती है। बीमारी में भी और इलाज में भी। इसलिए जिस डॉक्टर पर आपको भरोसा है उस डॉक्टर से जब आप इलाज कराते हैं तो ज्यादा मदद मिलती है, जिस डॉक्टर पर आपको संदेह हो गया, वहां पर मुश्किल खड़ी हो जाती है, अब उसकी दवाई आपको असर नहीं करेगी। दवाइयां तो वही हैं, क्योंकि लगभग सभी डॉक्टर एक ही प्रकार की दवाई देते हैं क्योंकि सबकी पढ़ाई एक सी है लेकिन ज्यादा प्रभाव पड़ता है अगर आप किसी डॉक्टर के व्यक्तित्व से प्रभावित हैं तो उसकी दवाई ज्यादा कारगर होगी।

किसी कारण से अगर आपके मन में डॉक्टर के प्रति निगेटिव धारणा बन गई है तब बड़ा मुश्किल है कि इसके द्वारा किए गए इलाज से अब आप ठीक हों। आश्चर्य होता होगा कि दुनिया में इतनी पैथी चलती हैं सैकड़ों प्रकार की पैथियां और सब असरदार हैं। चालीस से लेकर पैंतालीस परसेंट लोग हर पैथी में ठीक होते हैं। ये बड़ी विचित्र बात है। सबकी फिलॉसफी अलग–अलग, सबके सिद्धांत अलग–अलग लेकिन उस पैथी के डॉक्टर के पास वही जाता है जिसको उस पर भरोसा है। और ऐसा लगता है कि उसका भरोसा ही काम करता है, पैथी कम काम करती है।

अब समझो कि कोई व्यक्ति एलोपैथी के डॉक्टर के पास जा रहा है था और आप उसको पकड़कर कहें कि चलो तुम्हारा नैचुरोपैथी करवा दें। अब अगर दवाब के कारण उसको ले गए अब उसकी बड़ी मुसीबत हो जाएगी क्योंकि उसको इसमें भरोसा नहीं है और आपको भरोसा है इसलिए आप ठीक हुए हैं। आप बड़े विश्वास के संग, बड़े प्रेम के साथ उसको ले गए हैं कि ये भी बेचारा ठीक हो जाए। क्योंकि प्रॉब्लम तो मुझे भी थी तो मैं तो ठीक हो गया लेकिन यह व्यक्ति जिसको इस पर भरोसा नहीं है यह नहीं ठीक होगा।

दुनिया में इतनी पैथी हैं सब काम करती हैं। तब एक हैरानी होती है कि ये सब कैसे काम करती हैं लेकिन करती हैं। तो ऐसा लगता है कि आदमी की साइकोलॉजी ज्यादा काम करती है बजाए ऐक्चुअल दवा–दारू के। दवा–दारू का अपना असर होगा पर साइकोलॉजिकल जो भरोसा है, उसका बहुत बड़ा रोल है। जरा कल्पना करो कि एक आदमी को आधी रात को सीने में बहुत दर्द हुआ और हार्टअटैक हो रहा है। उसने डॉक्टर को फोन किया, पहचान का ही डॉक्टर है, हमेशा उसी से इलाज करवाता है, वह डॉक्टर आधी रात को आया लेकिन केवल अंडरवियर पहनकर आया था और गले में स्टेथोस्कोप लटकाए हुए था।

अब बड़ी मुश्किल हो जाएगी कि इससे इलाज करवाओ कि न करवाओ। क्योंकि आपका मन रिजेक्ट करेगा कि ये आदमी पागल है क्या, दारू पीकर आ गया है क्या, इसको तो हम वर्षों से जानते हैं अच्छा–भला आदमी था लेकिन अकेले ही अंडरवियर पहनकर आ गया। अब वह कहे कि यूं कि मौज में आ गया गर्मी का दिन है तो घर में हम यही कपड़े पहनकर रहते हैं। और आप तो जानपहचान के हैं इसलिए आपसे क्या संकोच। आप कहोगे कि डॉक्टर साहब क्षमा करिए, आप जाइए प्लीज, हो सकता है कि आप इस चक्कर में हार्टअटैक का दर्द भी भूल जाओ।

अब आप इससे इलाज नहीं करवाओगे। और अगर यह इलाज करेगा कि नहीं–नहीं, करना ही पड़ेगा, आपको हार्टअटैक हो रहा है तो कैसे छोड़कर जाऊं, ये इंजेक्शन लगाकर ही जाऊंगा। अब अगर मजबूरी में आपको इंजेक्शन लगा दिए जाएं तो आपको केवल साइडइफेक्ट होंगे बस। अब आप इसके इलाज से ठीक नहीं होने वाले क्योंकि आपका भरोसा ही टूट गया। वह डॉक्टर कहेगा कि आपको मेरे कपड़े से क्या लेना–देना, आप मेरी डिग्री जानते हो न, ये देखो मैं डिग्री साथ में लाया हूं, आप कहोगे कि आप अपनी डिग्री रखो। वह जो कह रहा है बिल्कुल लॉजिकल है, वह कह रहा है आपको मेरे कपड़ों से क्या मतलब, आपको मेरी शिक्षा से मतलब है, आपको मेरे ज्ञान से मतलब है, आप जानते हो मैं एक कुशल डॉक्टर हूं, आपको कपड़े से क्या मतलब? मैं कुछ पहनूं या कुछ भी न पहनूं तो क्या हुआ, बिल्कुल दिगम्बर भी आ जाते तो आपको क्या मतलब, आप तो अपना इलाज करवाओ। ये मेरी प्रॉब्लम है कि मैं कुछ पहनूं या न पहनूं और गर्मी के दिनों में कुछ न पहनना भी खूब अच्छा है।

आप कहोगे कि भाई क्षमा करो, आप अभी जाओ, मुझे नहीं कराना है इलाज। बहुत मुश्किल है कि अब इसकी दवाई आपको ठीक कर पाए, उसका साइडइफेक्ट ही होगा। हमारा मन अगर किसी चीज से प्रभावित होता है तो हम को–ऑपरेटिव और सपोर्टिव हो जाते हैं और एक सेल्फ हिप्नोसिस शुरू हो जाती है। जब आप किसी डॉक्टर को फोन करते हैं और उसकी असिस्टेंट से बात करते हैं और छः दिन बाद आपको अपॉइंटमेंट मिला तब आप ऑलरेडी प्रभावित होना शुरू हो गए कि अरे, यह डॉक्टर तो बहुत बिजी है। अब आपका इलाज यहीं से शुरू हो गया, अगर वह डॉक्टर आपको तुरंत ही मिल जाता कि चले आओ हम तो मक्खी ही मार रहे हैं तब आप उससे प्रभावित नहीं होते।

आपको लगता कि इस डॉक्टर के पास तो कोई आता ही नहीं, हम ही एक बुद्धू बन गए क्या। जब छः दिन बाद का अपॉइंटमेंट मिलता है तब आप ऑलरेडी इंप्रेस होना शुरू हो जाते हैं। और जब आप उसकी क्लीनिक में पहुंचे तो मंहगा फर्नीचर लगा हुआ है और खूबसूरत सेक्रेटरी है, अब इसका डॉक्टर से कोई लेना देना नहीं है लेकिन उसकी खूबसूरत सेक्रेटरी और उसके मीठे बोलने का अंदाज उसी से आप इंप्रेस्ड हो गए और ये सब इलाज में सहयोगी हो रही हैं।

आपको पता नहीं है लेकिन आप इंडायरेक्ट रूप से हिप्नोटाइज्ड होते जा रहे हैं। और वहां पर पच्चीस मरीज बैठे इंतजार कर रहे हैं, एक–एक करके भीतर बुलाया जा रहा है और आप भी कतार में बैठ गए हैं और यहां पर बैठे हुए मरीज आपस में बात कर रहे हैं कि मुझे बहुत तकलीफ थी लेकिन यहां आने के बाद बिल्कुल ठीक हो गया हूं, ऐसे ही दो–चार किस्से आपने सुने अब आपकी धारणा और पॉजिटिव हो गई कि अरे वाह! ये डॉक्टर तो लगता है कि बहुत प्रभावशाली है। दो–चार किस्से आपने वहां सुन लिए, अब मरीज और क्या बात करेंगे, बीमारी की ही तो बात करेंगे। अब आप इंप्रेस्ड होकर डॉक्टर के पास पहुंचे, अब आप ऑलरेडी हिप्नोटाइज हैं कि अब तो मैं ठीक हो जाऊंगा, अब तो सही डॉक्टर मिल गया।

तो अपने मन को जरा समझें, इस प्रकार से वह काम करता है और जो सचमुच की शारीरिक बीमारी है उसमें भी यही सारी चीजें असर डालती हैं। कई बार यहां मैं देखता हूं कि जो लोग अपनी मर्जी से आते हैं, अपना धन खर्च करके, समय निकालकर उन लोगों पर ज्यादा असर होता है। और जो लोग किसी के द्वारा लाए जाते हैं उन पर असर नहीं होता क्योंकि वे आना ही नहीं चाहते थे, उनको भरोसा ही नहीं है। लेकिन कोई उनका परिवारजन, कोई रिश्तेदार जबरदस्ती पकड़ लाया कि हमको तो यहां बहुत लाभ हुआ है चलो आपको भी होगा और वह कह रहा है कि नहीं–नहीं मुझे नहीं जाना है, क्या करूंगा वहां जाकर।

वह अभी नहीं प्रभावित है, उसके दिल में अभी श्रद्धा नहीं जगी है। अगर उसको जोर–जबरदस्ती से ले आए तो यहां बैठकर वह सिर्फ बोर हो रहा है और कुछ नहीं हो रहा है। जहां अन्य सौ लोग इतना आनंदित हो रहे हैं वहीं दो–चार ऐसे लोग होंगे जो बोर हो रहे होंगे और बीच–बीच में घड़ी देख रहे होंगे कि हे भगवान! अभी तक खत्म नहीं हुआ, लंच टाइम कब होगा, ये गुरुजी तो वही–वही बात बार–बार बोले ही जा रहे हैं।

जो व्यक्ति श्रद्धाभाव से सुन रहा था उसके लिए मेरे शब्द अमृत का काम कर रहे थे और यह आदमी निगेटिव ढंग से सोचकर बैठा हुआ है कि कहां फंस गए, हे भगवान यहां ढाई दिन कैसे कटेंगे, डेढ़ घंटा मुश्किल से कट रहा है। कमर दुख रही है, सिर चकराने लगा, कब तक ये उबाऊ सत्र चलता रहेगा, वे रेस्टलेस हो रहे हैं। बाकी सारे लोग इतने रेस्टफुल हो गए, हिप्नोटिक ट्रांस में पहुंच गए और सौ में से दस लोग हैं जो रेस्टेलेस हैं और बेचैन हो रहे हैं, ऐसी बेचैनी पहले उनको नहीं थी, इससे अच्छे तो वे अपने घर में थे और यहां आकर लग रहा है कि फंस गए।

चूंकि उनके दिल में वह भावना ही नहीं जगी, जैसे डॉक्टर के प्रति अगर विश्वास नहीं है, यहां जो आचार्य हैं उनके प्रति आपके मन में भाव नहीं है, आप कुछ उल्टा–सीधा ही सोच रहे हैं, कुछ आलोचना ही चल रही है भीतर, कुछ निंदात्मक बातें आपने सुन रखी थीं वही हावी हैं आपके भीतर तो फिर आप आधे–अधूरे मन से हैं, वे को–आपरेट भी नहीं करेंगे। आपकी खोपड़ी में उल्टे विचार ही चल रहे हैं। जब मैं कह रहा हूं कि भाव करें कि सांस धीमी हो रही है

तो आपके मन में चल रहा है कि कहां हो रही है, और तेज हो गई। मैं कह रहा हूं हाथ–पैर ढीले पड़ गए तब आपके हाथ–पैर और अकड़ गए, आप हर चीज को उल्टा करके देख रहे हैं।

याद रखना, सेल्फ सजेशन अभी भी काम कर रहा है, आप कह रहे हैं कि कहां का रिलैक्शेसन, हम तो बड़े तनाव में हैं। और सचमुच में आप और तनाव में चले गए, यह भी सेल्फ सजेशन है और यह काम कर रहा है। आप सोच रहे हैं कि मैं तो तनाव में हूं, अब आप और तनाव में हो गए। जो सोच रहे थे कि हां, रिलैक्स हो गए गुरुजी के शब्द सुनते–सुनते बड़ा गहरा रिलैक्शेसन हो गया। जो पॉजिटिव धारणा में थे उनको रिलैक्शेसन हो गया।

कई लोग बीच में बैठकर झुंझला रहे हैं कि कहां की बकवास किए जा रहे हैं, कहां का बगीचा और कहां कि चांदनी, अरे कड़ी धूप पड़ रही है कोई छाया के लिए जगह नहीं है और ये कह रहे हैं कि घने वृक्ष की छाया में से गुजर रहे हैं और चांदनी रात है। कह रहे हैं पंछी बोल रहे हैं और देखो कान के पास मच्छर भिनभिना रहा है, अब काटा कि तब काटा, कहीं मलेरिया न हो जाए। और कितने मजे की बात है कि जो लोग ऐसा सोचते हैं उन्हीं को होता मलेरिया।

आपने कभी गौर किया, डॉक्टरों और नर्सों को बीमारियां क्यों नहीं होतीं? हॉस्पिटल के जो कर्मचारी हैं सबसे ज्यादा एक्सपोजर उन्हीं का है, सारे कीटाणुओं के प्रति, बैक्टीरिया और वायरस के प्रति और इन लोगों को कम से कम बीमारी होतीं हैं। और आपने सिर्फ सुना खासकर जो इंटेलेक्चुअल वर्ग हैं उनको, उन्होंने सुना कि अरे इस मोहल्ले में उस व्यक्ति को मलेरिया हो गई है, अब बस गए काम से। अब आपको मलेरिया होकर ही रहेगा, क्योंकि आपका माइण्ड हिप्नोटाइज्ड हो गया कि अब तो मुझे भी होगा। अब मुसीबत में फंसे आप।

कुछ लोग इन्फेक्शन के प्रति बहुत प्रोन हैं, आज तक इसको समझा नहीं जा सका किसी भी मेडिकल परीक्षण के द्वारा कि कुछ लोगों को ही बार–बार इन्फेक्शन क्यों होता है और अन्य लोग हैं जिनको कि बिल्कुल ही नहीं होता। पूरे समाज में कोई बीमारी बड़े पैमाने पर फैली है और कोई वर्ग है जो बिल्कुल ही अछूता रह जाता है, उनको कुछ नहीं होता। खासकर जो हॉस्पिटल के कर्मचारी हैं वे सबसे ज्यादा कीटाणुओं के संपर्क में आ रहे हैं और उनको कम से कम बीमारियां होतीं हैं। क्यों? क्योंकि वे दूसरों की सेवा में लगे हुए हैं, उनको ख्याल ही नहीं आता कि मुझे भी हो सकता है।

वे दूसरों को ठीक करने में लगे हैं इसलिए उनके मन में कहीं अंजाने में हिप्नोटिक सजेशन बैठ गया है कि मैं तो खुद दूसरों की बीमारी ठीक कर रहा हूं मुझे कैसे होगी। बस, यही चीज काम करती है। वे तो दूसरों की बीमारी ठीक कर रहे हैं, उनको कैसे हो सकती है। ऐसा कोई जानबूझकर उन्होंने सोचा नहीं है, अंजाने में ये बात बैठ गई मरीजों की सेवा करते–करते। क्या कीटाणु भी देख–देख कर प्रवेश करते हैं कि कौन पॉजिटिव है और कौन निगेटिव है, लेकिन ऐसा है। हम ही चीजों को बुलाते हैं कि आ बैल मुझे मार और जब बैल मारता है तो हम और आत्मविश्वास से भर जाते हैं कि देखा, हम तो पहले ही कह रहे थे।

हमने दूर से देखा था बैल को तभी कह दिया था कि देखना बैल मारेगा और जब हम डर

गए तब बैल भी सीधे उसी के पास आएगा। और तब हम और भी कन्फर्म हो जाएंगे कि देखा हम तो कह ही रहे थे, नहीं, नहीं, देखा हो गया न। निगेटिव आदमी को हमेशा प्रमाण मिल जाते हैं अपनी थ्योरी सिद्ध करने के लिए, अच्छा कुछ हो ही नहीं सकता। जहां भी कुछ गड़बड़ होने की चांस है बिल्कुल ही होगी और वह तर्क से प्रमाणित भी कर देगा कि यह सही है। इसलिए मैंने कहा कि जो इंटेलेक्चुअल वर्ग है वही ऐसा हो सकता है, इतने लॉजिक वही जुटा सकता है अपनी थ्योरी सिद्ध करने के लिए।

सामान्य आदमी जिसके पास इतना लॉजिकल ब्रेन नहीं है वह बेचारा सिद्ध भी नहीं कर सकता कि मैं जो कह रहा था वह सही है। प्यारे मित्रों सावधान इन सब बातों के प्रति। ये सब कमोबेश हम सबके भीतर चल रहे हैं। हमारी बीमारियों में भी हम सबका रोल है, हमारी जीवनपद्धति में भी इन्हीं का रोल है और हम जीवन में क्या पाते हैं, क्या नहीं पाते, कहां सफल होते हैं कहां असफल होते हैं ये सारी चींजें इन धारणाओं से, इन आत्मसुझावों से संचालित हो रही हैं। अगर आप एक सफल व्यक्ति, एक सुखी व्यक्ति, एक शांत व्यक्ति बनना चाहते हैं, एक प्रेमपूर्ण व्यक्ति बनना चाहते हैं तो आपको अपने अवचेतन मन का सहारा लेना सीखना होगा और उसकी विधि यह आत्मसम्मोहन की टेकनीक है।

आखिरी सवाल है कि गुरु के प्रेम में पड़कर शिष्य को कैसा लगता है?

शिष्य बनो तो पता चलेगा। जिंदगी में कुछ बातें हैं जिन्हें जीकर ही जाना जा सकता है। विज्ञापन आता है न– मेलोडी खाओ, खुद जान जाओ! साधारण से स्वाद को भी प्रगट करने का कोई उपाय नहीं है। तुम प्रेम का महास्वाद पूछ रहे हो! स्वाद लिया जाता है, सवाल के जवाब में नहीं मिलता। भोजन के विषय में जानकारी पोषण नहीं देती। सौंदर्य की विस्तृत चर्चा से अंधे को कुछ हासिल नहीं हो सकता। अपनी आंख चाहिए।

ठीक वैसे ही हृदय की आंख भी चाहिए। प्रेम उसी का नाम है। श्रद्धा उसी का विकसित रूप है। भक्ति उसी का आत्यंतिक रूप है। शिष्य बनो, किसी गुरु के चरणों में समर्पण करो।

सुनो शिष्य के हृदय के ये बोल, किंतु बैठे–बैठे नहीं, उठो। नाचो, गाओ, मस्ती में डोलो। तमाशबीन नहीं, भागीदार बनो। आओ, इस प्यारे गीत के संग हम सब उत्सव मनाएं–

मै जहां कहीं भटक गया गिरते–गिरते संभल गया
मेरा हाथ है तेरे हाथ में ठोंकरों से पता चल गया।
अरे हां, महकी बहार झूमी, मौसम खुशी के छाये
मेरी जिन्दगी में ओशो जिस दिन से आप आये।।
अरे हां, महकी बहार झूमी.....!

हर वक्त कोई डर था मुश्किल में ये सफर था
कोई खोज थी हृदय में मालूम न कुछ मगर था।
उलझन ये मेरे दिल की तुमसे ही सुलझ पाए
मेरी जिन्दगी में ओशो जिस दिन से आप आये।।
अरे हां, महकी बहार झूमी.....!

जीवन के इस सफर में भटका हूँ दर–बदर मैं
जाने मेरा क्या होता पाता न तुम्हें अगर मैं पाता
अब तो मेरी नजर में बस आप ही समाये
मेरी जिन्दगी में ओशो जिस दिन से आप आये।।
अरे हां, महकी बहार झूमी.....!

दिल में थी खोज कोई खटकन थी रोज कोई
आये जो आप दिल में आई है मौज कोई।
दुनिया के रंग दिल को अब और भी सुहाए
मेरी जिन्दगी में ओशो जिस दिन से आप आये।।
अरे हां, महकी बहार झूमी.....!

पार सागर हुआ है सारा आया नजर किनारा
मेरा न इसमें कुछ भी सब है करम तुम्हारा।
तेरे शुक्रिया में प्यारे कुछ भी कहा न जाए
मेरी जिन्दगी में ओशो जिस दिन से आप आये।।
अरे हां, महकी बहार झूमी.....!